CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

3, 4/27
आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

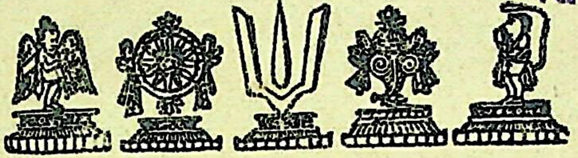

अन्वयाङ्कोपेतम्

वरदवल्लभास्तोत्रमालवन्दारस्तोत्रञ्च

श्री १००८ श्रीमद्वेदमार्ग-प्रतिष्ठापनाचार्य्यवेदान्तप्रवर्तकाचार्य्य
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य-सत्सम्प्रदायाचार्य्य-जगद्-
गुरुभगवदनन्तपादीयश्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ-श्रीमद्वि-
ष्वक्सेनाचार्य्यस्वामिकृतया "भावप्रकाशि-
का"ख्यभाषाटीकया समलङ्कृतम्

तथा च

श्रीस्वामिपादाब्जभ्रमरेण—
न्याय-व्याकरण-सर्वदर्शनाचार्येण संगीतप्रभाकरेण लब्धस्वर्णपदकद्वयेन
काशीस्थ-शास्त्रार्थमहाविद्यालयीय-दर्शनविभागाध्यक्षेण
श्रीदेवनारायणशास्त्रिणा
संशोधितम्

तदिदम्

रोहतास-मण्डलान्तर्गत-सोहगी-ग्रामस्य
महालक्ष्मीयज्ञसमित्या प्रकाशितम्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माननीया

डॉ० प्रेमलता शर्मा,

को सप्रेम भेंट।

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि. करौंदी
वाराणसी-5

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

अन्वयाङ्कोपेतम्

वरदवल्लभास्तोत्रमालवन्दारस्तोत्रञ्च

श्री १००८ श्रीमद्वेदमार्ग-प्रतिष्ठापनाचार्य्यवेदान्तप्रवर्तकाचार्य्य श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य-सत्सम्प्रदायाचार्य्य-जगद्-गुरुभगवदनन्तपादीयश्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ-श्रीमद्वि-ष्वक्सेनाचार्य्यस्वामिकृतया "भावप्रकाशि-का"ख्यभाषाटीकयासमलङ्कृतम्

तथा च

श्रीस्वामिपादाब्जभ्रमरेण—

न्याय-व्याकरण-सर्वदर्शनाचार्येण संगीतप्रभाकरेण लब्धस्वर्णपदकद्वयेन काशीस्थ-शास्त्रार्थमहाविद्यालयीय-दर्शनविभागाध्यक्षेण

श्रीदेवनारायणशास्त्रिणा

संशोधितम्

तदिदम्

रोहतास-मण्डलान्तर्गत-सोहगी-ग्रामस्य

महालक्ष्मीयज्ञसमित्या प्रकाशितम्

श्रीकृष्णजयन्ती सम्वत् २०३२ मूल्य ३-०० तृतीय संस्करण १०००

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुस्तक मिलने का पता—

(१)

श्री लक्ष्मीनारायण मन्दिर

चरित्रबन बक्सर

जिला भोजपुर

(२)

श्री देवनारायण शास्त्री

राममन्दिर, सी० के० १२।८

ब्रह्मनाल, वाराणसी

श्री मुमुक्षुनारायणाचार्य स्वामी

म० नं० १०/४४ ए, प्रह्लादघाट, पो० राजघाट,

वाराणसी

(४)

चौखम्भा ओरियन्टालिया

गोकुल भवन के० ३७।१०९, गोपालमन्दिर लेन,

वाराणसी

मुद्रक—विद्याविलास प्रेस

गोपालमन्दिर लेन, वाराणसी—२२१००१

फोन : ५२९३९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

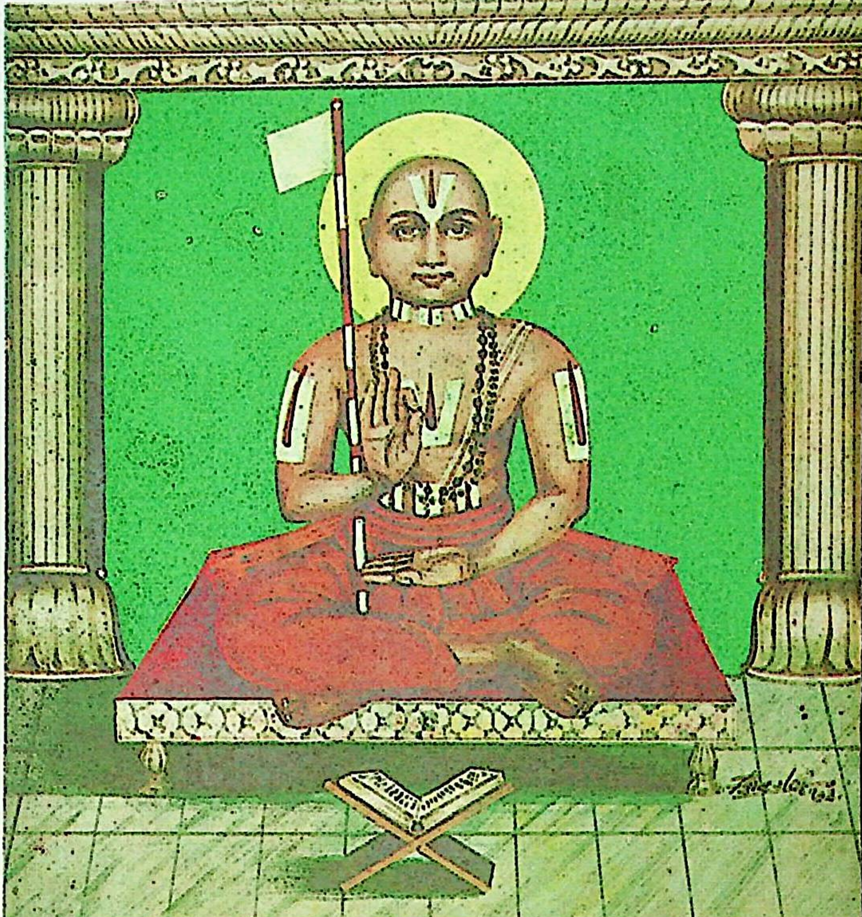

यत्पदाम्भोरुहध्यानविध्वस्ताशेषकल्मषः ।
वस्तुतामुपयातोऽहं यामुनेयं नमामितम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
वरतन्त्रि, करौंदी
वाराणसी-5

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

संशोधकीय वक्तव्य

भारतीय महात्माओं की ज्ञान-परम्परा गङ्गा की धारा की तरह चिरकाल से प्रवाहित होती रहती है। उस ज्ञान-गङ्गा की धारा में पाप-तापसन्तप्त प्राणी परिस्नात होकर अपना आन्तरिक और बाह्य मालिन्य दूर कर विश्रान्ति प्राप्त करता है। क्योंकि कलिकाल के प्रभाव से बुद्धि और आध्यात्मिक विचार-शक्ति इतनी क्षीण हो गई है कि शास्त्रीय ग्रन्थों के आशय से आध्यात्मिक उन्नति लाभ करना और धर्म का रहस्य समझना असम्भव हो गया है। भगवान् की असीम कृपा से इस भारत भूमि पर ज्ञान-गङ्गा की धारा बहाने के लिये कोई न कोई महात्मा मनुष्य रूप से अवतरित होते रहते हैं। ज्ञान-गङ्गा की धारा बहाने वालों में महात्माओं, ऋषियों, मुनियों का उच्चतम स्थान है। महात्माओं के चिन्तन, आदर्श जीवन भारतीय जन-जीवन में सन्निष्ठा प्रवाहित करता है। महात्माओं के हृदय गह्वर से ज्ञान गङ्गा फूट पड़ती है और संसारानल से सन्तप्त समस्त प्राणियों को आप्लावित करती है। भारतीय वाङ्मय विचारों से भरा है। उसे सर्वजन सुलभ बनाना अत्यन्त दुष्कर है। इसे सुकर बनाने में उदारचेता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महात्माओं का सफल प्रयास होता आया है। उन्ही उदारचेताओं में अनन्तश्रीविभूषित तपस्वी श्री विष्वक्सेनाचार्य त्रिदण्डी स्वामीजी महाराज हैं। इनकी त्याग-तपस्या एवं आश्चर्यजनक कार्य विलक्षण है। ऐसे तपस्वियों का देश में नितान्त अभाव है। पर हम लोगों के सौभाग्य से प्रातः स्मरणीय स्वामी जी का दर्शन हो रहा है। आप अनेकों यज्ञ सम्पादन कर देश की जनता का कल्याण करते आये हैं। अपने उपदेशामृत से अहर्निश जनता में आध्यात्मिक विचार का प्रसार करते रहते हैं। असंख्यों नास्तिकों को आस्तिक बनाकर भारतीय संस्कृति की सुरक्षा की है।

श्री पूज्यपाद ने एक ओर श्रुति, स्मृति विरोधियों के हृदय को अपने गंभीर शास्त्र नाद से विदीर्ण किया तो दूसरी ओर अपने त्याग तपस्या के प्रभाव से तथा अपार कारुण्य, सौशील्य, वात्सल्य भरे हृदय से भगवद् विमुख होकर बिना आश्रय के भटकते जीवों को अपनाकर, शरणागति द्वारा उनमें भगवद्, भागवत, आचार्य की सेवा का भाव जागृत किया। जिस किसी ने एक बार भी श्रद्धा एवं विश्वास के साथ आपके उपदेशामृत का पान किया उसके अन्दर सात्त्विकवृत्ति का उदय होता है और भगवान् श्री कृष्ण के 'ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्थाः' के अनुसार उत्तरोत्तर ज्ञान, भक्ति, वैराग्य की वृद्धि होने लगती है। जिन्होंने अपना थोड़ा भी समय आपके सत्संग में व्यतीत किया उन्हें तो शुभ आश्रम में रहने वाले त्रेता युग के महामुनि विश्वामित्र के प्रति महाविरागी जनक के ये वाक्य—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुनु मुनीस वर दरसन तोरे।
अगम न कछु प्रतीति मन मोरे॥
......सब सिधि तव दरसन अनुगामी॥

विश्वामित्र की ही भाँति शुभाश्रम (सिद्धाश्रम) में तपोमय जीवन व्यतीत किये हुए श्री पूज्यपाद स्वामीजी में अक्षरशः सत्य प्रतीत होने लगता है। त्याग की तो आप साक्षात् मूर्ति हैं। आप में श्री भरत सूरि की ही तरह—

भूषन बसन भोग सुख भूरी।
मन तन वचन तजे तिन तूरी॥

देखने को मिलता है। यदि आपका जन्म न हुआ होता तो भला इस कराल कलिकाल में—मुनि मन अगम यम नियम सम दम विषम व्रत आचरत को॥ और हम जैसे अधम जीवों को 'हठि राम सनमुख करत को।'

दयासागर श्री स्वामीजी ने अलभ्य ग्रन्थों के विषयों को प्रदर्शन कर जनता का महान् उपकार किया है। जिनका अध्ययन कर विद्वान् ही नहीं साधारण जन भी अपना जीवन सफल कर सकता है। भगवद् रामानुजाचार्य आदि से पुष्ट किये गये कैंकर्यभावना—जिसे भाषा में संत तुलसीदास ने 'सेवक सेव्य भाव बिन भव न तरिय उरगारि।' कहकर बताया है, जो श्री स्वामीजी के ग्रन्थों एवं टीकाओं में जगह-जगह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दिखलाई देता है। जिन लोगों ने पूज्य स्वामीजी के यज्ञादि स्थलों में जाकर उनके त्याग, तपोमय जीवन एवं वात्सल्य भरे हृदय से दीन हीनों को सहृदयता से अपनाने का गहराई से मनन किया है वे तो यह कहे बिना नहीं रह सकते कि—

गुरुदेव ! तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि औ लेखक हो जाये सहज स्वाभाव्य है ॥

आपके द्वारा टीका किये गये ग्रन्थों में भगवद् यामुनाचार्य स्वामी विरचित 'श्री वरदवल्लभा स्तोत्र एवं आलवन्दार स्तोत्र' की 'भावप्रकाशिका' टीका भी एक अत्यन्त कल्याणकारी एवं ज्ञान, भक्ति, प्रदात्री है। इसमें वेद, पुराण, उपनिषद्, स्मृति आदि ग्रन्थों के प्रमाण प्रदर्शित किये गये हैं जो युक्तियुक्त, उपादेय और परम श्लाघनीय है। जो भी इस 'भावप्रकाशिका' टीका का अध्ययन एवं मनन करेगा वह अवश्य ज्ञानी भक्त होवेगा।

सौभाग्य से इस 'भावप्रकाशिका' टीका की तृतीय आवृत्ति का प्रकाशन तथा संशोधन का कार्य मुझे प्राप्त हुआ। अत्यन्त गर्मी के कारण प्रकाशित करने में कुछ कठिनाई उपस्थित हुई परन्तु पूज्य स्वामी जी की कृपा एवं भक्त बाबू अजेय सिंह एम० ए० (संस्कृत, हिन्दी) बी० एड० बथंरा कलाँ वाराणसी तथा आचार्य कैंकर्य निष्ठ श्री लल्लन तिवारी आई० एस० सी० शिवजातपुर गोपीगंज, वाराणसी के पूर्ण सहयोग से प्रकाशन कार्य सम्पन्न हुआ। इसके लिये मैं आचार्य चरणों से शुभ कामना करता हूँ कि इसी प्रकार इनमें आचार्य सेवा का भाव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'अनुदिन बढ़इ अनुग्रह तोरे।' अन्त में सोहगी के भक्तों एवं यज्ञ समिति के सदस्यों को धन्यवाद देता हूँ जिनके द्रव्य सहयोग से इस ग्रन्थ की तृतीयावृत्ति प्रकाशित हुई। इस प्रकाशन में यदि कहीं अशुद्धियाँ रह गईं हो तो विज्ञ लोग उसके लिये क्षमा करने की कृपा करेंगे।

श्री स्वामि पादाब्जभृङ्ग—
श्री देवनारायण शास्त्री
न्याय-व्याकरण-सर्वदर्शनाचार्य
संगीत प्रभाकर
दर्शन विभागाध्यक्ष

काशी शास्त्रार्थ महाविद्यालय
ग्रा० पो० वहोरनपुर
जि० भोजपुर (बिहार)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ अस्मद्गुरुभ्यो नमः ॥

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्री १००८ श्रीमद्वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्योभयवेदान्तप्रव-
र्तकाचार्य श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य—सत्सम्प्रदाया-
चार्यजगद्गुरुभगवदनन्तपादीय श्रीमद्विष्वक्-
सेनाचार्य-श्रीत्रिदण्डिस्वामिवर्याणां
चरण-कमलेष्वयं पद्यपुष्पाञ्जलि-
रयं प्रविलसन्तुतराम् :—

प्रान्ते विहारे रमणीय एके, सन्मण्डले रोहितनामसिद्धे ।
श्रीसोहगी-विप्रसुवासभूमौ, बिल्वाम्रनिम्बोपवने महात्मा ॥ १ ॥
कृत्वा तपो मासयुगं तदन्ते, लक्ष्मीमखं यः कुरुते महान्तम् ।
तस्मै नमो भास्वरभास्कराय, कामादिदोषेध्महुताशनाय ॥ २ ॥

त्वं लोकस्य सुहृद्दयाजलधरः स्वामी जने विश्रुतः
क्रिञ्चावाप्तसमस्तयज्ञविभवः साधुश्च लोके शुभः ।
यद्येवं तु न सिञ्चसीह भगवन् व्याध्यादिपीडार्दितान्
नानाकष्टसमाकुलान् निजजनान् कारुण्यनीरैः कथम् ॥ ३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्यादेवं यतिरत्नशोभितमुनिः दासं प्रियं ह्यात्मनः
वात्याचारपथप्रवृत्तिनिरतं शास्त्येव ग्रामे सदा ।
इत्यप्युत्तरमञ्जसा न घटते त्वय्येव साम्यान्तरे
तत्तद्दासजने शुभाशुभपुरे संयोजयत्वात्मनः ॥ ४ ॥
यद्येवं तव शान्तिदं प्रतिवचः सत्यं स्वतन्त्रस्य वै
सर्वं साधनसाध्यसाधितधिया त्वां प्रेरयामि स्वयम् ।
विश्लेपे नगरे तवेति कलयन् बुद्धिस्वरूपो भवन्
किन्त्वेवं न च शोभते तव शुभाऽशंसा मनोहारिणी ॥ ५ ॥
ग्रामं मे प्रथमं पुनातु कृपया शीघ्रं प्रभो गच्छतु
एवम्प्रार्थयते सदैव जनता तेऽग्रे हि सत्यं वचः ।
सर्वं स्यात्तव पादपद्मपुरतो जानाम्यहं तत्त्वतः
काश्यां भाविसमे त्वदीयसुभगं पश्यामि रूपं कदा ॥ ६ ॥
एतद्भाववरं प्रगृह्य हृदये मित्रैः समं साम्प्रतम्
स्वामिस्तेऽतिपवित्रपादयुगलं भक्तैः सुभक्त्यार्चितम् ।
सत्पद्यैरभिनन्दयामि रचितैरद्यैव पद्मामखे
कारुण्यं कुरुतादहैतुकमहो दीने जने प्रत्यहम् ॥ ७ ॥

श्रीमत्पादपद्ममधुपोऽयं

दीनबन्धुदीनानाथरामानुजश्रीवैष्णवदासः

व्याकरण-साहित्य-वेदान्ताचार्यः

दुग्धविनायक वाराणसी वास्तव्यः

प्राध्यापक : अधिकाशि श्रीविश्वनाथगुरुकुल सं० म० विद्यालयीयश्च ।

सं० २०३१ चै० कृ० १२ तिथिः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

॥ श्रीमतेरामानुजाय नमः ॥

श्रीमद्यतीन्द्रपदपङ्कजमेत्यदेव :—
सन्मानवोऽपिदनुजीलभते प्रहर्षम् ।
तत्पादरत्नमहमद्यविलोक्य भक्त्या—
सन्मानवस्यजनिधर्मफलं चलेभे ॥ १ ॥

येषां दयार्थ विभवेन सदा दयार्हाः
दीनाः जनाश्च धनिकाः प्रभवन्तिनित्यम् ।
तत्पादुकार्थ युगलं त्वहमत्र दृष्ट्वा
साफल्य जीवनमहोधिगतोऽत्रयागे ॥ २ ॥

लक्ष्मी प्रसादमधिगन्तुमहोमहात्मा
श्रीसोहगीस्थजनयोगमवाप्यसम्यक् ।
पर्णादिभिश्च कलितामथयज्ञशालाम्
कृत्वा च तत्र कृतवान् श्रुतियागपूर्णम् ॥ ३ ॥

स्वामीश्वरोऽनुदिवसं जनसौख्य हेतोः—
रम्योटजात्प्रचलितः स्वजनैश्च सार्द्धम् ।
श्रीयागशालमभितः कुरुते परिक्रमम्—
व्याजाद्ददाति सुजनाय च सौख्यजातम् ॥ ४ ॥

एवं विधस्य भवतापहरस्य सम्यक्
संप्राप्य दर्शनवरं सुकृतार्थजीवाः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हर्षं प्रहर्षविभवञ्च सदाप्नुवन्ति
तत्पादपद्मयुगलं प्रणमामि नित्यम् ॥ ५ ॥

श्रीमतां चरणसरोजभृङ्गः
वाराणसेयः भगवत्प्रसाद मिश्रः
भूतपूर्व वेद विभागाध्यक्ष
संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी

(३)

॥ श्रीवादिभीकर महागुरवे नमः ॥

विहारप्रान्ते सोहगी प्रसिद्धेद्विजादिभिः पूजितपूर्णग्रामे ।
श्रीमन्महाराजयतीन्द्रमौलिः समागतः शान्तिमयस्त्रिदण्डी ॥ १ ॥

पयोव्रती भक्तप्रदत्त दुग्धं प्रातश्च सायं लभते मुदान्वितः ।
नित्यं चतुर्वादनकालतोऽसौ यावच्च सायं समुपस्थितान्नॄन् ॥ २ ॥

गीतोपदेशैर्निजभक्तवर्गान् ज्ञानार्थयुक्तान् कुरुते मुनीन्द्रः ।
भक्तार्थ सहयोगफलस्वरूपं लक्ष्मीमखं सङ्कुरुते महान्तम् ॥ ३ ॥

यत्पूर्णतां प्राप्स्यति चैत्रमासे शिवातिथौ सौम्य वुधस्य वारे ।
एवं सदा विश्ववरेण्य विष्वक् सेनं यतीशं प्रणमामि मूर्द्ध्ना ॥ ४ ॥

श्रीमत्सुदर्शनपवित्रसुदक्षवाहुम् ।
काषाय शोभिततनुं धृत चोर्द्ध्वपुण्ड्रम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तीर्थस्य शोभनजलैः परिपूर्णपात्रम् ।
दासो नमामि सततं हि सुदर्शनाख्यः ॥ ५ ॥

श्रीमतां चरणचञ्चरीकः
सुदर्शनाचार्यः शुक्लयजुर्वेदाचार्य
तथा सामवेदाचार्यश्च सामवेद प्रध्यापक—
श्री जो० म० गोयनका संस्कृत महाविद्यालय,
ललिताघाट, वाराणसी
दि० ९-४-७५ ई०

(४)

॥ श्रीमतेरामानुजाय नमः ॥

रत्ने प्रान्ते विहारे जनगणविदिते रोहितासेति नाम्ना ।
ख्याते सन्मण्डलेऽस्मिन् द्विजवरवसतिः वर्तते सोहगीयम् ॥
हाऊडीहः सरावो विलसति सुतरां वीरडीहोऽपि मंगित् ।
सोहग्याः पूर्व भागे बहुविधहरिता वर्तते वाटिकैका ॥ १ ॥

तस्यां पूर्वान्तभागे-सुरुचिरसुखदे पर्णजे सत्कुटीरे ।
सिद्धः लोके प्रसिद्धः यतिपति शिखरः योगिराजस्त्रिदण्डी ॥
लोकानां सौख्यमिच्छन्नव्य गुरुफलकै निर्मिते पीठपुण्ये ।
स्थित्वा नारायणं तं जगदधिजनकं सेवते श्रीपतीशम् ॥ २ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्वे ततोऽपि विमले यतिराजकुण्डे ।
संराजते वरुणदेववरः प्रियायाः ॥
कस्यापि कामविभवस्य सुपूर्तिकामः ।
मन्ये यतीन्द्रचरणौ श्रयते सुभक्त्या ॥ ३ ॥.

काषायाम्बरभृद्गुरुश्च दिनपः सन्ध्यात्रये प्रत्यहम् ।
लोकानामुपकारकर्मनिरतोऽन्योन्यं सदोपाकृतः ॥
भाव्याभासफलार्थ दान सुभगः साम्योऽपि नक्तं पुनः ।
अस्तत्वाल्लघुतामुपैति दिनकृच्छ्रीस्वामिनोऽपेक्षया ॥ ४ ॥

सायं निम्बतरोरधः सुसुखदे मञ्चासने सुस्थितः ।
ज्ञाप्यैर्मानवसंगमैः सुललिते दिव्योपदेशे रतः ॥
निम्बार्कार्यसमानवादिहननः चक्षुष्पथे लक्षितः ।
श्रीस्वामीजयतादहोत्रिभुवने सर्वैं प्रणम्योऽर्थदः ॥ ५ ॥

महालक्ष्मीमखे चात्र सोहग्यां लिखितं मया ।
निवेदितञ्च सद्भक्त्या गृह्यतां यतिशेखरैः ॥

श्रीमतां पादारविन्दलोलुपः
भोजपुरमण्डलान्तर्गत भगवतपुरग्रामवास्तव्यः
व्याकरणसाहित्याचार्यः
श्री निवासाचार्यः शिवपूजनत्रिपाठीशास्त्रार्थ महारथी
अयोध्या विद्वत्साधुसमाजाभिनन्दित महामहीमण्डलाचार्यः प्रधानाध्यापक
आरा नाईटस्थ श्रीनिवास गोपाल रामानुज संस्कृत विद्यालयस्य
सम्वत् २०२१ चैत्रकृष्ण द्वादशी भौमवासरः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(५)

श्रीलोक शरण्याय यतिगुरुवराय नमः

कश्चित्प्राह शरीरमेव परमं तत्वं सुखाधायकम्—
अन्यो बुद्धिममन्यताखिलजगन्निर्वाणशान्तिप्रदाम् ।

कश्चित्कर्म शुभाशुभं जनसुखक्लेशप्रदं प्रोक्तवान्—
केचित्सत्पुरुषं विदुश्च प्रकृतिं विश्वस्य सङ्कारकम् ॥

नैवं सर्वमिदं मुधा खलु जगद् ब्रह्मैव सत्यं परम्—
सोहं तत्वमसीति वाक्यमपरे प्रोचुर्न नानाभवः ।

इत्थं वादपरा गता हि भगवत्स्वामित्रिदण्डयङ्घ्रिपु—
दृष्ट्वा ज्ञानपरं त्रिदण्डमभयं स्वान्तस्तमो निर्गताः ॥ २ ॥

सर्वाण्यन्यविधानि यानि विमतान्यस्मिंस्तिरोभाविताः—
न्येकं ब्रह्ममिदं युतं चिदचिता तत्वत्रयं सुस्थिरम् ।

ज्ञात्वा ते समुदोऽभवन्निजमतं तुच्छं कृताः सुस्थिराः ।
विष्वक्सेन सुसूरिपादकमलव्यालीन चित्ता ननु ॥

अमितदुरितमिश्रैः पङ्किलैः स्नेह सार्थैः
नवपरिमलभिन्नैर्भाव पुष्पैर्निवद्धा ।
गुरुचरण हृदुत्था दास्यभिक्षैकपात्रा
गुरुचरणनखाग्रान् सँस्करोतु स्रगद्य ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संस्कर्त्ता

दासानुदासः

बोधगया हरिहर संस्कृत महाविद्यालयोपप्राचार्यः

गुरुचरण चञ्चरीक रामानुजदासः

ग्रामः—शङ्करपुरम्

मण्डलम्—रोहतासः

एकत्रिशून्य युग्म २०३१ वैक्रमीय चैत्रासिता द्वादशी

सोहगी ग्रामस्थः

महालक्ष्मी यज्ञस्थलः

(६)

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

नितान्तरम्यां भवतासुधोक्तिम्
शास्त्रानुकूलां श्रुतिभिस्सुसिद्धाम् ।
श्रुत्वा कुमार्गाश्रयिणो मनुष्याः
द्रुतं स्वधर्माभिमुखा भवन्ति ॥ १ ॥
भवादृशा योग्यतया गुणाढ्या
लोके विमृग्या न च चित्रमत्र ।
भाग्येन लभ्येत भवद्विधानां
दृष्टि र्जनैः मोक्षसुखैकहेतुः ॥ २ ॥
यत्पादरेणुमधिगत्य जनाः कियन्तः
स्वान्तस्तमोविलयमेत्य सुखं प्रहृष्टाः
लोकार्चितान्यपि पदानिगतास्सुशिष्याः
तच्छ्रीयतीश चरणौ शरणं प्रपद्ये ॥ ३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संवत्सरे शशधराग्नि विपद्यमाह्वे
चैत्रेऽसिते शिवतिथौ बुधवासरेऽस्मिन्
कारुष्य रोहित सुमण्डल विश्रुते वै
श्री सोहगी द्विजपुरं यतिराजराजः ॥ ४ ॥
स्वेनैव चालित महामहिमान्वितायाः
लक्ष्म्याः मखस्य परिपूर्तिमगाद्विधिज्ञः
तत्कारणेन जनता यतिपाद सेवां
सम्यक् करोति हृदयेन कृतार्थताप्त्यै ॥ ५ ॥

श्रीमच्चरणरेणुलवलिप्सुः

शमनारायण त्रिपाठी

प्रधानाध्यापकः

सासारामस्थ सनातन धर्म सं० उच्च विद्यालयस्य ।

(७)

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रीमद्यतीन्द्रवरभूषणभूषिताय
विद्यानवद्यहृदयायगुणप्रियाय ।
लोकोपदेशनिरतायसुविश्रुताय
तस्मै नमः प्रतिदिनं यतिपुङ्गवाय ॥
सरित्तीरयागेष्वखिन्नं विरक्तम्
सदान्तर्मुखीवृत्तिदीप्यद्धि चित्तम् ।
सुधा सत्कथासारसारं गृणन्तम्
कवीन्द्रं मुनीन्द्रं यतीन्द्रं भजामः ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रमाद् यज्ञनिश्रेणि घंटा पथेन
सदातत्वव्याख्यान सत्संवलेन ।
नयन्तं शतं भक्त लोकं हि नाकम्
यतीन्द्रं त्रिदण्डान्वितं सम्प्रपद्ये ॥
कारुण्ये रोहिताश्वे च क्रमशः क्षेत्र मण्डले
सोहगी नामके ग्रामे यागोऽभूद्धि त्रिदण्डिनः ॥

सरयू प्रसाद द्विवेदी
शौण्डिक हाई स्कूल राजपुर
रोहतास
सोहगी यागे सं० २०३१ चैत्र कृ० द्वादशी तिथि

(८)

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

॥ श्रीवादिभीकरमहागुरवे नमः ॥

॥ १ ॥

वेदान्त वारिनिधिमन्थनदीक्षितान्तः ।
सत्तर्कनीरपरिशोधित दिव्यचक्षुः ॥
देदीप्यमाननिगमागमतत्त्व वेत्ता ।
विद्वत्सभाजन-सभाजन भाजनत्वम् ॥

॥ २ ॥

मति मनोरथ मानद मूर्तिमान् ।
श्रुति रहस्य प्रवर्त्तक बुद्धिमान् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जयतु देशिकराड् हरिभक्तिमान् ।
निखिल पाप हरः जनतार्चितः ॥

॥ ३ ॥

धनीएनाहं स्वामिन् न च किमपि विद्यास्ति हृदये ।
अगाढोऽयं ध्वान्त जगति विततो दुःख जनकः ॥
महत् पापं चास्ते निखिल समये ऽशोभनकरम् ।
दशायां मे तस्यां तव चरणयुग्मं हि शरणम् ॥

स्वामीचरणचंचरीकः—

श्रीनिवासपाण्डेयः

प्राचीन नवीन साहित्याचार्यः

प्रधान संस्कृतशिक्षकः

स० भू० शं० भा० हाई स्कूल, कसा

(भोजपुर) आरा

आशीर्वाद— पुस्तकालय, काशी

(९)

॥ श्रीशः ॥

सच्छास्त्रचिन्तन परं विदुषां समाजे—
विख्यातकीर्तिमतुलं रमणीयमूर्तिम्—
इभ्यैः सदाविजयिभिः किल पूज्यपादम्—
वन्देवृषध्वजरतिं सततं भवन्तम् ॥ १ ॥

पद्मस्य किन्दुकुशलं रवयेनिगाद्यं—
यस्यास्यतत् सदसती सदसत् विलासात् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कानाममत्कुशलताविषयेऽस्तु पृच्छा ।
पृच्छा-दयाऽत्र भवतां नितरां स्विकैव ॥ २ ॥

तुल्याम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
भगवत्सङ्गिसङ्गस्यमर्त्यानां किमुताशिषः ॥ ३ ॥

यत्रेऽन्तेकथामृष्टास्तृष्णायाः प्रशमोयतः ।
निर्वैरं यत्र भूतेषु नो द्वेगोयत्र कश्चन ॥ ४ ॥

यत्रनारायणः स्त्रक्षाद्भगवान्न्यासिनां गतिः–
संस्तूयते सत्कथासुमुक्तसङ्गैः पुनः पुनः ॥ ५ ॥

तेषां विचरतां पद्भ्याम् तीर्थानां पावनेच्छया ।
भीतस्य किं न रोचते तावकानां समागमः ॥ ६ ॥

यज्ञाय धर्मपतये विधिनैपुणाय–
योगाय सांख्यशिरसेप्रकृतीश्वराय ।
नारायणाय हरये नम इत्युदारं–
हास्यन्मृगत्वमपि यः समुदाजहार ॥ ७ ॥

प्र० द्वारकाधीश पांडेयः

बालकृष्ण संस्कृत विद्यालय वराढी

पो० अकोढी बाजार

जि० रोहतास, सासाराम

दिनांक ८-४-१९७५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१०)

॥ श्रीः ॥

माननीयमूर्तेः कमनीय कीर्तेः यशस्विनः मनस्विनः ओजस्विनः
तपस्विनः दीन जनानुरागिनः लोक हित सर्व त्यागिनः
सत्य विवेक विद्या विभूषणस्य श्री सम्प्रदाय
सरोज वन पूषणस्य वयोवृद्धस्य
सुज्ञान समृद्धस्य शुद्धस्य
वुद्धस्य नय नागरस्य
गुण सागरस्य
मधुर वाणेः
वरद पाणेः महोदारस्य उच्चविचारस्य अग्रगण्यस्य
स्वनाम धन्यस्य सरल जीवनस्य प्रहर्षित वदनस्य
अभिवन्दनीयस्य अभिनन्दनीयस्य

ब्रह्मनिष्ठस्य लब्धप्रतिष्ठस्य श्री १००८ श्री मद्वेदमार्ग प्रतिष्ठापनाचार्यस्य उभय वेदान्त प्रवर्त्तकाचार्यस्य श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्यस्य जगद्गुरुभगवदनन्त पादीयस्य श्रीमतः विष्वक्सेनाचार्यस्य श्री त्रिदण्डिनः स्वामिनः जीवस्य महाराजस्य स्तवनमितम् ॥

नगस्वरूपिणी

नमाम्यहम् त्रिदण्डिनम् ॥ महामतिं यशस्विनम् ॥
अनेक याग कारकम् ॥ नमामि शास्त्र पारगम् ॥ १ ॥
नमो नमो महात्मने ॥ नमो नमो मनस्विने ॥
महर्षये तपस्विने ॥ नमो नमो मनीषिणे ॥ २ ॥

उपजाति

विवेक शीलं निगमागमाब्धिम् ।
हंसं वरं मान सरोवरस्थम् ॥

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उदार मूर्ति कमनीय कीर्तिम् ।
प्रदर्शकं धर्म पथस्य वन्दे ॥ ३ ॥
धर्मावतारो मधुरोपदेष्टा ।
आचारमूर्तिर्भवभीतिहर्त्ता ॥
श्रीयज्ञ कर्त्ता जगतो हितैषी ।
त्वं वीतरागो भगवन्नमामि ॥ ४ ॥
विशिष्ट कैवल्य पथस्य गामी ।
अध्यात्म गाङ्गे परि मज्जितस्त्वम् ॥
समाधि सौख्यस्य महोपभोक्ता ।
वेदान्त वक्तारमहं नमामि ॥ ५ ॥

शार्दूल विक्रीडितः

निर्लेपं कमलोपमं सुकृतिनं, वेदस्य सद्रक्षकम् ॥
मालामण्डित मंजु मञ्च विमला सीनं सरोजासनम् ॥
भाषा भाषिण मुच्च कोटि वचनं, श्री सम्प्रदायानुगम् ॥
वन्दे धर्म धुरन्धरं श्रुतिरतं, श्रेष्ठं महायोगिनम् ॥ ६ ॥
कीर्ति वैं द्विगुणादिने प्रतिदिनं, लोके मुने उज्ज्वला ॥
रात्रौ चैव चतुर्गुणा सरतिते, तैलं यथा वारिणि ॥
चित्तोदार महाकृपा फलमिदं, दृष्ट्वा च यागालयम् ॥
श्रुत्वा ते वरचित्रमत्र वचनं, मोदं लभन्ते जनाः ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्

अज्ञान तमो हन्तारं, महामुनिं सुदर्शनम् ॥
योगीश्वरमहं वन्दे, योगिराजं पयोव्रतम् ॥ ८ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi .

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनेक शास्त्र तत्त्वज्ञं, ज्ञान गम्भीर सागरम् ॥
पांडित्य पर्वतं वन्दे, सर्वद-योग काननम् ॥ ९ ॥
श्रीयुक्तं तिलकं भाले, त्रिदण्डं कर शोभितम् ॥
विविधं सुमनो माल्यं, यस्यैव तं नमाभ्यहम् ॥ १० ॥
प्रोक्तानि शब्द पुष्पाणि, स्वीकुरु हे युगेश्वर ॥
महिमा दुर्गमः साधोः किं वदानि नमाभ्यहम् ॥ ११ ॥

रचितम्

ब्रजनन्दन वर्मणा

शिक्षकेन

मध्य विद्यालय टंडवा ग्रामस्थेन

(११)

॥ श्री वरवर मुनये नमः ॥

गुरुदेव मेरे मन में अरु तन में रमा करना ।
वैकुण्ठ मेरा है ये इसमें भी वसे रहना ॥ १ ॥
माया के झकोरे में यदि तुझको विसर जायें ।
हे नाथ दयासिन्धू ! तुम भी न भुला देना ॥ २ ॥
प्रभु ने बड़ी दया की जो नाथ तुझको पाया ।
मंगलमयी निगाहें अपनी न घुमा लेना ॥ ३ ॥
हम अवगुणी हैं फिर भी चरनों में पड़े तेरे ।
रज कण को माथ पर दे बिगड़ी सवाँर देना ॥ ४ ॥
चातक की तरह हम भी तुझको ही निहारेंगे ।
मनभावनी मूरति में नयनों में रहा करना ॥ ५ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तेरी प्रसन्नता ही पूजा हमारी होवे ।
खुश रहना सदा गुरुवर मन में नहि कुछ लाना ॥ ६ ॥
विनती यही हे यतिवर ! बारं है बार तुझ से ।
टूटे न प्रेम मेरा ये ही खियाल रखना ॥ ७ ॥
ये चरन कमल तेरा धन होवे सदा मेरा ।
यदि हो सके तो मुनिवर इतनी ही दया रखना ॥ ८ ॥

श्री आचार्य चरणोंका अकिंचनदास अजेय सिंह एम० ए०
(हिन्दी, संस्कृत) बी० एड० शोध छात्र
काशी विद्यापीठ
वर्थरा कलाँ, वाराणसी
चैत्र कृष्ण द्वादशी संवत् २०३१

(१२)

श्रीमते रामानुजाय नमः

शीतलमन्दसमीरणसेवितसुविकसित-आम्रनिकुञ्जे ।
अनुक्षणकोकिलकलरवपूरितमनोहारीसुखपुञ्जे ।
वसति श्रीस्वामी अन्तर्यामी सुरचितपर्णकुटीरे ।
अलिकुलसंकुलकुसुमैर्विभूषित-जनपूजित-अतिधीरे ॥ १ ॥
कलयति-कीर्त्ति अभिनवगीतिं लक्ष्मीधरस्यप्रभाते ।
दलयति विमतं वलयति श्रीमतं वादिनिकर-अभिजाते ॥
नदी-नदतीरे रसगम्भीरे स्वीकृत निर्जनवासः ।
भजते खरारिं प्रभुदनुजारिं विरहित भोगविलासः ॥ २ ॥
गोकुलतुल्यं व्रतबहुमूल्यं कुरूते क्षेत्रमधारिः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जन-मन-विमले पादामृतधवले भक्तिसुधासञ्चारी ।
नख-दर्शन-लुब्धा त्वच्छविमुग्धा भवतिभूमि, प्रयागः ।
जनयति अतिसरसं सुरकुल हर्षं कलिमध्ये तवयागः ॥ ३ ॥
रक्तपर्णपीतसितसुमनदलनिस्सृतमधुरसधारा ।
सिञ्चति पादपूत-अवणीमतिरचयति हर्षमुदारा ।
पद्मताम्रचरणामृतलोलुपभक्तभ्रमर-गुञ्जाराः ।
कर्ण-रन्ध्र-पीयूष-पूर्त्तिका-डर-तोषक-रस-साराः ॥ ४ ॥

स्वामिन् ! विहाय तव पादरेणून्
काम्ये न गौरवममराधिपस्य ।
नवा-नवा स्याद्भवदंघ्रिनिष्ठा
भक्ति सुविमलां प्रददातु नाथ ॥ ५ ॥

पदपद्मरसलोलुपः
प्रो० सुदामा सिंह
अर्थशास्त्रविभाग, गया कालेज गया ।

(१३)

॥ श्री वादिभीकर महागुरवे नमः ॥

॥ प्रार्थना पत्र ॥

धन धन भक्तन भाग दरस जो गुरुवर का पाई ।
वायें कर में कमण्डल राजे,
दायें कर में त्रिदण्ड विराजे ।
कान्धे पे उपवीत सुन्दर है सोहे,
भाल तिलक ऊर्ध्व पुण्ड्र मन मोहे ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गेरु वस्त्र रंगाई—दरस जो······घन० ॥ १ ॥
फलक के ऊपर आसन जमाई । वाहुमूल शंख चक्र लगाई ।
श्री मन्नारायण ध्वनि को सुनाई । मूलद्वंय मंत्र से गुरुमुख कराई ।
यम का दें फन्दा छुड़ाई । दरस जो······घन घन ॥ २ ॥
सनातन धर्म के हैं ये पुजारी । वैष्णव मत का करते प्रचारी ।
गीता व वेदों का देते हैं शिक्षा । गोपय का ही करते हैं भिक्षा ।
अन्न क नाहीं छुवाई । दरस जो······घन घन ॥ ३ ॥
कोई अष्ट दिग्गज हैं कोई नवरत्न वेदान्ती सुखद ।
कोई ज्योतिषाचार्य कोई राजधानी के वृहद ॥
शास्त्री कोई कीर्तन कलानिधि कोई वेदाचार्य है ।
इन्जिनीयर कोइ सेठ साहूकार पोष्टाचार्य है ॥
कोई जगद्गुरु कहाई । दरस जो······घन घन ॥ ४ ॥
इनके कहे गुरुवर कदम उठाई । तनिको ना दिल में भरम को लाई ॥
जैसे द्रौपदी टेर लगाई । सुनतै तुरत धाये कन्हाई ॥
वैसे आपने जाई । दरस जो गुरुवर······घन घन ॥ ५ ॥
हमरी वेरी काहे देर लगाई । गोप ग्वाले के नाते जनाई ।
तीन घरे क गाँव वताई । एही से मन गइलय डेराई ॥
अउरो हव गरिवाई । दरस जो······॥ ६ ॥

बाबा चउवाह जोहैं तोहरी रहिया
तोहरे वदे माटी देय गंगा मइया ।
कव अइहय भव पार करइया,
व्याकुल सव नर नारी लुगइया ॥
कव अइहय यतिराई । दरस जो······॥ ७ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहत सुदामा मति के थोरे । गुरु चरनन में मन को जोरे ।
गुरु गुण गान बनाई । दरस जो······॥ ८ ॥

हम हैं—

श्री आचार्य चरणों के अनुरागी

ग्राम—पकंडी, घनश्यामपुर,
महुवरिया, सिकरौरा पो० काँवर
वाराणसी के अकिंचन जन
चैत्र बदी द्वादशी

(१४)

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

परम आराध्य !

आज सोहगी सौभाग्यवती है । यहाँ की वसुन्धरा पुण्यवती हो गई है, क्योंकि आप यथार्थ पार्जन्य की तरह यहाँ बरस पड़े हैं । यज्ञ का फल बाद में नहीं पहले ही हस्तामलकवत् सुलभ है ।

वेदावतार !

वेद की ऋचाएँ आपके मुख से अवाध निःसृत होती हैं—सहज सरल सुबोध बनकर । आप वेद से अभिन्न हैं । हमें वेद पाठ करने की आवश्यकता नहीं । हम तो आप में वेद का साक्षात्कार करते हैं, अवगाहन करते हैं ।

साक्षात् गीता !

आप जनता जनार्दन को गीता का अमिय स्तन्य पान करा—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुनर्जन्म की भयावह सम्भावना को और प्रस्तुत भवरोग को समवेत समूल नष्ट कर रहे हैं।

भक्ति की भागीरथी !

मंदाकिनी, भगीरथ प्रयत्न के बाद, इस धरा पर आ सकीं। लेकिन आप तो स्वेच्छया हमारे त्रिविध ताप को, जन्मों से संचित मल को, भक्ति की विमल धारा द्वारा निर्मल बना रहे हैं।

योग की कालिन्दी !

यमुना-वेणुवादन और योगमाया की क्रीड़ास्थली—उद्धव के ज्ञान और गोपियों की भक्ति की साक्षी आपके रूप में प्रतिमूर्त है।

वहिर्सलिला सरस्वती !

सरस्वती अन्तः सलिला हैं। लेकिन आप प्रत्यक्ष हैं। आपका शाश्वत सनातन, तप और त्याग, हमारे अज्ञान–चक्षुओं को विज्ञान की दीप्ति से प्रकाशित कर रहा है।

ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की त्रिवेणी !

आपके तट पर विश्वास और अचल स्वधर्म का जो अक्षय-वट हमें सुलभ हो रहा है उससे हमारी भुक्ति और मुक्ति दोनों की सिद्धि निश्चित है।

हमारे सर्वस्व !

हम आपही के रहें—प्रतिक्षण, प्रतिपल, यही करूण-कातर प्रार्थना है।

चरणारविंद मिलिंद

जयशंकर

आत्मज

प्रो० जगदीश प्रसाद पाण्डेय, प्राध्यापक (अंगरेजी)

महाराजा कालेज, आरा। सोहगी, महालक्ष्मी-यज्ञ।

मंगलवार ८-४-७५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सरस्वती-ग्रन्थालय, ... बरौली, वाराणसी-5

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

महायोगिन् !

आप अपने योग वल से समस्त इन्द्रियों तथा मन पर विजय प्राप्त कर ऐसे दुष्कर कार्य संपन्न किये जो वड़े बड़े अमलात्मा महात्माओं के लिये भी कष्ट साध्य है, संसार में ऐसा कोई महापुरुष दृष्टिपथ में नहीं आता जो अपने त्याग तपोवल द्वारा लोक कल्याण करता हो तथा जन जन में लोक कल्याणकारी भावनाओं को भरता हो, वाणी में .सामर्थ्य नहीं की आपके योगवल का प्रभाव कह सके।

करुणा सागर !

दया की तो आप साक्षात् मूर्ति ही हैं अपार सौशील्य-वात्सल्य सौलभ्यादि अनन्त गुणों से विभूषित हृदय आपका हम बच्चों की वाल चपलता का ध्यान नकर अक्षम्य अपराधों को भी क्षमा कर दयालुतावश ऐसा उपदेश प्रदान करता है कि जिससे आत्म कल्याण में संदेह का गंध भी नहीं।

लोककल्याण कर्ता !

असंख्य जीवों का उद्धार आपके सत्संग सभा में प्रोच्चारित भगवन्नाम् ने ही संपन्न किया साथ ही आपके जैसे महात्मा का दर्शन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तो मणि कांचन योग साही है, क्या इसमें संदेह भी है कि जिसने आपकी सौम्य मूर्ति का दर्शन किया और उसका परम कल्याण न हुआ हो। परमाराध्य गोस्वामी तुलसी दासजी ने संतों को जंगम तीर्थराज ही कहा है।

भक्त कल्पद्रुम !

कल्पद्रुम जैसे समस्त मनोरथों को पूर्ण कर देता है अपने संनिधि मात्र से तद्वत् भक्तों की संपूर्ण इच्छायें पूरी होती हैं आपकी स्नेहमयि दृष्टि से ? हमें तो लगता है आप दया कर एक बार जिसे देख लेते हैं उसका ऐहिक जीवन धन्य होता हुआ पारलौकिक जीवन भी धन्य हो जाता है।

देवाधिदेव !

संसार के पथ भ्रष्ट जीवों को ऐसे कार्यों की ओर आप उन्मुख कर देते हैं कि जिससे वह भूला हुआ जीव महालक्ष्मी जी की स्नेह मयि दृष्टि से पूत हो अपने परम पिता को प्राप्त कर अपना जीवन धन्य कर लेता है यह है, शरणागति योग। अंत में हम सभी लोगों की ओर से ऐसी ही दया प्रदान करते रहने का अनुरोध करते हुए अपराधों के लिये क्षमा प्रार्थी हैं।

आपका ही

रामानुजदासानुदास वेंकटेश

परसिया ठकुराई

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१६)

॥ श्री भाष्यकाराय नमः ॥

'विनय'

पत रखना सदा हे त्रिदण्ड कमण्डलु धारी !
ग्वाल सुता ने जब था पुकारा दौड़ के प्रान बचाये हो।
कुंभ समय जब भक्तों ने टेरा बाँह पकड़ के निवार्‌यो हो।
घाट मझारन 'दीन' पुकार्‌यो बन बीर महा तू उबार्‌यो हो।
जहँ जहँ भीर परी भगतन पर जाइ तहाँ तू संभार्‌यो हो॥
सेवक से अपराध भयो क्या ?
मेरी बेरियाँ काहे सुधि बिसारी हो ॥ १ ॥
पत रखना…………

दण्ड भुलान कि भुलान कमण्डलु,
कि छुटि रह्यो कछु वस्त्र तिहारो।
ध्यान लगाय रह्यो प्रभु में,
या कि आज घट्यो कछु बलु है तिहारो॥
मोहि पुकारत देर भयो,
काहे छुपाय रहे बल बिहारी हो॥
पत रखना…………

यतिवर चरण कमलों का

दासानुदास—

लल्लन तिवारी आई० एस० सी०

शिवजातपुर—गोपीगंज, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय, परतनिधि, कचौंड़ा बाराबंकी-5

भूमिका

प्रिय सज्जनों !

"चतुःश्लोकी"-"वरदवल्लभास्तोत्र" के निर्माणकर्ता श्रीयामुनाचार्य्य स्वामीजीका आविर्भाव—द्रविडदेशके "काटमन्नारगुडी" में—

धात्वब्दे कर्कटेमासे पौर्णमास्यां भृगोर्दिने ।
मित्रभेरङ्गनायक्यां श्रीसिंहासनभागतः ॥
प्रपन्ना० । अ० १११ । श्लो० ७ ॥
मतिमानीश्वरमुनेर्जज्ञे कश्चित्सुतो महान् ॥ ८ ॥

धातुनामके संवत्सर श्रावणमास पूर्णिमा तिथि शुक्रवार और अनुराधा नक्षत्र आनेपर रंगनायकी देवी में श्रीसिंहासनभागसे ईश्वरमुनिको कोई महान् मतिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥ ८ ॥ इसके अनुसार उनका जन्म दक्षिण भारतके वीरनारायणपुरमें हुआ था। उनका सब वैदिक संस्कार राममिश्र स्वामीजी द्वारा ही निष्पन्न हुआ उसके बाद कुशाग्रधी यामुनमुनि वेद-वेदागोंका अध्ययन थोड़े ही दिनोंमें समाप्त कर श्रीमहाभाष्यभट्टके पास शास्त्रोंका अध्ययन करने लगे। उस समय चोलमहीपालका पुरोहित अक्कियालवान् नामका एक विद्वान् सब विद्वानोंको पराजित कर प्रतिवर्ष गिन्नी दशवंध कर लिया करता था वही कर उक्त श्रीभट्टजी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को भी लगा जिसको न देनेसे दूतोंने महाभाष्यभट्टको अत्यन्त दुःख दिया, तब यामुनमुनिने पूछकर राजपुरोहितके सब वृत्तांत जानकर—

न वयं कवयस्तुकेवलं न वयं केवलतन्त्रपारगाः ।
अपि तु प्रतिवादिभीकरप्रकटाटोपविपाटनक्षमाः ॥
प्रप० । अ० १११ । श्लो० ३५ ।

इस श्लोकको पत्रमें लिखकर उन दूतोंसे राजपुरोहितके पास भेजा। उस पत्रको देखकर व्याकुल हो राजपुरोहितने राजासे कहा कि बारह वर्षका लड़का मुझको कुछ नहीं समझता है इसलिए उसको यहां बुलाकर उचित दण्ड देना चाहिये। इस बातको सुनकर चोलराजाने उनको बुलानेके लिये दूतोंको भेजा, किंतु यामुनमुनि अनादर समझ राजाके पास नहीं आये तो फिरसे बहुमानके साथ राजाने शिविकाको पठाया ! तब शिविकारूढ़ हो यामुनाचार्य्य राज्यसभामें पधारे। उनका आगमन सुनकर राजपुरोहित भी वहाँपर आया। उसके आनेके पूर्व ही यामुनमुनिने राजसभामें—

आशैलादद्रिकन्याचरणकिसलयन्यासधन्योपकठादारक्षोनीत-
सीतामुखकमलसमुल्लासहेतोश्च सेतोः ।
आचप्राच्यप्रतीच्यक्षितिधरयुगलादर्कचन्द्रावतंसान्मीमांसा-
शास्त्रयुग्मश्रमविमलमना मृग्यतां मादृशोऽन्यः ॥ प्रप० ।
अ० १११ । श्लो० ५० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस श्लोकको लिखकर बंधवा दिया इसके बाद उनसे शास्त्रार्थ करनेके लिये राजपुरोहितके आनेपर श्रीयामुनमुनिने राजासे कहा कि शीघ्र मध्यस्थको बुलाइये। इसके बाद सब मध्यस्थ राजाकी आज्ञासे उस सभामें एकत्रित हुए। इतनेमें ही राजाकी महिषी चोलराजसे कही कि यदि यह बालक पराजित हो जायेगा तो मैं छै मास आपकी दासी हो जाऊंगी। और राजाने भी कहा कि यदि मेरा पुरोहित पराजित हो जायेगा तो तुझे मैं आधाराज्य दे दूँगा। इस तरह राजा और रानीकी प्रतिज्ञा हुई। इसके बाद राजपुरोहितने सबके सामने ही कहा कि मैं तीन बात कहता हूँ इसका तुम खण्डन करो अथवा तुम्हीं तीन बातोंको कहो मैं खण्डन करता हूँ। तथा जो खण्डन नहीं करेगा उसका पराजय माना जायेगा, और उसके शिरपर सब लोग ताडन करेंगे। ऐसी प्रतिज्ञा करनेपर यामुनमुनिने कहा कि—

अवन्ध्या किलते माता विद्वन् राजपुरोहित।
एष राजा सार्वभौमो राजपत्नी पतिव्रता॥
प्रप०। अ० १११। श्लो० ८०॥

इन तीन लौकिक बातोंको सुनकर राजपुरोहित निरुत्तर एवं लज्जित हो गया तब पुनः यामुनमुनिने कहा कि—

वक्ष्यामि वैदिकगिरश्चोत्तमाधममध्यमाः।
सर्वशास्त्रस्थिताः सर्वा विबुधेन्द्रादिसंमताः॥
प्रप०। अ० १११। श्लो० ८३०॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस श्लोकको भी सुनकर वह चुप रह गया तब यामुनाचार्य जीने कहा कि तुमने ही निर्णय किया था कि पराजित होनेवालेके शिरपर सभी ताडन करेंगे सो तुम राजपुरोहित एवं वृद्ध हो इसलिये मैं ऐसा नहीं करता हूँ ।

इसके बाद सब लोगोंने ब्रह्मरथपर बैठाकर यामुनमुनिका महोत्सव मनाया तथा राजाने—

अर्धराज्यं ददौ राजा यामुनाय विपश्चिते ।
विवादसमये दत्तं भार्ययाचोदितस्तदा ॥
श्लो० ९९ ।

इसके अनुसार आधाराज्य यामुनमुनिको दिया । इसके बाद उनके पिता ईश्वरमुनिने यामुनमुनिका विवाह करके कुछ दिनोंमें ही परंपद पधारा तदनन्तर कुछ दिनों के बाद ।

पुत्रद्वयं तदा जज्ञे यामुनार्याय विश्रुतम् ।
वररङ्गाभिधोज्येष्ठो शोट्टपूर्णो परस्तयोः ॥ १०९ ॥

यामुनमुनिको वररंग और शोट्टपूर्ण नामके दो पुत्र हुए उन लोगोंका सब संस्कार करके प्रजाका पालन करते हुए महेंद्रके समान सुखसे ठहरे । इसके बाद राम मिश्र स्वामीजी छै महीना अलर्कका शाक यामुनमुनिके लिये समर्पण किये और बीचमें चार दिन नहीं लाये, फिर पाँचवें दिन शाक लाये । तब यामुन-मुनिने पाचकसे पूछा कि यह शाक किसने लाया ? पाचकने कहा कि एक वृद्ध ब्राह्मण लाते हैं । पुनः यामुनामुनिने कहा कि यदि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शाक लेकर वह वृद्ध ब्राह्मण आवें तो मेरे पास ले आना। पाचक सवेरे राममिश्र स्वामीजीको यामुनमुनिके पास लाया। और यामुनमुनिने अच्छी प्रकारसे सत्कार करके हाथ जोड़कर उनसे कहा कि विप्रेन्द्र! जो धन तुम चाहते हो वह मुझसे माँगो मैं आपको अवश्य दूँगा ॥ इसके बाद राममिश्र स्वामीजीने कहा कि आपके पूर्वजनाथमुनि स्वामीजीका धन मेरे पास है, उसको दिखानेके लिये आपके पास मैं आया हूँ तो यही चाहता हूँ कि मुझे आपके यहाँ आने जानेमें रुकावट न हो यामुनमुनिने द्वार-पालोंको बुलाकर तुरंत ही आज्ञा दिया कि इस महानुभावको आने जानेमें तुम लोग नहीं रोकना। इसके बाद नित्य प्रति आकर राममिश्र स्वामीजीने अच्छी प्रकारसे अठारह दिनमें

सम्यगष्टादशाध्यायीमष्टादशदिनैस्तदा ।
स तस्मै यामुनार्याय रहस्येवमबोधयत् ॥
प्रपन्न० । अ० ११२ । श्लो० ५४

अठारह अध्याय भगवद्गीताको एकांतमें यामुनमुनिको समझाया ॥ ५४ ॥ उस श्रवणसे उत्तरोत्तर उनका ज्ञान भक्ति और वैराग्य बढ़ने लगा। इसके बाद यामुनमुनि स्त्री पुत्र धनादिका परित्याग कर श्रीरंगम् चले गये और वहाँपर—

संन्यासं विदधे सम्यग्यामुनार्यो महायशाः ॥
प्रप० अ० ११२ श्लो० ७० ॥

इसके अनुसार संन्यास ग्रहण कर लिये। इसके बाद बहुत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सज्जन लोग उनके चरणाविंदके आश्रित हुए १—श्री महापूर्ण स्वामी २—श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामी ३—श्री शैलपूर्ण स्वामी ४—श्री मालाधर स्वामी ५—श्री वररंग स्वामी ६—श्री काञ्चीपूर्ण स्वामी ७—श्री मारनेरनाम्बि स्वामी प्रभृति कृपापात्र हुए। और अनन्त शयनादिक दिव्यदेशोंकी यात्रा करके—

स्तोत्ररत्नं चतुःश्लोकीं वेदप्रामाण्यमेव च।
सिद्धित्रयं च वेदान्तिन् श्रीगीतासंग्रहं महान्॥
प्रप०। अ०। ११६। श्लो० १६।
यामुनो लोकरक्षार्थमकरोद्ग्रन्थपञ्चकम्॥ १७॥
स्तोत्ररत्न १।

स्तोत्ररत्न १, चतुःश्लोकी अर्थात् वरदवल्लभा २, वेदप्रामाण्य ३, सिद्धित्रय ४, और गीतार्थ संग्रह ५, इन पांच ग्रन्थोंको लोककी रक्षाके लिये यामुनाचार्यजी बनाये हैं॥ १७॥ इसके बाद—

पञ्चविंशतिसंयुक्तं वत्सराणां शतं गतम्।
त्यक्ताभिलाषो मेदिन्यां यातुकामः परंपदम्॥
प्रप०। अ० ११६। श्लो० १८।

एक सौ पचीस वर्षके आयु होनेपर मेदिनीमें अभिलाषा छोड़कर परमपद जानेकी इच्छा किये॥ १८॥ और—

वृषभमासे षष्ठे—अंशे श्रवणनक्षत्रेऽभिजिन्मुहुर्ते
सूरीणां शेषत्वं स्वीकृत्य—ततः पद्मासने स्थित्वा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराममिश्रं ध्यायन्—ब्रह्मरन्ध्रेण यामुनाचार्य्यः परमपदमगात् ॥ वार्त्तामा० वा० ४१९ ॥

ज्येष्ठ महीना छठवें अंश श्रवणनक्षत्र अभिजिन्मुहूर्तमें सूरियों की शेषताको स्वीकार कर तथा पद्मासनमें स्थित होकर श्रीराम-मिश्र स्वामीजीका ध्यान करते हुए ब्रह्मरन्ध्रमार्गसे यामुनाचार्य स्वामीजी परमपदको प्राप्त कर लिये ॥ ४१९ ॥ पूर्वोक्त महानुभाव कृत यह स्तोत्र इतना सुप्रसिद्ध और माननीय है कि लाखों नरनारी इस स्तोत्र को कण्ठाग्र करके प्रतिदिन पाठ करते हैं। और उसके द्वारा अपने मनोभिलषित वस्तु को प्राप्त करते हैं। और इसकी उपादेयता पर मुग्ध होकर कई विद्वानोंने इसकी व्याख्या और भाषाटीका लिखी है। परंतु कोई अत्यन्त वृहत् या कोई अति संक्षिप्त है अतः वे टीकायें सर्वोपयोगिनी नहीं है। इस बातको विचार कर, जब पैदल तीर्थ यात्रा करते हुए श्री पूज्यपाद महामना विष्वक्सेनाचार्य त्रिदण्डी स्वामीजी महाराज पुरी राज-गोपाल मठमें पधारे तब श्री जगन्नाथ पुरी निवासी समस्त भागवतवृन्दोंने आकर श्रीस्वामीजी की सन्निधिमें निवेदन किया कि श्रीमान् की बनाई हुई जो स्तोत्ररत्न की टीका "भावप्रका-शिका" है उससे दासलोगोंका वहुत ही उपकार हुआ। जगज्जननी का पुरुषकारभूत "वरदवल्लभास्तोत्र" की भी यदि "भावप्रका-शिका" टीका हो जाती तो वहुत ही अच्छा होता। इस वाक्य को सुनकर श्रद्धेय स्वामीजीने कहा कि यदि भागवतों की दया रहेगी तो शीघ्र ही पूर्वोक्त टीका हो जायेगी। जिसके फलस्वरूप "भाव-प्रकाशिका" समलंकृत वरदवल्लभा स्तोत्र सज्जनोंके करारविंदमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राप्त हुआ है। इस "भावप्रकाशिका" टीकामें श्रीपूज्यपाद त्रिदण्डी स्वामीजी नारदपांचरात्र [१] वृद्धहारीतस्मृति [२] भगवद् गीता [३] श्रीमद्भागवत [४] यजुर्वेद [५] लक्ष्मीसूक्त [६] यतिराज स्तोत्र [७] रामानुजवैभवस्तोत्र [८] चतुः श्लोकीभाष्य [९] मुक्तिकोपनिषद् [१०] कात्यायनसूत्र [११] बौधायनसूत्र [१२] मीमासाशास्त्र [१३] गारुडोपनिषद् [१४] आद्यपुराण [१५] श्वेताश्वतरोपनिषद् [१६] निरुक्त [१७] अथर्ववेद [१८] अमरकोष [१९] पद्मपुराण [२०] पराशरस्मृति [२१] ब्रह्मसूक्त [२२] ऋग्वेद [२३] श्रीस्तव [२४] ममुक्षुपड़ि [२५] वार्त्तामाला [२६] व्याकरणसूत्र [२७] श्रीसूक्त [२८] सौभाग्यलक्ष्म्युपनिषद् [२९] मुकुंद-माला [३०] वाल्मीकिरामायण [३१] श्रीगुणरत्नकोश [३२] अष्टोत्तर सहस्रनाम [३३] मंकणसंहिता [३४] छांदोग्योप-निषद् [३५] वेदार्थसंग्रह [३६] पाण्डव गीता [३७] श्रीसात्त्वतसंहिता [३८] कठोपनिषद् [३९] पुरुषसूक्त [४०] तैत्तिरीयोपनिषद् [४१] वेदांतशास्त्र [४२] पराशरीयधर्मशास्त्र उत्तरखण्ड [४३] सीतोपनिषद् [४४] विष्णुपुराण [४५] श्रीवचनभूषण [४६] प्रपन्नामृत [४७] स्तोत्ररत्नावलि [४८] गुरुपरंपरा [४९] इन ग्रन्थोंके प्रमाण क्रमशः दिये हैं। वास्तव में यह टीका वरदवल्लभा स्तोत्रके भावको प्रकाश करनेवाली ही है। इससे इसका "भावप्रकाशिका" नाम सार्थक है ॥

जगदेकवन्द्य परमाचार्य भगवन्मुखोल्लासार्थ उनकी दिव्य महिषी लक्ष्मीजीकी स्तुति करते हैं, लक्ष्मीजीके अनन्त नाम हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उनमें एक वरदवल्लभा भी हैं, काञ्ची श्री वरदराज भगवान्के अभिमत एवं अनुरूप पत्नी होनेके कारण आपका नाम वरद-वल्लभा है। लोकमें देखा जाता है कि राजाओंको राजपत्नियाँ अभिमत न होकर दासियाँ अभिमत होती हैं जो कि राजाओंके अनुरूप नहीं हैं। भगवती वरदवल्लभा वरदराज भगवान्के अभिमत एवं स्वरूपानुरूप हैं और भगवान् भी उनके अभिमत एवं अनुरूप हैं। ऐसी मनोज्ञ अनुरूप पत्नी की स्तुतिसे अवश्य भगवान्की प्रसन्नता होगी इस आशयसे श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी "वरदवल्लभा स्तोत्रमें श्रीं जीकी स्तुति करते हैं। अथवा शक्तिकी सत्ता शक्तिमान्से पृथक् नहीं होती और शक्ति की स्तुति पूजासे शक्तिमान्की भी स्तुति पूजा हो जाती है वैसे ही आचार्यने किया, क्योंकि आचार्य ग्रन्थोंमें लक्ष्मीजीको भगवान्की शक्ति अहन्ता भी कहा गया है। वस्तुतः परमात्माके साथ नित्य संश्लेषको प्राप्त श्री देवी शरणागत चेतन मात्रके पुरुषकार हैं अर्थात् सभी चेतनोंको भगवान् के सामने निवेदन कर कहती हैं कि हे भगवन्! यद्यपि यह चेतन अपराधी है फिर भी आपका ही है इसका उद्धार करें। इस तरह पुरुषकार करनेवाली एवं सहस्र माताओंसे भी वत्सलतर तथा अनन्तकोटि ब्रह्माण्डकी एकमात्र अधिष्ठातृ देवता होनेके नाते चतुःश्लोकीमें भगवती अम्बाकी स्तुति करते हैं, इस स्तोत्रमें भगवान्के समान ही लक्ष्मीजीके वाहन आसन शय्या आदिका वर्णन है, और भगवान्के स्वरूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रूप गुण विभूतियाँ जैसे इयत्तया वाचामगोचर हैं वैसे ही लक्ष्मी जीके भी हैं। अभिप्राय यह है कि जैसे लोकमें पतिका सब ऐश्वर्य पत्नीका होता है, और पत्नीकी भी विभूति पतिकी होती है, क्योंकि लोकमें पति पत्नीकी विभूति विभक्त नहीं होती किन्तु दोनोंकी विभूति परस्पर दोनोंकी है वैसे ही आचार्यने वरदवल्लभा स्तोत्रमें श्री देवीकी स्तुति कर आलवन्दारस्तोत्रमें भगवान्की स्तुति करके विशिष्टको ही उपाय एवं उपेय सूचित किया, और यह भी बताया कि लक्ष्मी पुरुषकार पुरस्सर ही भगवान्की प्रपत्ति एवं प्राप्ति होती है, अस्तु—

इन दोनों स्तोत्रोंमें निगूढ़तम वेदान्तार्थ कूटकूट कर भरे हैं कि जिनका ज्ञानपूर्ण वेदन्ताध्ययनके बिना असम्भव है, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र अनन्त श्री विभूषित श्रीस्वामीजीने बड़े उत्तम ढंगसे निगूढ़ भावोंको हिन्दी भाषा टीका द्वारा अभिव्यक्त किया है, आशा है भक्तवृन्द इससे अवश्य ही लाभ उठायेंगे।

"वरदवल्लभा"का अन्तिम श्लोक भगवान् श्री वरवर मुनीन्द्र स्वामीजीका बनाया हुआ है। श्री सम्प्रदायमें ग्रन्थकारके महोपकार स्मृतिके लिये स्तोत्र पाठके आदिमें प्रबन्ध निर्माताकी स्तुति अर्थात् "तनियन्"का अवश्य पाठ करना चाहिये। और आदर द्योतन करनेके लिये स्तोत्रके अन्तिम श्लोकको दो बार कहना चाहिये। ये दोनों ही स्तोत्र दो बार छप चुके हैं। यह इसका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तृतीय संस्करण है जिसका प्रकाशन जिला रोहतास पोस्ट सोहगी ग्राम सोहगी यज्ञ समितिने किया है। पलामू मण्डलान्तर्गत खैरा राधाकृष्ण मन्दिराध्यक्ष श्री पाद सेवक सुदर्शनाचार्य स्वामीजीके उत्साह तथा प्रेरणासे कार्य निष्पन्न हुआ है। इसलिये उन्हें और समस्त सदस्योंको मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

निवेदक—

श्रीमदौत्तराह जगद्गुरु रामानुजाचार्य वेदान्तमार्तण्ड
यतीन्द्र श्रीरामनारायणाचार्य त्रिदण्डी
स्वामीजी महाराज
कोशलेश सदन
कटरा अयोध्या, फैजाबाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

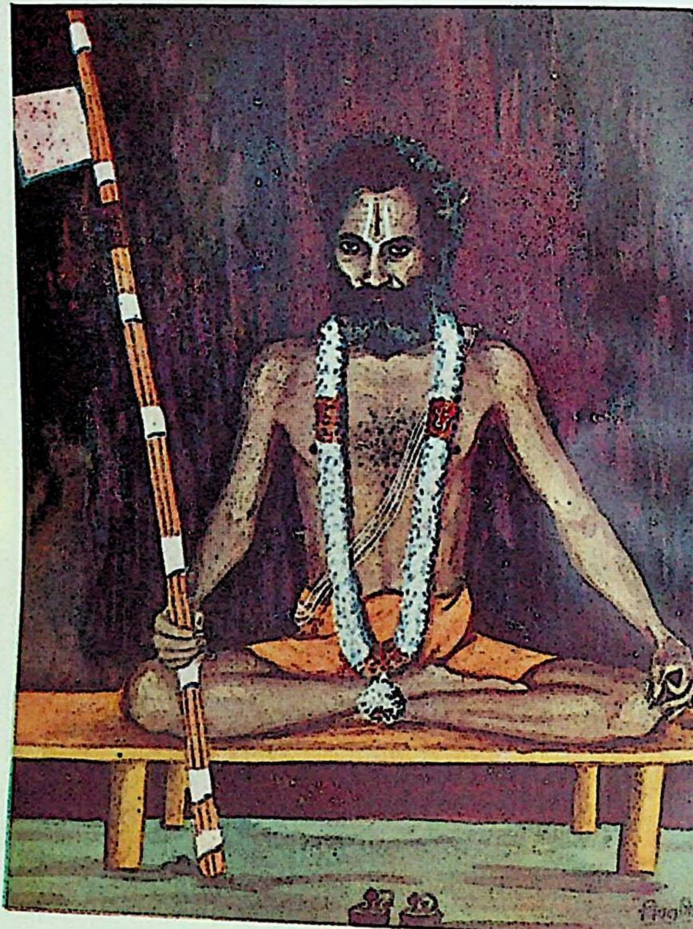

जगद्गुरु भगवदनन्तपादीय श्री मद्विष्वक्सेनाचार्य
श्री त्रिदण्डी स्वामीजी महाराज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्रीयामुनमुनिप्रणीतम्

अथ वरदवल्लभास्तोत्रम्

अन्वयाङ्कोपेतं भावप्रकाशिका च सहितम्

४ ३ २ ५
मूल—कान्तस्ते पुरुषोत्तमः फणिपतिः
६ ७ १० ८ ९ १३
शय्यासनं वाहनं वेदात्मा विहगेश्वरो यवनिका
१२ ११ १५ १४
माया जगन्मोहिनी । ब्रह्मेशादिसुरव्रजस्सद-
१६ १७ १८ १९ २० २२ २१
यितस्त्वद्दासदासीगणः श्रीरित्येव च नाम ते
१ २६ २५ २४ २३
भगवति ! ब्रूमः कथं त्वां वयम् ? ॥ १ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टीका—मानत्वं भगवन्मतस्य महतः पुंसस्तथा निर्णयः तिस्रस्सिद्धय आत्मसंविदखिलाधीशानत-स्त्वाश्रयाः । गीतार्थस्य च संग्रहः स्तुतियुगं श्री-श्रीशयोरित्यमून् यद्ग्रन्थाननुसंदधे यतिपतिस्तं यामुनेयं नुमः ॥ १ ॥

आगमप्रामाण्यनिर्माता महामना श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के मतानुसार कहा है कि—

मत्प्राप्तिं प्रतिजन्तूनां संसारे पततामधः ।
लक्ष्मीः पुरुषकारत्वे निर्दिष्टा परमर्षिभिः ।
ममापि च मतं ह्येतन्नान्यथा लक्षणं भवेत् ॥

(नारदपांचरा०)

संसार में अधःपतित जीवों को हमारी प्राप्ति के लिये महर्षियों ने लक्ष्मीजी को पुरुषकार कहा है, इसलिये हमारा भी यही मत है। इसका दूसरा लक्षण नहीं हो सकता है।

इस कथन के अनुसार भगवत्प्राप्ति के लिये पुरुषकारभूता जगज्जननी महालक्ष्मीजी हैं कि जिसकी स्तुति आचार्य 'वरद-वल्लभास्तोत्र' से करते हुए प्रथम श्लोक में यह कहते हैं कि विलक्षण वैभव एवं अनन्त गुणवाली आपका हम कैसे वर्णन करें ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(हे भगवति !) हे परिपूर्ण षड्गुणवाली माँ ! जिस भगवती के विषय में वृद्धहा० स्मृति में लिखा है कि—

ऐश्वर्यं च तथा वीर्यं तेजः शक्तिरनुत्तमा ॥१६४॥
ज्ञानं बलं यदेतेषां षण्णां भग इतीरितः ।
एभिर्गुणैः पूर्णो यः स एव भगवान्हरिः ॥१६५॥
नित्या च या भगवती प्रोच्यते मुनिसत्तमैः ।
ऐश्वर्यरूपा सा देवी सुभगा कमलालया ॥१६६॥
ईश्वरी सर्वजगतां विष्णुपत्नी सनातनी ।
तस्याः पतित्वाद्धीशस्य भगवानिति चोच्यते १६७

(वृद्धहा० अ० ६)

ऐश्वर्य १, वीर्य २, तेज ३, श्रेष्ठशक्ति, ४, ज्ञान ५ और बल ६ इन छवों को भग कहते हैं। इन छै गुणों से पूर्ण भगवान् नारायण ही हैं। और सब जीवों की स्वामिनी आद्या सुभगा ऐश्वर्यरूपा पद्मालया विष्णुपत्नी वही महालक्ष्मी देवी श्रेष्ठ मुनियों से सर्वदा भगवती कही जाती हैं तथा निश्चय करके महालक्ष्मीजी के पति होने से नारायण भी भगवान् शब्द से कहे जाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि परिपूर्ण ऐश्वर्यादि गुणवाली महालक्ष्मीजी ही हैं। इसलिये हे भगवति ! [पुरुषोत्तमः] क्षर तथा अक्षर से अतीत लोकवेद प्रसिद्ध परम पुरुष, कि जिस पुरुषोत्तम के विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥१६॥
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥
यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

(भगवद्गी० अ० १५)

लोक में दो पुरुष हैं, एक क्षर दूसरा अक्षर बद्ध सम्पूर्ण जीवों को क्षर कहते हैं और मुक्त कूटस्थ जीव को अक्षर कहते हैं ॥१६॥ और इन दोनों से अन्य उत्तम पुरुष हैं जिसको परमात्मा कहते हैं। जो अव्यय परमेश्वर तीनों लोकों में प्रवेश कर धारण-पोषण करता है ॥ १७ ॥ जिससे मैं क्षर से अतीत हूँ और अक्षर से भी उत्तम हूँ इसलिये लोक तथा वेद में पुरुषोत्तम नाम से मैं प्रख्यात हूँ ॥ १८ ॥ अतः पुरुष नारायण (ते) आपके (कान्तः) प्रियपति हैं। क्योंकि श्रीमद्भागवत में लिखा है कि 'वव्रेवरं सर्वगुणैरपेक्षितं रमा मुकुन्दं निरपेक्षमीप्सितम् । श्रीमद्भा० स्क० ८ श्लोक २३ । महालक्ष्मी जी ने सब गुणों से अपेक्षित निरपेक्ष एवं मनोनुकूल नारायण को पतिरूप से स्वीकार किया ॥ २३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यजुर्वेदमें लिखा है कि—

"श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ"

(यजु० अ० ३१ म० २२)

श्री और लक्ष्मी आपकी पत्नी हैं ॥ २२ ॥

तथा लक्ष्मीसूक्त में लिखा है कि—

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
विष्णुप्रियां सखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥

(लक्ष्मी सू० मं० ६)

महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्नीं च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ७ ॥

इन मंत्रों से स्पष्ट होता है कि महालक्ष्मीजी के कान्त पुरुषोत्तम हैं। और (फणिपतिः) फणिराज शेषजी, फणपति के विषय में लिखा है कि—

आदौ जगदाधारः शेषस्तदनुसुमित्रानंदनवेषः ।
तदुपरिधृतहलमुसलविशेषस्तदनंतरमभवद्गुरुरेषः ॥

(यतिराजस्तो० श्लोक २)

आदि में जगदाधार शेष उसके बाद श्रीलक्ष्मण तत्पश्चात् बलदेव उसके बाद जगद्गुरु रामानुजाचार्य हुए हैं ॥ २ ॥

श्रीब्रह्मसंहिता में लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रथमोऽनंतरूपश्च द्वितीयो लक्ष्मणस्तथा ।
तृतीयो बलरामश्च कलौ रामानुजो मुनिः ॥
(रामानुजवैभवस्तो० श्लोक० २१)

कृतयुग में पहला अनंतरूप और त्रेता में दूसरा लक्ष्मण-रूप, द्वापर में तीसरा बलरामरूप तथा कलियुग में चौथा रामानुजमुनिरूप शेषावतार हुआ है ॥ २१ ॥

और भी लिखा है कि—

कल्पान्ते यस्य वक्त्रेभ्यो विषानलशिखोज्ज्वलः ।
संकर्षणात्मको रुद्रो निष्क्रम्यात्ति जगत्त्रयम् ॥
स बिभ्रच्छेखरीभूतमशेषं क्षितिमण्डलम् ।
आस्ते पातालमूलस्थः शेषोऽशेषसुरार्चितः ॥
तस्य वीर्यं प्रभावं च स्वरूपं रूपमेव च ।
नहि वर्णयितुं शक्यं ज्ञातुं वा त्रिदशैरपि ॥

कल्पान्त में जिस फणिपति के मुखों से विषानलशिखोज्ज्वल-संकर्षणनामवाला रुद्र निकलकर तीन लोक को खाता है वह सब देवों से पूजित शेषराज संपूर्ण भूमण्डल को मस्तक पर माला के समान धारण करते हुए पाताललोक के मूल में रहते हैं। भगवद्गीतामें लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनन्तश्चास्मि नागानाम्।

(भगवद्गी० अ० १० श्लोक २९)

अनेक शिरवाले नागोंमें अनन्त नामवाला शेषजी मैं हूँ ॥२६॥

अनंतजी के विषयमें लिखा है कि—

गंधर्वाप्सरसस्सिद्धास्सकिन्नरमहोरगाः।
नान्तं गुणानां गच्छन्ति तेनानन्तोऽयमुच्यते॥

गन्धर्व, अप्सरा, सिद्ध, किन्नर और महोरग जिसके गुणों का अन्त न पावें उस को अनन्त कहते हैं।

तेनेयं नागवर्येण शिरसा विधृता मही।
विभर्ति मालां लोकानां सदेवासुरमानुषाम्।

वह नागराज शिर से इस मही को धारण किये हैं सब लोक के देव, असुर तथा मनुष्य के सहित मालाको वह धारण करते हैं। वह फणिराज शेषजी (शय्या) आपकी शय्या हैं और (आसनम्) आसन हैं। (वेदात्मा) गमन समयमें जिनके पक्षों से वेद की ध्वनि होती है (विहगेश्वरः) पक्षियों के ईश्वर गरुड़जी, वाहन हैं।

वेद के विषय में लिखा है कि—

निश्वासभूता मे विष्णोर्वेदाजाताः सुविस्तराः।
तिलेषुतैलवद्वेदे वेदांतः सुप्रतिष्ठितः॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामवेदाः कतिविधास्तेषां शाखाश्च राघव ।
तासूपनिषदः काः स्युः कृपया वद तत्त्वतः ॥१०॥
ऋग्वेदादिविभागेन वेदाश्चत्वार ईरिताः ।
तेषां शाखा ह्यनेकाः स्युस्तासूपनिषदस्तथा ॥११॥
ऋग्वेदस्य तु शाखाःस्युरेकविंशति सङ्ख्यकाः ।
नवाधिकशतं शाखा यजुषो मारुतात्मज ॥१२॥
सहस्रसंख्या संजाताः शाखा साम्नः परन्तप ।
अथर्वणस्य शाखाः स्युः पञ्चाशद्भेदतो हरे ॥१३॥
एकैकस्यास्तु शाखाया एकैकोपनिषन्मता ।
तासामेकामृचं येन पठ्यते भक्तितो मयि ॥१४॥
स मत्सायुज्यपदवीं प्राप्नोति मुनिदुर्लभाम् ॥१५॥

(मुक्तिको०)

श्रीविष्णुके श्वासभूत सब वेद विस्तार सहित उत्पन्न हुए तिलमें तेलके समान वेदमें वेदांत प्रतिष्ठित हैं। हे रामजी ! वेद कितने हैं और वेदों की शाखायें कितनी हैं तथा उन शाखाओं में कितने उपनिषद् हैं यह कृपा करके मुझसे कहिये ॥ १० ॥ ऋग्वेदादि विभागसे चार वेद कहे गये हैं, उन वेदों की अनेक शाखायें हैं और जितनी शाखायें हैं उतनी ही उपनिषद् हैं ॥११॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...ग्रन्थालय, ...निधि, करौंदी वाराणसी-5

ऋग्वेदकी इक्कीस शाखायें हैं! हे मारुते, यजुर्वेदकी एक सौ नव शाखायें हैं ॥ १२ ॥ तथा सामवेद की हजार शाखायें हैं और अथर्ववेद की पचास शाखायें हैं ॥ १३ ॥ प्रत्येक शाखाओंमें एक-एक उपनिषद् होती है, उनमें से एक ऋचा को भी जो मेरे विषय में भक्ति से पढ़ता है ॥ १४ ॥ वह मुनियों को दुर्लभ मेरी सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करता है ॥ १५ ॥

और भी लिखा है—

'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' (कात्यायन सू०)

मन्त्र और ब्राह्मण इन दोनों का नाम वेद है।

'मन्त्रब्राह्मणमित्याहुः' (बोधायन सू०)

मंत्र और ब्राह्मण भाग को वेद कहते हैं 'तच्चोदकेषु मन्त्राख्या' मीमां० अ० २ पा० १ सू० ३२, 'शेषे ब्राह्मण शब्दः' मी० अ० २पा० १ सू० ३३। प्रेरणा लक्षण श्रुति का नाम ही मन्त्र है। ३२। मन्त्र से शेष वेद ब्राह्मणशब्द से कहा जाता है ॥ ३३ ॥ 'तेषामृग्यत्रार्थवशेन पाद व्यवस्था' मी० अ० २ पा० १ सू० ॥ ३५ ॥ 'गीतिषु सामाख्या' सू०। ३६। 'शेषे यजुः शब्दः'। ३७। जहां पर अर्थवश से पाद की व्यवस्था हो उसे ऋग्वेद कहते हैं। ३५। गीति में सामवेद की ऐसी आख्या होती है। ३६। कहे हुए से शेष में यजुर्वेद ऐसा शब्द कहा जाता है। ३७। वेदात्मा खगनायक हैं क्यों कि लिखा है कि—

सुपर्णोऽसिगरुत्मान् त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुः।

(श्रुति०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे गरुड़ ! तुम गरुत्मान् सुपर्ण हो तेरा त्रिवृत्त स्तोत्र शिर है और गायत्र साम नेत्र है ।

तस्य गायत्री जगती च पक्षावभवताम् उष्णिक् च त्रिष्टुप् च पृष्ठ्यौ अनुष्टुप् च पंक्तिश्च धुर्यौ बृहत्येवोक्तिरभवत् स एतं छंदोरथमास्थाय एतमध्वानमनुसमचरत् ।

(श्रु०)

गरुड़के गायत्री छन्द और जगती छन्द ये दोनों पांख हुए तथा उष्णिक् छन्द और त्रिष्टुभ छन्द ये दोनों पृष्ठ्य हुए और पंक्ति-अनुष्टुप् छन्द ये दोनों धुर्य हुए और निश्चय करके बृहती-छन्द उक्ति हुई वह इस छन्दोमय रथ पर रखकर इस मार्ग से अच्छीप्रकार से विचरा है । गारुड़ोपनिपद् में इस प्रकारके बहुत वर्णन हैं और भी लिखा है कि—

वैनतेयश्च पक्षिणाम् ।

(भगवद्गी० अ० १० श्लोक ३०)

पक्षिओं में विनतासुत गरुड़ मैं हूँ ॥ ३० ॥

सुपर्णोऽसिगरुत्मान् पृष्ठे पृथिव्याः सीद ।

(यजु० अ० १७ मं० ७२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे गरुड़ ! तुम सुन्दर पंखवाला गरुत्मान् हो इससे पृथ्वी के पीठ पर बैठो । ७२ । तो वेदात्मा गरुड़जी आपके (वाहनम्) वाहन हैं । इस चतुःश्लोकी के प्रथम श्लोक में जो 'आसनम्' पद है उसकी 'काकाक्षिन्याय' से फणिपति और विहगेश्वर इन दोनों के साथ योजना की जाती है इससे ऐसा अर्थ होता है कि फणिपति आपके आसन हैं । और खगनायक आपके आसन हैं । इससे आद्यपुराण में लिखा है कि—

भोगप्रिया भोगवती भोगीन्द्रशयनासना ।

इस श्लोकमें स्पष्ट महालक्ष्मीजी का 'भोगीन्द्रशयनासना' इस पद से फणिपति आसनविशिष्ट वर्णन है । और—

अजिताकर्षणा नीतिर्गरुड़ासना ।

इस श्लोकमें स्पष्ट महालक्ष्मी का 'गरुडासना' इस पद से विहगेश्वर आसन विशिष्ट वर्णन है । इससे 'आसनम्' यह पद यहाँ पर उभयान्वयी सिद्ध हो गया । और (जगन्मोहिनी) विचित्रभोग्य भोगोपकरणादिरूप नाना प्रकारके परिणाम को प्राप्त होनेवाली अतएव संसार को मोह करानेवाली (माया) प्रकृति, मायाके विषयमें लिखा है कि—

'मायां तु प्रकृतिं विद्यात्' ।

(श्वेताश्व० ४ मं० १०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मायाको प्रकृति जानो ॥ १० ॥ और—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥४॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥५॥

(भगवद्गी० अ० ७)

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ये आठ प्रकार के प्रकृति के भेद हैं । ४ । इसको अपरा प्रकृति कहते हैं, इससे अन्य मेरी पराप्रकृति जीवभूत तुम जानो कि जिसके द्वारा इस समस्त संसार को मैं धारण करता हूँ ॥ ५ ॥ प्रकृति आपकी (यवनिका) पर्दा है । अर्थात् जैसे पहले पर्दे पर दृष्टि के रुकजाने से भीतरकी वस्तु देखने में नहीं आती है वैसेही विचित्रस्रक् चंदन वनितादिरूप से परिणाम को प्राप्त होनेवाली माया पर दृष्टि के रुकजाने से आपके स्वरूप सर्वत्र रहने पर भी देखने में नहीं आता है । और (सदयितः) अपनी-अपनी स्त्रियों के सहित (ब्रह्मेशादिसुरव्रजः) ब्रह्मा रुद्र आदिक देवों का समुदाय, 'ब्रह्मेशादि' यहाँ पर जो आदि शब्द है उससे—

अग्निर्देवता, वातो देवता, सूर्यो देवता, चंद्रमा देवता, वसवो देवता, रुद्रो देवता,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दित्यो देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पति देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥

(यजु० अ० १४ मं० २०)

अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र, वसु, रुद्र, आदित्य, मरुत, विश्वेदेव, बृहस्पति, इन्द्र, वरुण ये देवता ॥ २० ॥ और—

'तिस्त्र एव देवता इति नैरुक्ता, अग्निः पृथिवी स्थानो वायुर्वेन्द्रोवान्तरिक्षस्थानः सूर्यो द्युस्थानस्तासां महाभाग्यादेकैकस्य अपि बहूनि नामधेयानि भवंति ।

(निरु० दैवतकां० अ० ७ खं० ५)

यह तीन देवता हैं अग्नि देवता पृथिवी स्थान में, वायु देवता और इन्द्र देवता अन्तरिक्ष स्थानमें और सूर्य देवता द्युस्थानमें हैं। इन देवताओं के महाभाग्य होने से एक एक के बहुतसे नाम होते हैं ॥ ५ ॥ तथा—

ऋचः सामानिच्छन्दासि पुराणं यजुषा सह ।
उच्छिष्टाज्ज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रिताः ॥

(अथर्व० कां० ११ प्रपा० अनु० १ मं २४)

सबके अन्त में शेष रहनेवाले श्रीमन्नारायण भगवान् से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋक् साम छन्द और यजुर्वेदके साथ पुराण तथा दिवलोक में रहनेवाले दिविश्रित समस्त देवतागण उत्पन्न हुए ॥ २४ ॥ इन मन्त्रों में वर्णित देवताओं का ग्रहण होता है। तो ब्रह्मा शिव प्रभृति देव समुदाय (त्वद्दासदासीगणः) आपके दास-दासी गण हैं अर्थात् ब्रह्मादिक देवगण आपके दास हैं और सरस्वत्यादिक देवीगण आपकी दासी हैं। यहां पर दास और दासी शब्द भृत्य तथा भृत्या वाचक हैं, क्योंकि लिखा है कि—

भृत्ये दासेय दासेरदास गोप्यकचेटकाः।
नियोज्यकिंकरप्रैष्यभुजिष्यपरिचारकाः ॥
(अमरको० कां० २ वर्ग० १० श्लोक १७)

भृत्य में दासेय दासेरदास गोप्यक चेटक नियोज्य किंकर प्रैष्य भुजिष्य परिचारक इन शब्दों का प्रयोग किया जाता है ॥ १७ ॥ और भी लिखा है कि—

दासो भृत्ये च शूद्रे ज्ञानेऽर्थिनि च धीवरे।
(कां०)

दास शब्द का प्रयोग भृत्य शूद्र ज्ञान अर्थी और धीवर में होता है। इस पूर्वोक्त स्थलमें प्रथमोपस्थित होनेसे दास शब्दका प्रयोग भृत्यमें ही सिद्ध होता है। ब्रह्मादिक देवगण 'जाया पत्योर्न विभागः' इस न्याय से—

दासभूतमिदं तस्य ब्रह्माद्यं सकलं जगत्।
(पद्मपु० उत्तरखं० ६ अ० २२६ श्लोक ९२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नारायण के ब्रह्मादिक समस्त संसार दासभूत हैं ॥ ६२ ॥
और भी लिखा है कि--

दासभूताः स्वतः सर्वे ह्यात्मानः परमात्मनः ।
नान्यथा लक्षणं तेषां वन्धे मोक्षे च विद्यते ॥

(पराशर०)

सब जीवात्मा निश्चय कर के परमात्मा के स्वतः सिद्ध दास हैं, उन जीवात्माओं के वन्धन में या मोक्ष में अन्य लक्षण नहीं है।

नैसर्गिकं हि सर्वेषां दास्यमेव हरेः सदा ।
स्वाम्यं परस्वरूपस्य दास्यं जीवस्य सर्वदा ॥

(वृद्धहारी० अ० १ श्लोक १७)

स्वाभाविक सब जीवों के प्रति नारायण की दासता सिद्ध है, इससे नारायण में स्वामित्व और जीव में दासत्व सदा अनुसंधान करना चाहिये ॥ १७ ॥

यजुर्वेदमें भी लिखा है कि—

'यस्यायं विश्व आर्यो दासः' ।

(यजु० अ० ३३ कं० ८२)

जिस नारायण के यह विश्व और आर्यजन दास हैं ॥ ८२ ॥

इन प्रमाणों करके सिद्ध नारायण का दास महालक्ष्मीजी का भी दास ही है। महालक्ष्मीजीके विषयमें ऋग्वेदमें लिखा है कि-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहं मित्रावरुणोभा विभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥ १ ॥

अहं सोममाहनसं विभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥ २ ॥ अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । तां मा देवाव्यदधुः पुरुत्रा भूरि-स्थात्रां भूयोविशयंतीम् ॥ ३ ॥ अहमेव स्वय-मिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥ ४ ॥ अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हंतवाऊं । अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आविवेश ॥ ६ ॥

(ऋग्वे० अष्ट० ८ मण्ड० १० अ० १० सू० १२५)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं मित्रदेव, वरुणदेव, इन्द्रदेव, अग्निदेव और दोनों अश्वनी-कुमार देवों को धारण तथा पोषण करती हूँ ॥ १ ॥ मैं सब ओर से मारनेवाला सोमदेव, त्वष्टादेव, पूषादेव और भगदेव का धारण तथा पोषण करती हूँ और जो यजमान सुन्दर हविष्य सोम-इन्द्रादिदेवों के लिये देता है उसके लिये मैं धन देती हूँ ॥ २ ॥ मैं सब संसार की ईश्वरी तथा मिलनेवाली, ज्ञानवाली प्रथम यजनीय देवताओं में अनेक तरफ से स्थित होनेवाली अनेक तरफ से प्रवेश कराती हुई मेरा ही देव लोग अनेक जगह विधान करते हैं ॥ ३ ॥ मैं ही स्वयं यह कहती हूँ जो कि देवों से तथा मनुष्यों से सेवित है, जिसको मैं चाहती हूँ उसको उत्तम बनाती हूँ और उसको ही ब्रह्मा, ऋषि और मेधावी बनाती हूँ ॥ ४ ॥ मैं रुद्र के धनुष को विस्तारयुक्त करती हूँ ब्रह्म-द्वेषियों के और हिंसकोंके मारनेके लिये तथा मैं ही उनके लिये मदयुक्त करती हूँ तथा मैं दिवलोक में और पृथिवी में प्रवेश करके व्याप्त हो रही हूँ ॥ ५ ॥ इन प्रमाणों से सिद्ध हो गया कि सब संसार महालक्ष्मीजी का दास दासी-गण है। सरस्वती देवी श्रीदेवी की दासी हैं क्यों कि लिखा है कि--

लोके वनस्पति बृहस्पति तारतम्यं
यस्याः कटाक्षपरिणाममुदाहरन्ति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सा भारती भगवती तु यदीय दासी
तां देवदेव महिषीं श्रियमाश्रयामः ॥

(श्रीस्तव० श्लोक ९)

जिस सरस्वती की कृपा से लोक में वनस्पति के समान जड़ बृहस्पति के तारतम्य को प्राप्त करता है ऐसा ऋषि लोग कहते हैं वह सरस्वती भगवती जिसकी दासी हैं उस देवदेवमहिषी श्रीदेवी को हम सब आश्रयण करते हैं। और (श्रीः) श्री (इति) ऐसा (एव) निश्चय करके (च) तो (ते) आपका (नाम) नाम है । क्योंकि लिखा है कि—

'महालक्ष्म्याः श्री नाम'

(मुमुक्षुप०)

महालक्ष्मीजी का श्री नाम है । श्री के विषयमें लिखा है कि—

श्रयंतीं श्रीयमाणां च शृण्वन्तीं शृणतीमपि ।
शृणाति निखिलं दोषं शृणोति च गुणैर्जगत् ॥
श्रीयते चाखिलैर्नित्यं श्रयते च परं पदम् ।

इस प्रकार की निरुक्ति है तो यह श्री शब्द अनेक प्रकार से सिद्ध होता है । इसके विषय में वार्त्तामालामें लिखा है कि—

श्रीरिति नाम श्रिञ् सेवायामिति धातोः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीयते श्रयत इति व्युत्पत्तिद्वयसिद्धत्वात्सेवा-कर्तृकर्मणी वदति ॥

(वार्त्तामा० वार्त्ता० १२१)

श्री यह महालक्ष्मीजी का नाम है, यह श्री शब्द भ्वादि में पठित 'श्रिञ् सेवायां' इस धातु से 'श्रीयते' और 'श्रयते' इस प्रकार की दो व्युत्पत्तिसे सिद्ध होने से सेवा के कर्त्ता और कर्म को श्रीशब्द कहता है ॥ १२१ ॥ अर्थात् 'श्रिञ्' सेवायाम् इस धातु से श्रीयते अथवा श्रयते इस प्रकार की व्युत्पत्ति करने पर—

क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणांदीर्घो-ऽसंप्रसारणं च ।

इस वार्तिक से निष्पन्न श्री शब्द है । इसमें 'श्रीयते—इति श्रीः' इस कर्मणि व्युत्पत्तिसे समस्त चेतनों करके आश्रिता अथवा सेविता लक्ष्मी जी का बोध होता है । और 'श्रयते इति श्रीः' इस कर्तरि व्युत्पत्ति से भगवान् का आश्रयण करनेवाली लक्ष्मीजी का बोध होता है और भी लिखा है कि—

शृणोतीति श्रावयतीति च श्रीरिति व्युत्पत्ति-भ्यामनुष्ठानमुच्यते शृणोतीति श्रवणमुच्यते ।

(वार्तामा० वा० १२१)

'शृणोति' इस प्रकार की और 'श्रायवति' इस प्रकार की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्युत्पत्ति करने से भ्वादि में पठित 'श्रु श्रवणे' इस धातु से श्री यह प्रयोग 'उणादयो बहुलम्' व्या० अ० ३ सू० १ । इस सूत्रसे सिद्ध होता है । श्रृणोति' और श्रावयति इन दो व्युत्पत्तियों से अनुष्ठान कहा जाता है । 'श्रृणोति' ऐसी व्युत्पत्ति से श्रवण कहा जाता है ॥ १२१ ॥ इसी प्रकार से और अर्थ भी जानना चाहिये । और श्रीसूक्तमें लिखा है कि—

ईश्वरींसर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।

(श्रीसू० मं० ९)

सब जीवों की स्वामिनी उस श्रीदेवीजी को यहांपर मैं बुलाता हूँ । तो आपका श्री ऐसा नाम है तब फिर (वयम्) हम सब (त्वाम्) तुमको (कथम्) कैसे (ब्रूमः) कथन कर सकते हैं, क्योंकि लिखा है कि—

ब्रह्माद्याः सकला देवा मुनयश्च तपोधनाः ।
त्वां स्तोतुमपि नेशानास्त्वत्प्रसादलवं विना ॥

हे जगज्जननि ! ब्रह्मा आदिक समस्त देवताऔर तपोधन मुनि सब आपकी प्रसन्नताके लेश के बिना आपकी स्तुति करने के लिये भी नहीं समर्थ हो सकते हैं । इससे हम आपकी स्तुति करने के लिये कैसे समर्थ हो सकते हैं ? ॥ १ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वाराणसी-5

३ ४ ८ १२ १३
मूल—यस्यास्ते महिमानमात्मन इव
११ १० ९ १६ १७ १५ १४ ७
त्वद्वल्लभोऽपि प्रभुर्नालं मातुमियत्तया निरवधिं
६ ५ १८ १९ २० २१ २२
नित्यानुकूलं स्वतः ॥ तां त्वां दास इति प्रपन्न
२३ २४ ३९ ३० २९ १
इति च स्तोष्याम्यहं निर्भयो लोकैकेश्वरि
२ २५ २७ २६ २८
लोकनाथदयिते दांते दयांते विदन् ॥ २ ॥

टीका—(हे लोकैकेश्वरि) हे लोक के प्रधानेश्वरि ! क्यों कि वृद्ध हारीत स्मृति में लिखा है कि—

श्रीरस्येशाना जगतो विष्णुपत्नीति वै श्रुतिः ।
(वृद्धहा० अ० ६ श्लोक ६७)

श्रीदेवीजी इस संसार की ईश्वरी हैं क्योंकि निश्चय करके विष्णुपत्नी उनको श्रुति कही है ॥ ६७ ॥ हे लोकैकेश्वरि (हे लोकनाथदयिते) हे जगन्नाथवल्लभे ! लोकनाथदयिता के विषयमें लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सकल भुवनमाता संततं श्रीः श्रियै नः ।

(सौभाग्य लक्ष्म्यु० मं० १)

सम्पूर्ण भुवन की माता श्रीदेवीजी सर्वदा हम सबों को संपत्तिके लिये हों ॥ १ ॥ और—

सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशु-
कगन्धमाल्यशोभे । भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे
त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीदमह्यम् ॥

(लक्ष्मीसू० मं० १)

इस मन्त्र में स्पष्ट हरिवल्लभे पद है इससे ज्ञात होता है कि श्री लक्ष्मी नारायण की वल्लभा हैं । और भी लिखा है कि—

त्वं माता सर्वलोकानां सर्वलोकेश्वरप्रिये ।

(वृद्धहा० अ० ४ श्लोक १३)

हे सर्वलोकेश्वरप्रिये ! सब लोकों की तुम माता हो ॥ १३ ॥ हे लोकनाथदयिते । (यस्याः) जिस (ते) आपकी (स्वतः) स्वयं (नित्यानुकूलम्) नित्य अनुकूल (निरवधिम्) अवधि-रहित (महिमानम्) महिमा को,

अम्बाजी के विषय में वेदार्थ-संग्रह में भी लिखा कि—

अनवधिकमहिमा महिषी ।

(वेदार्थसं०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अवधिशून्य महिमावाली महिषी महालक्ष्मीजी हैं। उस महालक्ष्मी जी की महिमा को (प्रभुः) सर्वविषयक ज्ञानशक्त्यादियुक्त परम समर्थ। जिस प्रभु के विषयमें लिखा कि—

महान्प्रभुर्वै पुरुषः सत्त्वस्यैष प्रवर्त्तकः।

(श्वेताश्व० अ० ३ मं० १२)

यह महान् पुरुष प्रभु निश्चय कर के सत्त्वगुण के प्रवर्त्तक हैं॥ १२॥

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं
तं देवतानां परमं च दैवतम्।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्-
विदाम देवं भुवनेशमीड्यम्॥७॥
न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च॥८॥
न तस्य कश्चित्पतिरस्ति लोके
न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ॥९॥

स विश्वकृद्विश्वविदात्मयोनि-
र्ज्ञः कालकालो गुणी सर्वविद्यः ।
प्रधान क्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः
संसार मोक्षस्थितिबन्धहेतुः ॥ १६ ॥

(श्वे० अ० ६)

समस्त मालिकों के बड़े मालिक तथा इन्द्रादि देवों के भी देव प्रजापतियों के रक्षक और ब्रह्मादि देवों से परे सबके स्तुति करने योग्य भुवनों के स्वामी उस परदेव को हम सब प्राप्त करें ॥७॥ उस परदेव के प्राकृत शरीर एवं इन्द्रियाँ नहीं हैं तथा उसके बराबर या अधिक कोई नहीं है उसकी पराशक्ति अनेक प्रकार की सुनी जाती है, ज्ञान-बल सहित क्रियायें भी उनमें स्वाभाविक हैं ॥ ८ ॥ उस परमेश्वर का रक्षक लोक में कोई नहीं है, न कोई उसका स्वामी है और न तो उसका लिङ्ग है, वह सबका कारण है तथा इन्द्रियों के स्वामियों का भी नियन्ता है और उस परमात्मा का न कोई उत्पादक है न कोई मालिक है ॥ ९ ॥ वह परमात्मा विश्व का कर्ता तथा विश्व को जाननेवाला आत्मयोनि ज्ञाता कालों का भी काल अनन्त गुणयुक्त एवं सर्ववेत्ता है, प्रधान तथा जीवात्माओं का पति, गुणों का प्रेरक और संसार के मोक्ष, बन्धनका निदान कारण है ॥ १६ ॥ इन प्रमाणों से परम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समर्थ होकर (अपि) भी (त्वद्वल्लभः) आपके वल्लभ प्रियपति नारायण श्रीवल्लभ नारायण हैं, यह लिखा है कि—

श्रीवल्लभेति वरदेति दयापरेति
भक्तप्रियेति भवलुण्ठनकोविदेति।
नाथेति नागशयनेति जगन्निवासे-
त्यालापिनं प्रतिपदं कुरु मां मुकुंद॥

(मुकुन्द० श्लोक १)

इस श्लोक में स्पष्ट श्रीवल्लभ शब्द आया है। अतः आपके प्रिय पति नारायण (आत्मनः) अपनी (इव ; महिमा के सदृश (इयत्तया) इयत्ता कर के अर्थात् महालक्ष्मी जी की इतनी ही महिमा है ऐसा परिच्छेद कर के (मातुम्) तौलने के लिये (न) नहीं (अलम्) समर्थ हो सकते हैं। इस द्वितीय श्लोक में 'अपि' पद है वह अनुक्त समुच्चयार्थ भी है इससे ऐसा भी अर्थ होता है, कि आप भी अपनी महिमा को इयत्ता कर के तौलने के लिये नहीं समर्थ हो सकती हैं। इसीसे श्रीस्तव में लिखा है कि—

देवि त्वन्महिमावधिर्न हरिणा नापि त्वया ज्ञायते यद्यप्येवमथापि नैव युवयोः सर्वज्ञता हीयते। यन्नास्त्येव तदज्ञतामनुगुणां

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सर्वज्ञताया विदुर्व्योमांभोजमिदन्तया खलु विदन् भ्रांतोऽयमित्युच्यते ।

(श्रीस्तव० श्लोक ८)

हे देवि ! तेरी महिमा की सीमा को नारायण और नारायण की महिमा की सीमा को तुम भी नहीं जानती हो परस्पर महिमा की अवधि न जानने पर भी आप दोनों की सर्वज्ञता की हानि नहीं है क्योंकि जो वस्तु नहीं है उसको नहीं जानना ही सर्वज्ञता के अनुगुण हैं। आकाश के फूल को इदन्तया जानने वाला निश्चय ही भ्रांत है। ऐसा कहा जाता है ॥ ८ ॥ (ताम्) उस निस्सीम महिमावाली (त्वाम्) जगज्जननी ! तुम्हारा (दासः) सेवक मैं हूँ, क्योंकि लिखा है कि—

दास्यं स्वरूपं सर्वेषामात्मनां सततं हरेः ।

(वृद्धहा० अ० ६ श्लोक ८१)

सर्वदा सब जीवों का नारायण की दासता ही स्वरूप है ॥ ८१ ॥

मोहाद्दास्यं विना विष्णोः किञ्चित्कर्म समाचरेत् ।
न तस्य फलमाप्नोति तामसीं गतिमश्नुते ॥

(वृद्धहा० अ० ८ श्लोक ६१)

मोह से विष्णु भगवान् की दासता के बिना जो कुछ कर्म करता है उसका फल नहीं प्राप्त होता है और तामसी गति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को प्राप्त करता है ॥ ६१ ॥ अतः आचार्यने कहा है कि दास मैं हूँ (इति) इस हेतु से (च) और (प्रपन्नः) प्रपन्न मैं हूँ, प्रपन्न के विषय में लिखा है कि—

विहाय चान्यत्परमं दयालुं प्राप्यं समर्थं
निरपायमीश्वरम् । उपायमेतेऽध्यवसीय
सुस्थिता ज्ञेयाः प्रपन्नाः सततं हरिप्रियाः ॥

जो लोग अपने ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग में उपायता बुद्धि को छोड़कर भगवत्प्राप्ति के लिये परमदयालु प्राप्य अर्थ अपायरहित केवल नारायण को ही उपाय मानते हैं सर्वदा हरिप्रिय उन लोगों को ही प्रपन्न जानना ॥

प्रपन्नश्चापि दृप्तः स तथा चार्त इति द्विधा ।
शरीरस्थिति पर्यंतमाद्योऽत्रैव यथोचितम् ॥
प्राप्तदुःखादिभुञ्जानः शरीररांतेऽवसीय च ।
महाबोधोऽतिनिश्वासो मोक्षसिद्धिमवस्थितः ॥

और प्रपन्न भी दो प्रकार के हैं एक दृप्त और दूसरा आर्त्त उनमें से दृप्त प्रपन्न सांसारिक दुःखों से नहीं घबराता हुआ शरीरपात पर्यंत प्रारब्ध दुखों को भोगकर देहांतकाल में परमधाम को प्राप्त होता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थात्योऽसहमानस्तत् क्षणमेव तु संसृतिम् ।
तथैव भगवत्प्राप्तौ सत्त्वरस्वांत उच्यते ॥

और जो प्रपन्न संसार के संबंध को एकक्षण भी नहीं सहता और भगवत्प्राप्ति में बड़ी त्वरा कर रहा है उसको आर्त्तप्रपन्न कहते हैं। तो प्रपन्न अर्थात् शरणागत मैं हूँ (इति) इस कारण से (दांते) दीनावस्थापन्न के विषय में, अथवा दांतशब्द यहां पर प्रश्रितमात्रपरक है, इससे प्रश्रितजन के विषय में। क्योंकि लिखा है कि—

धर्मनित्ये महाबुद्धौ ब्रह्मण्ये सत्यवादिनि ।
प्रश्रिते दानशीले च सदैव निवसाम्यहम् ॥

नित्यधर्म में, श्रेष्ठबुद्धि में, ब्रह्मण्य में, सत्यवादी में, प्रश्रित में और दानशील में सर्वदा मैं निवास करती हूँ। तो दांतजन के विषय में (ते) मातृत्व प्रयुक्त वात्सल्यातिशयवाली आपकी (दयाम्) दयाको (विदन्) जानता हुआ (निर्भयः) भयसे रहित (अहम्) मैं (स्तोष्यामि) स्तुति करता हूँ। दीनावस्थापन्न महाअपराधी जयन्त काक के विषय में जाना जाता है कि—

विरराद स्तनांतरे ।

(वा० रा० सु० काण्ड स० ३८ श्लोक २२)

इस श्लोक के अनुसार आपके साथ अत्यन्त अपराध किया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
आम्नाय-ग्रन्थालय, भारतनिधि, करौंदी वाराणसी-5

परन्तु इस काक के ऊपर दया करके आप जो कही हैं वह स्पष्ट लिखा है कि—

प्राणसंशयमापन्नं दृष्ट्वा सीताथ वायसम् ।
पाहि पाहीति भर्तारमुवाच दयया विभुम् ॥

(पद्मपु० उत्तरखं० ६ अ० २४२ श्लोक २०७)

प्राण के संबंध में संकट को प्राप्त जयंत काक को देखकर श्रीसीताजी दया से विभु श्रीरामजी से कहीं कि हे स्वामिन्! आप इस काक की रक्षा कीजिये ॥ २०७ ॥ ऐसी दया को जानता हुआ मैं निर्भय स्तुति करता हूँ और घोर राक्षसियोंके विषय में लिखा हैं कि रावणकी पराजय और श्रीरामजी के विजय को स्वप्न में देखनेवाली त्रिजटा के वाक्य को सुनकर, सभी राक्षसियाँ डर कर बोली ॥ ७ ॥

सर्वा एवाब्रुवन्भीताः ।

(वा० रा० सुं० काण्ड ५ स० २७ श्लोक ७)

इस प्रमाणसे अत्यन्त भयभीत राक्षसियों के प्रति श्रीसीता जी कही हैं कि—

यदितत्तथ्यं भवेयं शरणं हि वः ।

(वा० रा० सुं० काण्ड ५ स० २७ श्लोक ४८)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यदि हमारे स्वामी का विजय हो जायेगा तो तुम लोगों की मैं रक्षा करूँगी ।। ४८ ।। ऐसा अभय प्रदान करके फिर रावण का वध होने पर शुभवृत्तांत सुनाने के लिये आये हुए महावीरजी ने राक्षसियों का चित्रवध करने के लिये मुझे सौंप दो ऐसा कहा तब श्रीसीताजी कहीं कि—

राजसंश्रयवश्यानां कुर्वतीनां पराज्ञया ।।३६।।
विधेयानां च दासीनां कः कुप्येद्वानरोत्तम ।
भाग्यवैषम्यदोषेण पुरस्ताद्दुष्कृतेन च ।।३७।।
मयैतत्प्राप्यते सर्वं स्वकृतं ह्युपभुज्यते ।
मैवं वद महबाहो दैवी ह्येषा परागतिः ।।३८।।
प्राप्तव्यं तु दशायोगान्मयैतदिति निश्चितम् ।
दासीनां रावणस्याहं मर्षयामीह दुर्बला ।।३९।।
आज्ञप्ता राक्षसेनेह राक्षस्यस्तर्जयंति माम् ।
हते तस्मिन्नकुर्वंति तर्जनं मारुतात्मज ।।४०।।
अयं व्याघ्रसमीपे तु पुराणोधर्मसंहितः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऋक्षेणगीतः श्लोकोऽस्ति तं निबोध प्लवङ्गम् ।४१।
न परः पापमादत्ते परेषां पापकर्मणाम् ।
समयो रक्षितव्यस्तु संतश्चारित्रभूषणम् ॥४२॥
पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणामथापि वा ।
कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति ॥४३॥
लोकहिंसाविहाराणां क्रूराणां पापकर्मणाम् ।
कुर्वतामपि पापानि नैव कार्यमशोभनम् ॥४४॥
(वा० रा० युद्ध० कांड ६ सं० १४३)

राजसंश्रित अतएव राजा के अधीन दूसरे की आज्ञा से करनेवाली ॥ ३६ ॥ इन रावण की दासियों पर हे श्रेष्ठवानर ! कौन क्रोध करे। विषम भाग्य के दोष से और पहले किये हुए बुरा कर्म से ॥ ३७ ॥ मैं यह क्लेश पाती हूं, क्योंकि निश्चय करके अपना ही किया भोगा जाता है। हे महाबाहो ! ऐसा मत कहो यह दैवी परागति है ॥ ३८ ॥ अपनी दशा के योग से दुःख पाती हूँ यह मुझे निश्चय है, अतः यहाँ दुर्बल रावण की दासियों की मैं सहती हू ॥ ३९ ॥ हे पवनसुत ! यहाँ पर रावण की आज्ञा पाकर ये राक्षसियाँ मुझको डरवाती थीं, रावण के मरने पर नहीं डरवाती हैं ॥ ४० ॥ वाघ के समीप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में यह धर्मयुक्त पुराना श्लोक भालूने गाया है। हे महावीर! तुम उस श्लोक को मुझसे जानो ॥ ४१ ॥ पापकर्मवाले दूसरे के पाप को दूसरा नहीं ले सकता है यह प्राचीन आचार रक्षा करने योग्य है क्योंकि॰ सन्त चरित्र भूषण हैं ॥ ४२ ॥ पापी हों या अच्छे हों या मारने योग्य हों परन्तु आर्य पुरुष को दया करनी ही चाहिये क्योंकि ऐसा कोई नहीं है जो कि अपराध न किया हो ॥ ४३ ॥ लोक में हिंसा में विहार करनेवाले और पापकर्मवाले हिंसक जीवों का पाप करते हुए भी उसका कार्य अशोभन नहीं है ॥ ४४ ॥ इस प्रकार से अपनी पहली प्रतिज्ञा के अनुसार अत्यन्त अपराध करनेवाली राक्षसियों की आपने रक्षा की है। इस विषय में पराशर भट्टाचार्य्यजी ने भी कहा कि—

मातर्मैथिलि राक्षसीस्त्वयि तदैवार्द्रापराधास्त्वया रक्षन्त्या पवनात्मजाल्लघुतरा रामस्य गोष्ठी कृता। काकं तं च विभीषणं शरणमित्युक्तिक्षमौ रक्षतः सानः सान्द्रमहागसः सुखयतु क्षांतिस्तवाकस्मिकी ॥

(श्रीगुणरत्नको० श्लोक ५०)

हे मातर्मैथिलि ! तात्कालिक अपराध करनेवाली राक्षसियों की महावीरजी से रक्षा करनेवाली आपको कृपा की अपेक्षा शरणागत जयंत कौवे की और विभीषण की रक्षा करनेवाले श्री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामजीकी दया लघु है वह आपकी निर्हेतुक कृपा अत्यन्त महापापी मादृशजनोंको सुखी करें ॥५०॥ ऐसे दान्त के विषय में जगज्जननी आपकी निःस्वार्थ दया को जानता हुआ निर्भय होकर मैं स्तुति करता हूँ ॥ २ ॥ अब सिद्धित्रय निर्माता श्रीयामुनाचार्य स्वामी जी तृतीय श्लोकमें यह कहते हैं कि परमेश्वरको अपनेमें उत्पत्यादि के कारणता की पूर्ति महालक्ष्मी देवी जी की कृपा कटाक्ष से होती है ।

२ ३
मूल—ईषत्त्वत्करुणानिरीक्षणसुधासन्धु-
६ ९ ७ ८ १ ४
क्षणाद्रक्ष्यते नष्टं प्राक्तदलाभतस्त्रिभुवनं सम्प्रत्य-
५ १५ १६ १७ १०
नन्तोदयम् । श्रेयो न ह्यरविन्दलोचनमनः
११ १३ १२
कांताप्रसादादृते संसृत्यक्षरवैष्णवाध्वसु नृणां
१८ १४
संभाव्यते कर्हिचित् ॥ ३ ॥

हे जगज्जननि । (त्रिभुवनम्) स्वर्ग, पाताल, मृत्युलोक जो यह समस्त संसार है वह (ईषत्) थोड़ा-सा यत्किंचित (त्वत्करुणानिरीक्षणसुधासन्धुक्षणात्) प्रणिपातप्रसन्नाक्षिप्रसादिनी

३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आपको करुणापूर्वक निरीक्षण रूप अमृत के सिंचन होने से। क्योंकि लिखा है कि—

नमामि कमलां क्षान्तिं क्षमां क्षीरोदसंभवाम्।
अनुग्रहपरामृद्धिमनघां हरिवल्लभाम् ॥

(अष्टोत्तरसहस्रनामस्तो०)

कमला क्षांति क्षमा क्षीरोदसंभवा अनुग्रहपरा ऋद्धि अनघा हरिवल्लभा महालक्ष्मी जी को साष्टांग करता हूँ। इस श्लोक में स्पष्ट अनुग्रहपरा महालक्ष्मी जी का वर्णन है। मंकणसंहिता में लिखा है कि—

पद्मे स्थिता पद्मवर्णा पद्मनाभप्रिया शुभा ।
सदानुग्रहसम्पन्ना सा मे देवी प्रसीदतु ॥

(मंकण सं०)

कमल पर स्थित पद्मवर्णा पद्मनाभप्रिया शुभा सदा अनुग्रह-सम्पन्ना वह महालक्ष्मी देवी हमारे ऊपर प्रसन्न हों।

सामर्ग्यजुर्मयीं देवीं वेदगर्भां मनस्विनीम् ।
लोकेशेशविभूतीनां कारणं यन्निरीक्षणम् ॥

(मङ्कणसंहि०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साम ऋक् यजुर्मयी वेदगर्भा मनस्विनी महालक्ष्मी देवी को भजो जिसका निरीक्षण नारायण भगवान् की विभूति का कारण है। इससे आपकी करुणापूर्वक निरीक्षणरूप अमृत के सिंचन से (संप्रति) इस समय (अनन्तोदयम्) अनन्त उदयवाली होकर (रक्ष्यते) रक्षित हो रहा है। क्योंकि इस विषय में काश्यप ने कहा है कि—

ब्रह्माद्याश्च सुराः सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ।
एधन्ते त्वत्पदच्छायामाश्रित्य कमलेश्वरि ॥

हे कमलेश्वरि देवि ! ब्रह्मादिक सभी देवगण और तपोधन मुनिगण आपके चरणारविन्द की छाया का आश्रयण करके ही वृद्धिको प्राप्त करते हैं। जो यह संसार (प्राक्) पहिले आपकी उपेक्षा समय में (तदलाभतः) आपके करूणापूर्वक निरीक्षणरूप अमृतसिंचन के लाभ नहीं होने से (नष्टम्) नष्ट हो रहा था। इस विषय में श्रीवत्सांक मिश्रजी ने भी कहा है कि—

यस्याः कटाक्षमृदुवीक्षणवीक्षणेन,
सद्यस्समुल्लसितपल्लवमुल्ललास ।
विश्वं विपर्ययसमुत्थविपर्ययं प्राक्,
तां देवदेवमहिषीं श्रियमाश्रयामः ॥ १० ॥

(श्रीस्त० श्लोक १०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिस महालक्ष्मी के कारुण्यपूर्ण कोमल कटाक्षपात के वीक्षण से यह संसार शीघ्र ही नवकिसलय के समान उल्लास को प्राप्त है और इससे पहिले आपकी कृपाकटाक्षपात के लाभ न होने से यह संसार इससे विपरीत नष्ट हो गया था, उस देवदेव महिषी महालक्ष्मी जी का हम सब आश्रयण करते हैं ॥ १० ॥ (अरविंद लोचन मनः कांताप्रसादात्) कमल के समान नेत्रवाले श्री-मन्नारायण के मन को अति कमनीय रूपगुणादिवाली महालक्ष्मी की प्रसन्नता के (ऋते) बिना, नारायण भगवान् कमलनयन हैं। क्योंकि लिखा है कि—

तस्य यथा कप्यासं पुण्डरीकमेवमक्षिणी ।

(छां० प्रपाठ० १ खं० ६ मं० ७)

उस नारायण के दोनों नेत्र सूर्य की किरणोंसे विकसित कमल के समान हैं ॥ ७ ॥ वेदार्थ संग्रह में लिखा है कि—

गम्भीराम्भस्समुद्भूतसुमृष्टनालरविकरवि-
कसित पुण्डरीकदलामलायतेक्षणः ॥

(वेदा०)

गम्भीरजल से उत्पन्न सूर्य की किरण से विकसित सुन्दर नाल लगे हुए कमल के निर्मलदल के समान विस्तृत नेत्रवाले और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वंदे सर्वलो-
कैक नाथम् ॥

(पाण्डवगी० श्लोक ५)

पुण्ययुक्त कमल के समान आयत नेत्रवाले सब लोकों के एक ही नाथ विष्णु भगवान् का मैं अभिवादन या स्तुति करता हूँ ॥ ५ ॥ तो कमल नयन के मनोनुकूल कांता के प्रसाद के विना (नृणाम्) नरों के (संसृत्यक्षरवैष्णवाध्वसु) यहां पर संसृति शब्द पुरुषार्थ के साथ उच्चरित होने और परिशेष से ऐश्वर्यपरक है अतः संसृति पद से त्रिवर्गान्त भूत ससीमअभिमत हैं तथा अक्षर शब्द प्रत्यगात्मा अनुभव परक है और वैष्ण-वाध्व शब्द गतिविशेष द्वारा भगवत्प्राप्तिपरक है। संकलित अर्थ यह हुआ कि संसार का ऐश्वर्य कैवल्य भगवत्प्राप्ति भगवत कैंकर्य के मार्ग में (कर्हिचित्) कभी भी (श्रेयः) कल्याण (न) नहीं (हि) निश्चय करके (संभाव्यते) संभावित है क्योंकि लिखा है कि—

यामालम्ब्य सुखेनेमं दुस्तरं हि गुणोदधिम् ।
निस्तरन्त्यचिरेणैव व्यक्तध्यानपरायणाः ॥

(श्रीसात्वतसं०)

व्यक्त ध्यानपरायणजन जिस महालक्ष्मी जी का अवलंब लेकर दुस्तर गुणोदधि इस संसार को सुख से जल्दी पार हो जाते हैं। और भी लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सर्वकामप्रदां रम्यां संसारार्णवतारिणीम् ।
क्षिप्रप्रसादिनीं लक्ष्मीं शरण्यामनुचिंतयेत् ॥

सर्वकामप्रदा रम्या संसारार्णवतारिणी क्षिप्रप्रसादिनी शरण्या महालक्ष्मी जी का ध्यान करे। इससे सिद्ध हो गया कि महालक्ष्मी जी का ध्यान करने योग्य है। चतुःश्लोकी के तृतीय श्लोक में 'श्रेय' पद आया है कि जिसके विषय में कठोपनिषद् में लिखा है कि—

अन्यच्छ्रेयोऽन्यदुतैव प्रेयस्ते उभे नानार्थे
पुरुषं सिनीतः । तयोः श्रेय आददानस्य साधु
भवति हीयतेऽर्थाद्यउप्रेयो वृणीते ॥

(कठो० अ० १ वल्ली २ मं०)

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीत्य
विविनक्ति धीरः । श्रेयो हि धीरोऽभिप्रेयसो
वृणीते प्रेयो मंदो योगक्षेमाद्वृणीते ॥ २ ॥

श्रेय भिन्न है और प्रेय भिन्न है, ये दोनों नाना अर्थ में पुरुष को बाँधते हैं, इन दोनों में श्रेय को ग्रहण करनेवाला अच्छा होता है और जो प्रेय को स्वीकार करता है वह अर्थ से रहित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो जाता है ॥ १ ॥ श्रेय और प्रेय ये दोनों मनुष्यको प्राप्त करते हैं, धीर पुरुष उन दोनों को विचार करता है और निश्चय करके अभिप्रेय से पृथक् करके श्रेय को ही अङ्गीकार करता है, और मंदपुरुष योगक्षेम के लिये प्रेय को स्वीकार करता है ॥ २ ॥ भगवद्गीता में लिखा है कि—

न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ।

(भगवद्गी० अ० १ श्लोक ३१)

मैं संग्राम में स्वजन बंधु को मारकर श्रेय को नहीं देखता हूँ ॥ ३१ ॥ पूर्वोक्त श्रेय बिना महालक्ष्मी जी की प्रसन्नता से नहीं प्राप्त होता है और चतुःश्लोकी के तृतीय श्लोक में 'वैष्णवाध्वसु' पद आया है जिस वैष्णव के विषय में लिखा है कि—

सुदर्शनं चोर्ध्वपुंड्रं प्रधानं वैष्णवं स्मृतम् ।
न लभ्यते वैष्णवत्वमृते चक्रस्य धारणात् ॥

(वृद्धहा० अ० ८ श्लोक ६९)

सुदर्शन और ऊर्ध्वपुण्ड्र प्रधान वैष्णवता है, बिना चक्र धारण के वैष्णत्व नहीं प्राप्त होता है ॥ ६९ ॥

ये कण्ठलग्नतुलसीनलिनाक्षमाला ये बाहुमूलपरिचिह्नित शंखचक्राः । ये वा ललाट-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फलके लसदूर्ध्वपुंड्रास्ते वैष्णवा भुवनमाशु पवित्रयन्ति ॥

(पाद्म० उत्तरखं० ६ अ० २२४ श्लोक ७०)

जिनके गले में तुलसी की तथा कमल के बीज की माला लटकी रहती है तथा जिनके बाहुमूल शंख और चक्र से चिह्नित हैं और जिनके ललाटपर ऊर्ध्वपुंड्र विराजमान रहता है वे वैष्णव हैं वे शीघ्र ही भुवनमात्र को पवित्र कर देते हैं ॥ ७० ॥ 'वैष्णवमसि' यजुर्वे० । अ० ५ । मं० २१ ॥ तुम वैष्णव हो ॥ २१ ॥

देवतान्तरनिवृत्तिपूर्वक भगवच्छेषत्वज्ञानवान् वैष्णवः ।

(वार्त्तामा० वा० २४७)

श्रीमन्नारायण से अन्य देवताओं की निवृत्तिपूर्वक भगवान् के विषय में शेषत्व ज्ञानवाला वैष्णव होता है ॥ २४७ ॥ इससे सिद्ध हो गया कि पूर्वोक्त वैष्णव मार्ग में भी बिना महालक्ष्मी जी की प्रसन्नता से श्रेय संभव नहीं है ॥ ३ ॥ अब इसके अनन्तर स्तोत्रकर्ता श्री यामुनाचार्य स्वामी जी चतुर्थ श्लोक में महालक्ष्मी जी को नारायण के साथ सर्वदेश सर्वकाल सर्वावस्था में संश्लिष्ट रहने से पूर्णघटक कहते हैं ।

२ ३ ४

मूल—शान्तानन्तमहाविभूति परमं यद्-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५ ६ १ १२ १३ ७ ८ ९
ब्रह्मरूपं हरे—मूर्तं ब्रह्म ततोऽपि तत्प्रियतरं
१४ १० ११ १७ १८ १५
रूपं यदत्यद्भुतम् । यान्यन्यानि यथा सुखं
१६ १९ २१ २० २६ २३
विहरतो रूपाणि सर्वाणि तान्याहुस्स्वैरनु-
२४ २५ २२
रूपरूपविभवैर्गाढोपगूढानि ते ॥ ४ ॥

टीका—(हरेः) अपने आश्रितों के पापों को हरनेवाले नारायण का क्योंकि हरि के विषय में लिखा है कि—

हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः ।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः ॥
(पाण्ड० श्लोक ६६)

सकृदुच्चरितं येन हरिरित्यक्षरद्वयम् ।
बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति ॥६७॥

दुष्ट चित्त से भी स्मरण करने से हरि सब पापों को हर लेते हैं । जैसे इच्छा न होते हुए भी अग्नि छूने से जला ही देती है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ ६६ ॥ एक बार भी जिसने हरि इन दो अक्षरोंका उच्चारण किया उसने मानो मोक्ष को जाने के लिये कमर बांध लिया है ॥ ६७ ॥ अथवा 'हरेः' इसका यह अर्थ है कि ब्रह्मादिक देवों को संहार करनेवाले, क्योंकि लिखा है कि—

ब्रह्माणमिंद्रं रुद्रं च यमं वरुणमेव च ।
निगृह्य हरते यस्माद्धरिरितीर्यते ॥

ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, यम और वरुण को निग्रह कर जिससे हरते हैं उससे हरि कहे जाते हैं । इस नारायण भगवान् के (शातानंत महाविभूति) अशनादिक ऊर्मियों से एवं अपक्षयादि छै विकारों से रहित अर्थात् शांति, और देश, काल वस्तुकृत त्रिविध परिच्छेद-रहित अनन्त; तथा त्रिपाद् विभूति और लीला विभूति ।
क्योंकि लिखा है कि—

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्या-
मृतं दिवि ॥

(यजु० अ० ३१ मं० ३)

यह जो कुछ संसार जीवों के सहित है वह इस परमात्मा की एकपाद विभूति है और दिव लोक में मोक्षरूप अमृत त्रिपाद् विभूति है ॥ ३ ॥ ये दो विभूति विशिष्ट (परमम्) सब चेतन और अचेतन से उत्कृष्ट (यद्) जो सब उपनिषद् प्रसिद्ध (ब्रह्म) बृहत्त्व बृंहणत्व विशिष्ट (रूपम्) स्वरूप है । ब्रह्म के विषय में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिखा है कि—

बृहत्त्वाद् बृंहणत्वाच्च तस्माद्ब्रह्मेति विश्रुतः।

बृहत्व और बृंहणत्व होने से ब्रह्म ऐसा विश्रुत है। और—

'अक्षरं ब्रह्मपरमम्'

(भगवद्गी० अ० ८ श्लोक ३)

अविनाशि परब्रह्म है॥ ३॥
तैत्तिरीयोपनिषद् में लिखा है कि—

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयंत्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म॥

(तैत्ति० भृगुव० ३ अनु० १)

जिससे ये संपूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं जो समस्त जीवों की रक्षा और संहार करता है जिससे मोक्षको प्राप्त करते हैं उसको जानने की इच्छा करो वही ब्रह्म है॥ १॥ वेदांतदर्शन में भी लिखा है कि—

जन्माद्यस्य यतः॥

(वेदा० अ० १ पा० सू० २)

जिससे सब संसारकी उत्पत्ति, पालन, संहार और मोक्ष होता है वही ब्रह्म है॥ २॥ इस प्रकार के वेदांत प्रसिद्ध ब्रह्मादिव्यात्म स्वरूप है (ततः) उस ज्ञानानन्दात्मक दिव्यात्मस्वरूप से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(अपि) भी (तत्प्रियतरम्) श्रीमन्नारायण को अत्यन्त प्रिय (यद्) जो श्रुति स्मृतिपांचरात्रादि शास्त्रप्रसिद्ध (अत्यद्भुतम्) संन्निवेशगुण प्रभावादि करके अत्यन्त आश्चर्य कर (मूर्त्तम्) स्पर्शरूपादियुक्त परंपदपर्यंकादि देश परिच्छेदयुक्त मूर्त्त (ब्रह्म) बृहत्वविशिष्ट (रूपम्) दिव्यमङ्गल विग्रह स्वरूप है और (यथासुखम्) सुखपूर्वक (विहरतः) विहार करनेवाले श्रीहरि (यानि) जो (अन्यानि) पर वासुदेव अन्य विलक्षण (रूपाणि) प्रद्युम्न अनिरुद्धादिरूप हैं क्योंकि प्रद्युम्नादि के विषय में लिखा है कि—

व्यूहावस्थासु तिष्ठत्सु गुणद्वयमधिष्ठितम् ।
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च तथा संकर्षणो विभुः ॥६८॥
जगत्सृष्टिस्थितिलयान्कुर्वाणो गुणभेदतः ।
ऐश्वर्यवीर्यवान्सर्वं प्रद्युम्नः प्रत्यपद्यतः ॥ ६९ ॥
तेजः शक्तीः समाविश्य ह्यनिरुद्धोऽप्यपालयत् ।
ज्ञानवान्बलवाँल्लोकानग्रसत्संकर्षणोऽव्ययः ।७०।

(पराशरी उत्तरखं० अ० ६)

तीनों व्यूहावस्थाओं में रहते हुए गुणद्वय के अधिष्ठाता प्रद्युम्न अनिरुद्ध और संकर्षण विभु हैं ॥ ६८ ॥ तीनों गुण के भेद से संसार का उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं, ऐश्वर्य तथा वीर्य से युक्त प्रद्युम्नरूप समस्त संसार को उत्पन्न करता है ॥ ६९ ॥ तेज तथा शक्तियुक्त अनिरुद्धरूप निश्चय करके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संसार का पालन करता है, ज्ञान तथा बलयुक्त विकाररहित संकर्षणरूप संपूर्ण संसार का संहार करता है ॥ ७० ॥ और नारायण के रूप के विषय में लिखा है कि—

रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रति चक्षणाय । इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शतादश ॥

(ऋग्वे० मं० ६ अ० ४ सू० ४७ मं० १८)

परमेश्वर अपने अनन्त सामर्थ्यों से अनेक रूपवाला होता है, वह अपने इस रूप को सब भक्तों में विख्यात करने के लिये जैसे जैसे रूप की इच्छा होती है वैसा ही रूप धारण करता है निश्चय ही परमेश्वर के रूप सैकड़ों हैं, उनमें दश अवतार मुख्य है ॥ १८ ॥ इस तरह जो परमात्मा के अनन्त स्वरूप हैं (तानि) उन (सर्वाणि) सब परव्यूह विभवादि स्वरूपों को (ते) वे वेदविदग्रेसर बाल्मीकि पराशरादि महर्षि लोग (स्वैः) स्वकीय (अनुरूप रूप विभवैः) असाधारण भगवदभिमत स्वरूप स्वभाव विग्रहादिरूप वैभवों से (गाढ़ोपगूढ़ानि) गाढ उपगूढ अर्थात् वियोग के अयोग्य (आहुः) कहे हैं । इस विषय में लिखा है कि—

महालक्ष्मीर्देवेशस्य भिन्नाभिन्नरूपा चेतना चेतनात्मिका ब्रह्मस्थावरात्मा तद्गुण-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर्मविभागभेदाच्छरीररूपा देवर्षिमनुष्य-गन्धर्वरूपा ॥

(सीतोपनि०)

महालक्ष्मी देवी नारायणके भिन्नाभिन्नस्वरूपा तथा चेतना-चेतनात्मिका और ब्रह्मस्थावरात्मा हैं और नारायण के गुण और कर्म के विभाग भेद से जैसा देव या ऋषि या मनुष्य या गन्धर्व का स्वरूप होता है वैसा ही रूप धारण करती हैं ॥

अनन्या राघवेणाहं भास्करेण यथा प्रभा ।

(वाल्मी० सु० ५ स० २१ श्लोक १५)

जैसे सूर्य का साथ प्रभा नहीं छोड़ती है वैसे ही श्रीरामजी का साथ मैं नहीं छोड़ती हूँ ॥ १५ ॥ और श्रीविष्णुपुराण में लिखा है कि—

देवत्वे देवदेहेयं मानुषत्वे च मानुषी ।
विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषात्मनस्तनुम् ॥

(विष्णु०)

नारायण के देवरूप धारण करने पर महालक्ष्मीजी देवीरूप धारण करती हैं और मनुष्य रूप धारण करने पर मनुष्य रूप धारण करती हैं। यह श्रीदेवी अपने रूप को विष्णु के देह के सदृश बनाती हैं।

'ज्योत्स्नेव हिमदीधितेः ।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चन्द्रमा की चाँदनी के समान देवी है॥ इन प्रमाणों से सिद्ध हो गया कि महालक्ष्मी जी सर्वदा नारायण के समीप घटक होकर रहती हैं। इससे उस जगज्जननी का पुरुषकार अवश्य हम सबों को करना चाहिये॥ ४॥

अब यह चतुश्लोकी श्रीकांचीपुरी में करिशैल पर विराजमान श्री वरदराज भगवान् की दयिता वरदवल्लभा जी के विषय में है इस बात को जनाने के लिये श्री वरवर मुनीन्द्राचार्य्य स्वामी जी पांचवें श्लोक में वरदवल्लभाजी की वंदना करते हैं। यह श्लोक श्री वरवर मुनि स्वामिनिर्मित है।

मूल—आकारत्रयसम्पन्नामरविन्दनिवासि-नीम्। अशेषजगदीशित्रीं वन्देवरदवल्लभाम्।५।

इति यामुनमुनिप्रणीतं वरदवल्लभा स्तोत्रम्।

टीका—(आकारत्रयसंपन्नाम्) कृपापारतंत्र्य और अनन्यार्हत्वादि तीन आकारों से युक्त, क्योंकि लिखा है कि—

लक्ष्म्याः प्रथमविश्लेषः स्वकृपाप्रकाशनार्थम्।

(श्रीवचन० सू० ९)

पंचवटी में सीतारूपधारिणी लक्ष्मीजी का श्रीरामावतार धारण करनेवाले नारायण भगवान् से पहला विश्लेष अपनी कृपा को प्रगट करने के लिए हुआ॥ ९॥ राक्षसियों के विषय में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखा जाता है कि रावण के वध होने पर शुभवृत्तांत सुनाने के लिये आये हुए महाबीर जी के राक्षसियों का चित्रवध करने के लिये मुझे सौंप दो ऐसे कहने पर श्री अम्बाजी ने कहा कि—

पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणामथापि वा ।
कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति ॥

.(वाल्मी० युद्ध० कांड ६ स० ११५ श्लोक ४३)

पापी हो या पुण्यात्मा हो या मारने योग्य हो परन्तु आर्य-पुरुष को दया करनी ही चाहिए, क्योंकि लोक में ऐसा कोई भी नहीं है जिसने अपराध न किया हो ॥ ४३ ॥ इससे सिद्ध हो गया कि श्री अम्बा जी की कृपा एक आकार है । और—

मध्यमविश्लेषः पारतंत्र्यप्रकाशनार्थम् ।

(श्रीवचन० सू० १०)

वाल्मीकि महर्षि के आश्रम के सन्निधि में श्री सीता का श्री रामजी से मध्यम विश्लेष पारतंत्र्य को प्रगट करने के लिये हुआ ॥ १० ॥ श्री लक्ष्मण जी के द्वारा तपोवन में छोड़ने के समय श्रीसीता जी ने कहा है कि—

न खल्वद्यैव सौमित्रे जीवितं जाह्नवीजले ।
त्यजेयं राजवंशस्तु भर्तुर्मे परिहास्यते ॥

(वाल्मी० उत्तर कांड ७ स० ४८ श्लोक ८)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे श्रीलक्ष्मण ! मेरे स्वामी से प्राप्त जो मेरे गर्भ में राजकुमार है वह मेरे मरने से मर जायेगा जिससे स्वामी का वंश नष्ट हो जायेगा अतः जिससे स्वामी का वंश नष्ट न हो इसलिये मैं प्राणों को आज गंगा के प्रवाह में परित्याग नहीं करती हूँ ॥ ८ ॥ इससे सिद्ध हो गया कि श्री अंबाजी का पारतन्त्र्य एक आकार है और—

अनन्तरविश्लेषोऽनन्यार्हत्वप्रकाशनार्थम् ।

(श्रीवचन० सू० ११)

नैमिषारण्य में श्रीसीता जी का श्रीरामजी से तीसरा विश्लेष, वाल्मीकि महर्षि के आश्रम से लौटकर, श्रीरामजी की सन्निधि में पृथ्वी में प्रवेश करना, यह तृतीय विश्लेष अनन्यार्हत्व को प्रगट करने के लिये हुआ ॥ ११ ॥ क्योंकि लिखा है कि काषायवस्त्र पहिनी हुई श्रीसीताजी ने आये हुए सब ऋषियों को देखकर नीचे पृथ्वी को देखती हुई हाथ जोड़ करके कहा कि—

यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिंतये ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हसि ॥१४॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हसि ॥१५॥

(वाल्मी० उत्तरकांड ७ स० ९७)

यदि मैंने श्रीरामजी से अन्य किसी को मन से भी स्मरण न किया हो तो हे भूदेवि ! अपने भीतर प्रवेश के लिये स्थान दो यदि मन वचन और देह से श्रीराम जी का ही मैंने पूजन किया हो तो भूदेवि ! मुझको विवर दो ॥१५॥ इस तरह शपथ करने पर रत्नसिंहासन पर बैठाकर स्वागत करके भूमिदेवी श्री अम्बा को रसातल में ले गयी । इससे सिद्ध हो गया कि श्रीअंबाजी का अनन्यार्हत्वस्वरूप तीन आकारों से युक्त है अथवा अनन्यार्ह शेषत्व, अनन्य भोग्यत्व एवं अनन्य शरणत्वरूप तीन आकारों से युक्त है । क्योंकि वृद्धहारीत स्मृति में लिखा है कि—

विष्णोरनन्यशेषत्वं तथैवानन्यसाधनम् ।
तथैवानन्यभोग्यत्वमाकारत्रयमुच्यते ॥

(वृद्धहा० अ० ११ श्लोक १४९)

श्री विष्णु के अनन्यशेषत्व तथा अनन्य शरणत्व और अनन्य भोग्यत्व इनको आकारत्रय कहते हैं ॥ १४६ ॥ इन पूर्वोक्त तीन आकारों से युक्त (अरविंदनिवासिनीम्) कमल में निवास करनेवाली क्योंकि लिखा है कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...ग्रन्थालय, भरतनिधि, करौंदी वाराणसी-५

पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ।

(श्रीसू० मं० ४)

कमल में स्थित कमलवर्णा उस श्रीदेवीको मैं यहां पर बुलाता हूं ॥ ४ ॥ और भी लिखा है कि—

पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्म-दलायताक्षि ॥

(लक्ष्मीसू० मं० ८)

इस मन्त्र में स्पष्ट 'पद्मप्रिये' पद आया है । इससे कमल में निवास करने वाली (अशेषजगदीशित्रीम्) समस्त संसार की स्वामिनी । क्योंकि लिखा है कि—

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।

(श्रीसू० मं० ९)

सब भूतों की स्वामिनी उस श्री देवी को यहाँ पर मैं बुलाता हूँ ॥ ९ ॥ तो संपूर्ण संसारके नियमन करने वाली [वरदवल्लभाम्] कांचीस्थ वरदराज भगवान् की वल्लभा पेरुं देवी लक्ष्मी जी को (वंदे) मैं वरवरेन्द्राचार्य्य अभिवादन या स्तुति करता हूँ। श्रीवरदराज जी के विषय में लिखा है कि—

चैत्रमासे सितपक्षे चतुर्दश्यां तिथौ मुने ।
शोभने हस्तनक्षत्रे रविवारसमन्विते ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वपाहोमे प्रवृत्ते तु प्रातःसवनकालिके ।
धातुरुत्तरवेद्यांतु प्रादुरासीज्जनार्दनः ॥ २ ॥
वपापरिमलोल्लासलासिताधरपल्लवम् ।
मुखं वरदराजस्य मुग्धस्मितमुपास्महे ॥३॥

हे मुने! चैत्रमास शुक्लपक्ष चतुर्दशी तिथि शोभन योग रविवार के हस्त नक्षत्र आने पर ॥ १ ॥ प्रातः सवनकालिकवपाहोमप्रवृत्त होने पर तो ब्रह्मा के उत्तर वेदी में जनार्दन वरदराज भगवान् प्रगट हुए ॥ २ ॥ वपा के परिमल के उल्लास से लासित अधर पल्लव तथा सुन्दर हंसते हुए वरदराज के मुखारविंदकी हम सब उपासना करते हैं ॥ ३ ॥ और भी लिखा है कि—

यस्य प्रसादकलया बधिरः शृणोति,पंगुः प्रधावति जवेन च वक्ति मूकः ॥ अन्धः प्रपश्यति सुतं लभते च वन्ध्या, तं देवमेव वरदं शरणं गतोऽस्मि ॥

जिस वरदराज के प्रसाद की कला से बधिर सुनता है, तथा लँगड़ा जोर से दौड़ता है और गूंगा बोलता है तथा अन्धा देखता है और बांझ पुत्र को प्राप्त करती है, उस वरदराज देवकी शरण को मैं प्राप्त करता हूँ। इस प्रकार के वरदराज भगवान् की वल्लभा की मैं बन्दना करता हूं ॥ ५ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सिंहमासे सितेपक्षे मध्याह्ने कश्यपान्वये ।
द्वादश्यां हि स्वयं जातोवामनः श्रीविवर्द्धनः ॥१॥

श्रीवत्सवंशकलशोदधिपूर्णचंद्रम्,
श्रीकृष्णसूरिपदपंकजभृङ्गराजम् ।
श्रीरङ्गवेङ्कटगुरूत्तमलब्धबोधम् ,
भक्त्या भजामि गुरुवर्य्यमनंतसूरिम् ॥२॥

इति श्रीमद्वेदमार्ग प्रतिष्ठापनाचार्यवेदान्तप्रवर्त्तकाचार्य
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य सत्सम्प्रदायाचार्य
जगद्गुरुभगवदनन्तपादीय श्रीमद्विष्व-
क्सेनाचार्यस्वामिना प्रणीता
'भावप्रकाशिका' नामधेया
श्रीवरदवल्लभास्तोत्र-
भाषाटीका
समाप्ता ।

॥ समाप्तमिदं स्तोत्रम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमिका

अखिल माननीय भगवद्भागवताचार्य कैंकर्य परायण प्रिय सज्जनों को यह विदित है कि वात्सल्य शौशील्य सौलभ्य औदार्य सत्यकाम सत्य संकल्प आदि गुणविशिष्ट तथा सकल सात्विक श्रुति स्मृति इतिहास पुराण पांचरात्रादि प्रतिपाद्य कल्याणैकतान श्रीमन्नारायण भगवान् के विषय में संस्कृत के स्तोत्रों में आलबन्दार स्तोत्र त्रय्यन्तार्थ युक्त अत्यन्त उज्ज्वल गम्भीर भाव से पूर्ण भवौषध एवं श्रोत्र मनोभिराम है जो कि साक्षात् भगवत् सिंहासनावतार श्रीयामुनाचार्य स्वामी जी से प्रणीत अमूल्य स्तोत्र रत्न है। यह इतना सुप्रसिद्ध और माननीय स्तोत्र है जिसका दक्षिण भारत से लेकर उत्तर भारत पर्यन्त एवं पश्चिम समुद्र से लेकर पूर्व समुद्र पर्यन्त के रहने वाले लाखों हिन्दू नर नारी कण्ठाग्र करके इस स्तोत्र रत्न का पाठ प्रति दिन भगवान् की सन्निधि में करते हैं। एवं भागवत धर्मधुरन्धर तत्ववेत्ता अनेक विद्वानों ने इसकी सर्वोत्कृष्ट उपादेयता पर मुग्ध होकर इस पर विशद व्याख्यायें टीकायें और टिप्पणियां लिखी हैं परन्तु अत्यन्त विस्तृत या अति संक्षिप्त हो जाने से वे भाषा टीकायें सर्वोपयोगी नहीं हैं। यह विचार करके निमेज पाण्डेयपुर निवासी संपूर्ण श्रीवैष्णव वृन्दों ने मुझसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निवेदन किया कि अन्वय के साथ हिन्दी भाषा में इसकी एक टीका हो जाती तो सर्व साधारण संस्कृतानभिज्ञ भगवद्भक्तजनों का बहुत ही लाभ होता। इस बात को सुन कर उस टीका को कराने के उद्देश्य से श्रीविष्णुपादोदकी गङ्गा के दक्षिण तट पर पूर्व दिशा में मैं भ्रमण करता हुआ गङ्गा शोण के सङ्गमस्थान श्रीनृसिंह क्षेत्र में जा पहुँचा और वहां पर एक मिट्टी की गुफा में सूर्य के समान देदीप्यमान ज्ञान वैराग्य के राशि त्रिदण्ड ग्रहण किये हुए अगाध भगवद्भक्ति के सागर द्वितीय श्रीभाष्यकार के समान विद्वान् परिव्राजक स्वामी जी मुझको मिले जिनके बनाये हुए 'यतीन्द्र धर्म मार्तण्ड' 'वैदिक योग संग्रह' 'वैदिक मूर्तिपूजादर्श' 'वैदिक श्राद्ध दर्पण' 'शास्त्रार्थ दीपिका' आदिक ग्रन्थ हैं और जिनकी अनुकम्पा से बलियाँ जिला परगना द्वावा नवरंगा और दामोदरपुर ग्राम से एक रात्रि में तीन कोश छोड़ करके दूसरी धारा करके श्रीगङ्गाजी चली गई और आरा जिला सीनहा ग्राम में जिनकी तपश्चर्या से ब्रह्मराक्षस डर कर स्थान परित्याग कर दिया, कि जिसके पृथ्वी में उखड़े हुए आश्चर्यजनक पैर के चिन्हों को वहाँ की सभी जनता देखी है। जिनके योग के प्रभाव को गङ्गा के तट पर आरा जिले के एकौना ग्राम वासी जानते हैं कि सैकड़ों मनुष्यों के ऊपर सांप और बिच्छू स्वामी जी के सामने चढ़ते थे परन्तु किसी को कभी नहीं काटते थे, इत्यादि। जिनके और बहुत से कार्य आश्चर्य-जनक हैं यह श्रीगङ्गा तट पर भ्रमण करने से मालुम हुआ है। परम कारुणिक उन यतिवर की प्रार्थना करके मैंने उन्हें पाण्डेयपुर में लाया, तथा पांडेयपुर निवासियों की उत्कृष्ट श्रद्धा देख कर भक्तों के मनोरथ पूर्ण करने के लिये श्रीस्वामी जी ने अन्वयाङ्क सहित आलवन्दार की 'भाव प्रकाशिका' टीका बनाई कि जिसको देखने से ही आलवन्दार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्तोत्र का भाव स्पष्ट प्रकाशित हो जाता है। आलवन्दार स्तोत्र के श्लोक के प्रत्येक चरण सूत्र के समान अनन्त भावों के प्रकाशक हैं।

मद्रास प्रदेश के काट्टमन्नारगुडि ग्राम में विक्रम सम्वत् १०१० एक हजार दश में श्री यामुनाचार्य का जन्म हुआ था। श्री यामुनमुनि ने बालकपन में विश्वविजयी अक्कियालवान् राजपुरोहित को जीत लिया, तब चोल नरेश की रानी ने हर्ष से आपको "आलवन्दार" कहकर सम्मान किया। उस समय से यह विरुद आपका शुभनाम बन गया। आलवन्दार माने रक्षा करनेवाला होता है। इसलिये आप से विरचित स्तोत्र "आलवन्दार स्तोत्र" कहा जाता है। और ऋग्यजु, साम, अथर्वण, वाल्मीकि रामायण, महाभारत, नारद पांच-रात्र, मनुस्मृति श्रीमद्भागवत आदिक सात्विक पुराण तथा पराशरीय धर्मशास्त्र उत्तर खण्ड आदिक में जो अर्थ लिखा है वही इस स्तोत्र रत्न में है। यह तत्तत् ग्रन्थों का प्रमाण देकर टीका में सिद्ध किया गया है। अर्थ जाने विना पाठ करने का पूर्ण फल नहीं होता है। यह महाभाष्य में लिखा है कि 'यदधीतमविज्ञातं निगदेनैव पठ्यते अनग्नाविव शुष्कैधो न तज्ज्वलति कर्हिचित्'॥ जो पढ़ा हो और अर्थ न मालूम होता हो वह केवल पाठ किया हुआ; जैसे भस्म के ऊपर रखा हुआ सूखा ईन्धन नहीं जलता है वैसे ही पूर्ण फलदायक नहीं होता है। इससे भावप्रकाशिका टीका के साथ सर्वश्रेष्ठ उपादेय इस आलवन्दार स्तोत्र में श्री यामुनाचार्य स्वामी जी रहस्यत्रय में जैसे ६५ (पैसठ) अक्षर हैं वैसे ही इस स्तोत्रमें पैसठ श्लोक निर्माण किये हैं। आदि के तीन श्लोक और अन्त के एक श्लोक श्री भाष्यकार का बनाया हुआ है। इस "स्तोत्र रत्न" का जितना ही प्रचार होगा उतना ही लोक का कल्याण होगा इस बात को विचार करके जिन महानुभावों ने पूर्ण द्रव्य की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सहायता से भावप्रकाशिका सहित आलवन्दार स्तोत्र को प्रकाशित किया है। मैं हृदय से उन महानुभावों को कोटिशः धन्यवाद देता हूँ और श्रीमन्नारायण भगवान् से यह नित्य प्रति प्रार्थना करता हूँ कि ऐसे शुभ कार्य में भारतवासियों का मन सर्वदा लगा करे। शमिति।

—विनीत निवेदक भगवद्दासानुदास—

वाणीविभूषण मुक्तिनारायणाचार्य त्रिदण्डीस्वामी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमतेरामानुजाय नमः ॥

श्रीयामुनमुनिप्रणीतम्

अथ आलवन्दारस्तोत्रम्

भावप्रकाशिकासहितम्

६ ४ ५ ३ २

स्वादयन्निह सर्वेषां त्रय्यन्तार्थं सुदुर्ग्रहम् ।

७ १ ८ १० ९

स्तोत्रयामास योगीन्द्रस्तं वन्दे यामुनाह्वयम् ॥१॥

परंब्रह्मैवाज्ञं भ्रमपरिगतं संसरति यत्परोपाध्यालीढं विवशमशुभस्यास्पदमपि । श्रुतिन्यायापेतं जगतिविततं मोहनमिदं तमोयेनापास्तं स हि विजयते यामुनमुनिः ॥

अर्थ—आलवन्दार स्तोत्र के आदि के तीन श्लोक श्रीभगवान् भाष्यकार यतिराज के बनाये हुए हैं, यह श्रीपूज्यपाद लोग कहते हैं। यामुनाचार्य स्वामीजी को उपकारक समझ कर प्रथम श्लोक में उनका अभिवादन एवं स्तुति करते हैं कि (योगीन्द्रः) योगियों में श्रेष्ठ योगी उसको कहते हैं जिसने कि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

योगाभ्यास किया हो। योग का लक्षण योग शिखोपनिषद् में लिखा है कि—

योऽपानप्राणयोरैक्यं स्वरजोरेतसोस्तथा ।
सूर्याचन्द्रमसोर्योगो जीवात्मपरमात्मनोः ॥

॥ मं० ६८ ॥ *एवं तु द्वन्द्व जालस्य संयोगो योग उच्यते* ॥ योग शि० मं० ६६ ॥ प्राण वायु और अपान वायु के एकता तथा अपना रज और रेतस तथा सूर्य नाड़ी और चन्द्र नाड़ी तथा जीवात्मा और परमात्मा इन सबों के संयोग को योग कहते हैं ॥ ६८ ॥ ६६ ॥ और पातञ्जल योग दर्शन में भी लिखा है कि ॥ *योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः* ॥ योग द० । अ० १। पा० १। सू० ।२॥ पांच प्रकार की चित्तवृत्तियों को रोकना ही योग है ॥ २ ॥ उन पांच वृत्तियों के नाम और लक्षण भी श्री पतञ्जलिजी ने कहा है ॥ *प्रमाण विपर्यय विकल्प निद्रा स्मृतयः* ॥ यो० । पा० ।१। सू० । ६ ॥ प्रमाण १, विपर्यय २, विकल्प ३, निद्रा ४, स्मृति ये पांच चित्त की वृत्तियां हैं ॥ ६ ॥ इनमें *"प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ।।"* यो० पा० १ सू० । ७ ॥ प्रत्यक्ष १, अनुमान २, आगम ३, ये तीन प्रमाण हैं ॥ ७ ॥ उनमें इान्द्रयों का अर्थ के साथ व्यवधान रहित संयोग से घटपट आदिक अर्थों का जो विशेष रूप करके ज्ञान होता है उसको प्रत्यक्ष प्रमाण कहते हैं। और धूमादिक लिंग से दूरस्थ अग्नि आदिक पदार्थों का जो सामान्य रूप से ज्ञान होता है उसको अनुमान प्रमाण कहते हैं। तथा यथार्थ वक्ता पुरुष का जो वाक्य है उसको आगम प्रमाण कहते हैं। इन तीनों प्रमाणों में और सब अन्तर्भूत हो जाते हैं। ॥ *विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठितम्* ॥ यो० ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ पा० १ । सू । ८ ॥ अपने स्वरूप से विरुद्ध जो मिथ्या ज्ञान बुद्धि में स्थित हो उसको विपर्यय कहते हैं ॥ ८ ॥ *"शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्योविकल्पः"* ॥ यो० । पा० १ सू० ९ ॥ शब्द जन्य ज्ञान के अनुसार जो वस्तु से शून्य हो उसको विकल्प कहते हैं ॥ ९ ॥ तथा *"अभावप्रत्ययावलम्बना वृत्तिर्निद्रा"* ॥ यो० । पा० । १ । सू० । १० ॥ अभाव प्रत्यय का अवलम्बन विषय है जिस वृत्ति का उसको निद्रा कहते हैं ॥ १० ॥ और *"अनुभूत विषया—संप्रमोषः स्मृतिः"* ॥ यो० । पा० । सू० । ११ ॥ प्रत्यक्षादिक प्रमाण करके अनुभव किये हुए पदार्थों का जो अन्यकाल में संस्कार द्वारा स्मरण होता है उसको स्मृति कहते हैं ॥ ११ ॥ इन पांच वृत्तियों के रोकने का उपाय अभ्यास और वैराग्य है । इन सभी के लक्षण को ग्रन्थ विस्तार के भय से मैं यहाँ नहीं लिखता हूँ । जिसको जानना हो वह मेरा बनाया हुआ "वैदिक योग संग्रह" नामक ग्रंथ को देख लें । अब प्रकृत जो योगीन्द्र शब्द है उसका यह अर्थ हुआ कि यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि इन अष्टाङ्ग योग करने वालों में श्रेष्ठ । इस कथन से जो लोग कहते हैं कि योगाभ्यास श्रीसंप्रदाय से विरुद्ध है उन का कथन निरस्त हो गया (सुदुर्ग्रहम्) अर्थात् इन्द्रादि देवों करके अत्यन्त दुःख से ग्रहण करने में कठिन क्योंकि इन्द्र ने कई बार बृहस्पति के पास जा जा कर ब्रह्मविद्या को ग्रहण किया है । (त्रय्यन्तार्थम्) जो तत्त्वहित परम पुरुषार्थ रूप ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद के शिरोभागार्थ उसको, यहां त्रयी कहा है उसका तात्पर्य यह है कि शुक्ल यजुर्वेद में तीन ही वेदों की उत्पत्ति है ॥ *ऋचः सामानि जज्ञिरे छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत* ॥ यजु०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

। अ० । ३१ । मं० ७ । ।। उस यज्ञ पुरुष से ऋग्वेद सामवेद और छन्द तथा यजुर्वेद उत्पन्न हुआ ।।७।। इसी से भगवद्गीता में भी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी ने कहा है कि ।। *ऋक् साम यजुरेवच* ।। भग० गी० । अ० । ९ । श्लो० १७ ।। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद मैं ही हूँ ।। ७ ।। अथवा त्र्यन्त शब्द वेदान्त में रूढ़ है तो यह अर्थ हुआ कि वेदान्त में जो ब्रह्म जीव माया का विचार है उसको (इह) इस लीला विभूति में जिसमें ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यन्त रहते हैं इस लोक में (सर्वेषाम्) चारों वर्णों के । चार ही वर्ण शुक्ल यजुर्वेद में लिखा है ।। *ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ॥ ऊरूत दस्य यद्वैश्यः पद्भ्यांशूद्रोऽअजायत* ।। यजु० अ० । ३१ मं० ११ ।। परमात्मा श्रीमन्नारायण के मुख से ब्राह्मण और बाहू से क्षत्री तथा जंघा से वैश्य और पैरों से शूद्र उत्पन्न हुआ ।। ११ ।। भगवद्गीता में भी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी कहे हैं ।। *चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम्* ।। भग० गी० । अ० । ४ । श्लो० १३ ।। कि चार वर्णों को मैंने बनाया ।। १३ ।। तथा चारों आश्रमियों के आश्रम चार ही हैं यह मनुस्मृति में लिखा है कि ।। *चातुर्वर्ण्यं त्रयोलोकाश्चत्वारश्चाश्रमाः पृथक्* ।। मनु० । अ० । १२ श्लो०। ९७।। चारो वर्ण तथा तीनों लोक और ब्रह्मचर्य्याश्रम गृहस्थाश्रम वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम ये चारो आश्रम वेद पुरुष से पृथक्-पृथक् प्रसिद्ध हुए हैं ।। ९७ ।। तथा संसारी जितने जीव हैं उन सबों के (स्वादयन्) आस्वादन कराने के लिये जिस आचार्य ने (स्तोत्रयामास) "आलवन्दार" नामक स्तोत्र रत्न का प्रणयन किया (तं) उस योगेश्वर (यामुनाह्वयम्) संसार रूप बन्धन से निवृत्त करने वाले श्रीयामुनाचार्य्य स्वामीजी की (वन्दे) मैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभिवादन तथा स्तुति करता हूँ ॥ १ ॥ जैसे प्रश्नोपनिषद् में सुकेशा, सत्यकाम तथा सौर्यायणि, प्रभृति ऋषि तथा कौशल्य ऋषि एवं भार्गव ऋषि और कबन्धी ऋषि ये सभी ब्रह्मविद्या संप्रदाय के प्रवर्तक अपने आचार्य पिप्पलाद ऋषि को अत्यादर से बारबार नमस्कार किये हैं वैसे ही भगवान् श्रीभाष्यकार अपने परमाचार्य्य श्रीयामुनाचार्य स्वामी जी का आदर से साष्टाङ्ग करते हैं ॥

३ २ १ ४ ५ ६
नमो नमो यामुनाय यामुनाय नमो नमः ॥
९ ८ ७ १० ११ १२
नमो नमो यामुनाय यामुनाय नमो नमः ॥२॥

अर्थ—(यामुनाय) यामुन शब्द ॥ यमु उपरमे ॥ इस धातु से बनता है इससे उसका यह अर्थ है कि संसार सागर से निवृत्ति करानेवाले उसके लिये (नमः) उर से प्रणाम करता हूँ और शिर से भी प्रणाम करता हूँ (यामुनाय) यामुन नामक आचार्य के लिये। इस अर्थ में महाभारत के अनुशासन पर्व के अन्दर श्रीविष्णु सहस्रनाम के पचहत्तरवां श्लोक में "सुयामुनः" यह नाम है यही प्रमाण है। (नमः) दृष्टि से प्रणाम करता हूँ (नमः) और मन से भी प्रणाम करता हूँ (यामुनाय) यमुना में उत्पन्न होनेवाले के लिये या यमुना के सम्बन्धी के लिये (नमः) वाक्य से प्रणाम करता हूँ— (नमः) दोनों पैरों से प्रणाम करता हूँ (यामुनाय) यामुन नामक परमाचार्य के लिये (नमः) दोनों हाथों से प्रणाम करता हूँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(नमः) और दोनों जंघाओं से प्रणाम करता हूँ अर्थात् भूतल पर लाठी के सदृश पड़ कर मैं आठो अङ्गों से प्रणाम करता हूँ। अष्टाङ्ग प्रणाम का लक्षण यह है कि।। *उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा । पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते* ।। उर से शिर से दृष्टि से मन से बचन से और दोनों पैरों से दोनों हाथों से दोनों जंघों से जो प्रणाम किया जाता है उसको साष्टाङ्ग प्रणाम कहते हैं। और श्रीस्कन्द पुराण के रेवा-खण्ड में सत्यनारायण व्रत कथा में भी ऐसा ही लिखा हुआ है कि।। *ननाम दण्डवद्भूमौ* ।। अर्थात् सूतजी को देखकर शौनका-दिक ऋषि दण्ड के समान भूमि पर पड़ गये। इन प्रमाणों से दण्ड के समान भूमि पर पड़ कर साष्टाङ्ग प्रणाम करना सिद्ध होता है। इस द्वितीय श्लोक में "नमो यामुनाय" यह जो पद है वह "*यथा देवे तथा गुरौ* ।।" इस नियम से सम्बन्ध को बताता है अर्थात् नमः पद आचार्य सम्बन्ध को कहता है यामुन पद संसार निवृत्ति सम्बन्ध को कहता है और आय पद भोक्तृभोग्य सम्बन्ध को कहता है। अपने अहंकार ममकार को छोड़ो और जीव का स्वरूप अत्यन्त पारतन्त्र्य हैं, और वह आचार्य रूपी भगवान का शेष तथा उसका वही उपाय है यह नमः शब्द का अर्थ है। असंख्य चेतनों को संसार सागर से निवृत्त करना यामुन शब्द का अर्थ है। यदि अपने को स्वतन्त्र माना या श्रीवैष्णवों में समबुद्धि किया तथा कर्मादि को उपाय जाना तो समझ लो कि नमः शब्द का अर्थ उसके हृदय में नहीं बैठा है। यदि दूसरे को संसार से उपराम करने वाला जाना तो समझलो कि यामुन शब्द का अर्थ उसके हृदय में नहीं बैठा है। यदि अपने को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वतन्त्र ब्रह्म माना तो समझ लो कि आय पद का अर्थ उसके हृदय में नहीं बैठा है ॐ नमो यामुनाय ॥ २ ॥

अब भगवान् श्रीभाष्यकार अपनी गुरु परम्परा दिखाने के लिये अपने आचार्य महापूर्ण स्वामी जी को साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं ।

६ १ २
नमो यामुनपादाब्जरेणुभिः पावितात्मने ।
३ ५ ४
विदिताखिलवेद्याय गुरवे विदितात्मने ॥ ३ ॥

अर्थ—(यामुनपादाब्जरेणुभिः) श्रीपरमाचार्य्य श्रीसंप्रदायाचार्य्य यामुनाचार्य स्वामीजी के चरणारविन्द के परागों करके (पावितात्मने) पवित्र हो गया है निरन्तर चलनेवाला मन जिनका अर्थात् *'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ॥'* मनुष्यों के बन्धन और मोक्ष का कारण मन ही है। वह मन यामुन मुनि के चरण कमलों की सेवा के द्वारा अभ्यास और वैराग्य से स्थिर हो गया है जिनका, मन स्थिर करने का उपाय भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी ने कहा है कि *॥ अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥* भग० । गी० । अ० । ६ । श्लोक । ३५ ॥ हे अर्जुन मन अभ्यास और वैराग्य से स्थिर किया जाता है ॥ ३५ ॥ अभ्यास और वैराग्य का लक्षण श्रीपतञ्जलि ने कहा कि ॥ *तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः* ॥ यो० । पा० । १ । सू० । १३ ॥ यम नियमादिक में स्थित होकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रयत्न करना अभ्यास है ॥ १३ ॥ और ॥ *दृष्टानुश्रविकविषय वितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम्* ॥ यो० । पा० । १ सू० ॥ १५ ॥ जो स्त्री अन्न पान आदि सुख देखे जाते हैं और स्वर्ग आदि सुख जो वेद से जाने जाते हैं इन दोनों विषयों की तृष्णा त्याग कर मन को वश करने को वशीकार संज्ञा वैराग्य कहते हैं ॥१५॥ और '*तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम्*' ॥ यो० । पा० । १ सू० । १६ ॥ पुरुषख्याति से और वशीकार संज्ञक वैराग्य से श्रेष्ठ तथा जो तीन गुणों के विषयों की तृष्णा से रहित होता है उसको गुणवैतृष्ण्य संज्ञक पर वैराग्य कहते हैं ॥ १६ ॥ (विदिताखिलवेद्याय) जान लिया है सम्पूर्ण वेद्य धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप वेदान्त के अर्थ को जिन्होंने और (विदितात्मने) जान लिया है नित्य बद्ध मुक्त मुमुक्षु कैवल्य इन पांच प्रकार के जीवात्मा के स्वरूप को और पर व्यूह विभव अन्तर्यामी अर्चावतार इन पांच प्रकार के परमात्मा के स्वरूप को जिन्होंने ऐसे (गुरवे) गुरु शब्द का अर्थ यह है कि ॥ '*गु शब्दस्त्वन्धकारः स्याद् रु शब्दस्तन्निरोधकः । अन्धकार-निरोधित्वाद् गुरुरित्यभिधीयते* ॥' गु कहते है अन्धकार को और रु कहते हैं प्रकाश को अर्थात् सदुपदेश द्वारा जो अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करे उसको गुरु कहते हैं। मूर्ख अज्ञानी गुरु नहीं होना चाहिये। मुंडकोपनिषद् में लिखा है कि '*तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्* ॥' मुण्ड । १ । खं० २ । म० । १२ ॥ ब्रह्मज्ञान के लिये अथवा मुमुक्षु अपने मोक्ष के लिये समिधा या कुछ हाथ में लेकर वेद के अर्थ जानने वाले एवं ब्रह्म निष्ठा वाले गुरु की शरण को प्राप्त करे ॥ १२ ॥ और भी लिखा है कि ॥ '*अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः ॥' अज्ञानरूपी अन्धकार से विवेकरूपी नेत्र जिनका अन्धा हो गया है उस नेत्र को ज्ञानाञ्जन-रूपी शलाका से जिन्होंने खोल दिया है उस गुरु महाराज के लिये प्रणाम है ॥ श्रीगुरु के विषय में मनुष्य बुद्धि नहीं करनी चाहिये क्योंकि लिखा है कि *'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः गुरुरेव परंब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥'* गुरु ब्रह्मा हैं तथा विष्णु हैं और गुरु महादेव हैं तथा गुरु ही परंब्रह्म हैं उस श्री गुरु महाराज के लिये प्रणाम है ॥ और भी लिखा है कि ॥ *'नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥'* गुरु से बढ़ कर श्रेष्ठ तत्त्व नहीं है। इससे श्रीगुरु महापूर्णाचार्य स्वामी जी के लिये (नमः) मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ ॥ ३ ॥

अब भगवान् श्री यामुनाचार्य स्वामीजी सम्पूर्ण चेतनों के कल्याण के लिये तत्त्व-हित पुरुषार्थ प्रकाशक आलवन्दार स्तोत्र को करते हैं। जिस ग्रन्थ को प्रारम्भ करने की इच्छा है उस ग्रन्थ की निर्विघ्न परिसमाप्ति के लिये अपने इष्ट आचार्य को नमस्कारात्मक मंगल प्रथम करते हैं। यहां पर शंका होती हैं कि मङ्गल विघ्न विघात या समाप्ति के प्रति कारण नही है क्योंकि नास्तिकों की बनाई हुई जो किरणावली है उसमें मङ्गल नहीं है फिर भी समाप्ति देखी जाती है और कादम्बरी में बहुत मङ्गल रहने पर भी समाप्ति नहीं देखी जाती है इससे मङ्गल नहीं करना चाहिये। इस शंका का समाधान यह है कि बलवत्तर मङ्गल विघ्न विघात या समाप्ति का कारण है क्योंकि जो अधिक बलवाला होता है वह पछारता है इससे यह सिद्ध हुआ कि कादम्बरी में मङ्गल से अधिक विघ्न था इससे विघ्न विघात या

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समाप्ति न हुई और किरणावली में जन्मान्तरीय मङ्गल था या विघ्न का अत्यन्ताभाव था इससे उसकी समाप्ति हो गई। अविगीत शिष्टाचार भी देखा जाता है कि ॥ वृद्धिरादैच् ॥ पाणि० । अ० । १ । पा०। १। सू० १ ॥ *मङ्गलादीनि मङ्गलमध्यानि मङ्गलान्तानि च शास्त्राणि* ॥ महाभाष्य० ॥ श्रीपतञ्जलि महर्षि ने "वृद्धिरादैच्" इस सूत्र के भाष्य में लिखा हैं, कि शास्त्र के आदि मध्य अन्त में मङ्गल होना चाहिये। इससे मङ्गल अवश्य करना चाहिये। ग्रन्थ विस्तार के भय से अधिक नहीं लिखता हूँ। अब यहाँ पर यह प्रश्न है कि मङ्गल अपने मन में कर लेते फिर ग्रन्थ में क्यों लिखे। इसका उत्तर यह है कि हमारे लिखे हुए मङ्गल को देख कर श्री सम्प्रदायावलम्बी जितने वैष्णव हैं वे भी मङ्गल को इसी प्रकार करेंगे इस शिक्षा के लिये यामुनाचार्य स्वामीजी अपने आचार्य के परमाचार्य का अर्थात् यामुनाचार्य स्वामीजी के आचार्य राममिश्राचार्य स्वामीजी और उनके आचार्य पद्माक्षाचार्य स्वामी जी और पद्माक्षाचार्य स्वामीजी के आचार्य मुनिवर नाथाचार्य स्वामीजी का नमस्कारात्मक मङ्गल प्रथम अपने ग्रन्थ में करते हैं।

५ १

नमोऽचिन्त्याद्भुताक्लिष्टज्ञानवैराग्यराशये ।

४ ३ २

नाथाय मुनयेऽगाधभगवद्भक्तिसिन्धवे ॥४॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—[अचिन्त्याद्भुताक्लिष्टज्ञानवैराग्यराशये] चिन्तन करने में अशक्य क्योंकि लिखा है कि ॥ *'यतो वाचो निवर्तन्तेऽप्राप्य-मनसा सह ॥'* मन के साथ वचन जहां से लौट आते हैं इससे स्मरण में भी न आने योग्य और आश्चर्यकर है। इस बात को भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने भी कहा है ॥ *अचिन्त्योऽयम् ॥* भग० । गी० । अ० । २ । श्लो० । २५ ॥ कि यह मनके भी चिन्त्य नहीं है ॥ २५ ॥ और ॥ *'आश्चर्यवत्पश्यतिकश्चिदेनम् ॥'* भग० । अ० । २ । श्लो० । २६ ॥ कोई कोई इसको आश्चर्य्यवत् देखता है ॥ २६ ॥ और अक्लिष्ट नाम क्लेश रहित साधित जो ब्रह्म जीव माया के यथार्थ ज्ञान और जितने स्त्री पुत्र धन अन्न पान आदि विषय तथा इन्द्र रुद्र आदि लोक के प्राकृत पदार्थ उससे जो वैराग्य इसके राशि अर्थात् इनसे परिपूर्ण अथवा चिन्तन करने में अशक्य आश्चर्यकर अक्लिष्ट जो ज्ञान और वैराग्य उसके राशि ज्ञान किसको कहते हैं यह भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी ने कहा है कि ॥ *अमानित्व-मदम्भित्वमहिंसाक्षान्तिरार्जवम् । आचार्योपासनं शौचंस्थैर्यमात्म-विनिग्रहः ॥* भग० अ० । १३ । श्लो० । ७ ॥ *इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कारएव च । जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥ असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु । नित्यं च समचित्त-त्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥ मयिचानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचा-रिणी । विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ १० ॥ अध्यात्म ज्ञाननित्यत्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम् । एतद्ज्ञानमितिप्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ ११ ॥* भगवद्गीता के तेरहवें अध्याय में लिखा है कि—अपनी प्रशंसा न करना या उत्कृष्ट जनों में अवधीरणा न करना, अपना धर्म किसी से न जनाना, मन वाणी और देह से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसी जीव को दुःख न देना, दूसरे से दुःख पाने पर भी उसके ऊपर विकृत चित्त न करना, कोमलता, आत्मज्ञान देनेवाले आचार्य की शुश्रुषा आदि से सदा उनकी उपासना करना, शरीर के मल को मिट्टी और जल से धोना और भीतर के मल को ध्यान आदि से दूर करना, वेदान्त के अर्थ में निश्चल रहना, आत्मस्वरूप से भिन्न अन्य विषयों से मन को रोकना ॥ ७ ॥ आत्मव्यतिरिक्त शब्दादि विषयों से वैराग्य करना, अहंकार से रहित होना और जन्म मरण वृद्धावस्था ज्वर आदि व्याधि दुःख ये सभी दोष जब तक यह शरीर रहेगा तब तक रहेंगे इसको सदा विचार करना ॥ ८ ॥ आत्मव्यतिरिक्त विषयों में प्रीति न करना पुत्र स्त्री घर धन आदिक में अत्यन्त आसक्ति न करना, और सर्वदा इष्ट और अनिष्ट प्राप्त होने पर हर्ष तथा उद्विग्नता से रहित होना ॥ ९ ॥ और मुझ सर्वेश्वर में ऐकान्तिक योग करके निश्चला भक्ति करना, जन से रहित एकान्त देश में निवास करना, प्राकृत विषयी जनों की सभा में प्रीति न करना ॥ १० ॥ आत्मविषयक ज्ञान का सदा अनुभव करना, तत्वज्ञान के अर्थ को देखना, ये ज्ञान कहे जाते हैं इससे अन्य समस्त शरीर के कार्य आत्मज्ञान के विरोधी अज्ञान हैं ॥ ११ ॥ गीता में कहा हुआ जो यह ज्ञान और वैराग्य उसके राशि परिपूर्ण तथा (अगाध भगवद्भक्ति सिन्धवे) षडैश्वर्य संपन्न श्रीमन्नारायण की नवधा भक्ति के अथाह समुद्र अर्थात् अगाध समुद्र के तुल्य भगवद्भक्ति है जिनकी, ऐसी भक्ति वाले, भगवान् शब्द का यह अर्थ है कि ॥ *उत्पत्ति प्रलयञ्चैव भूतानामगतिं गतिम् वेत्ति विद्यामविद्याञ्च स वाच्यो भगवानिति* ॥ जो संपूर्ण जीवों के उत्पत्ति तथा प्रलय को और अगति तथा गति को और विद्या और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अविद्या को जानता है उसको भगवान् कहते हैं ।। श्रीमद्भागवत के सातवें स्कन्ध में नवधा भक्ति कही गई है कि ।। *श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् । अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म-निवेदनम् ।।* श्री मद्भाग० । स्क० । ७ । अ० । ५ । श्लो० । २३ ।। विष्णु भगवान् की कथा कानों से सुनना १ तथा विष्णु के नामों को जिह्वा से कहना २ और मन से विष्णु का स्मरण करना ३ तथा श्रीपाद तीर्थ का सेवन करना ४ विष्णु प्रतिमा की प्रतिदिन पूजा करना ५ और मुख से स्तुति करना ६ तथा विष्णु की दास्यता ७ और उनकी मित्रता, ८ तथा विष्णु में आत्म सर्वस्व का निवेदन करना [विष्णु के शरण में जाना] ९ यही नवधा भक्ति है ।। २३ ।। [मुनये] मनन शील समस्त तत्वों के जानने वाले तथा संपूर्ण जीवों से पूजित और शाक पत्र मूल फल को भोजन करने वाले तथा वन में निवास करने वाले । व्यासस्मृति में लिखा है कि जो शाक पत्र मूल फल को भोजन करता है और बन में निवास करता है उसको मुनि कहते हैं ।। (नाथाय) जो मेरे स्वामी श्रीनाथाचार्य स्वामीजी हैं उनके लिये [नमः] मैं प्रणाम साष्टाङ्ग करता हूं ।। ४ ।।

अब प्रपत्ति के तुल्य स्वतंत्र आचार्याभिमान रूप जो आचार्य की शरणागति है उसको यामुनाचार्य स्वामीजी करते हैं क्योंकि लिखा है कि ।। *'आचार्यवान् पुरुषो वेद'* ।। आचार्यवाला पुरुष ईश्वर को जानता है ।। आचार्य के वश्य होने पर ईश्वर प्राप्ति सुलभ है । इस बात को लोकाचार्य स्वामीजी ने भी श्रीवचन भूषण में कहा है कि ।। *'आचार्यवश्यतानन्तरं मूलमन्त्रो हस्तगतो भवति'* ।। सू० । १०४ ।। *'मूल मन्त्रे हस्तगते ईश्वरो वश्यो भवति'* ।। सू० ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०५ ॥ *ईश्वरवश्यतानन्तरं वैकुण्ठमहानगरमन्यच्च हस्तगतमेव इत्युक्तप्रकारेण प्राप्यभूमि सुलभा भवति* ॥ सू० । १०६ ॥ आचार्य के वश्य होने पर मूल मन्त्र हस्तगत होता है ॥ १०४ ॥ और मूलमन्त्र हस्तगत होने पर ईश्वर वश्य होता है ॥ १०५ ॥ और ईश्वर वश्य होने पर वैकुण्ठ महानगर जो त्रिपाद विभूति तथा अन्य जितने पदार्थ हैं ये सब हस्तगत हो जाते हैं। इस उक्त प्रकार से प्राप्य भूमि सुलभा हो जाती है ॥ १०६ ॥ इससे श्रीनाथाचार्य स्वामीजी की शरणागति स्तोत्ररत्नकार करते हैं।

१० १३ ९
तस्मै नमो- मधुजिदंघ्रिसरोजतत्त्वज्ञानानुराग-
११ १२
महिमातिशयान्तसीम्ने । नाथाय नाथमुन-
२ ५ ४ ३ ६ १ ८
येऽत्र परत्र चापि नित्यं यदीयचरणौ शरणं
७
मदीयम् ॥ ५ ॥

अर्थ—[यदीय चरणौ] जिस नाथाचार्य स्वामीजी के दोनों चरणारविन्द यहां पर "चरणौ" यह जो पद है वह श्रीमान् के वात्सल्य सौशिल्य सौलभ्य आदि गुणों से युक्त तथा शुभ के आश्रय और विग्रह योग को कहता है [अत्र] इस लीला विभूति नामक संपूर्ण ब्रह्माण्ड में [अपि] भी [च] और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[परत्र] नित्य त्रिपाद् विभूति में, भगवान् श्रीमन्नारायण की दो विभूतियां प्रधान है। यह शुक्ल यजुर्वेद में लिखा हुआ है कि ॥ *'पादोऽस्यविश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि'* ॥ यजु० । अ० । ३१ । मं० । ३ ॥ नारायण के एक पाद में समस्त लीला विभूति है और दिव्लोक में त्रिपाद विभूति अमृत स्थान है ॥ ३ ॥ (नित्यं) भूत भविष्य वर्त्तमान इन तीनों कालों में तथा लड़कपन युवापन वृद्धापन इन तीनों समय में और जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं में अर्थात् सर्वदा (मदीयम्) अकिञ्चन, इस सेवक के अर्थात् मेरे [शरणं] रक्षक हैं। भावार्थ यह हुआ कि नाथाचार्य स्वामीजीके चरणारबिन्दों की शरणागति मैं करता हूं। वह नाथाचार्य स्वामीजी कैसे हैं [मधुजिदंघ्रिसरोजतत्व-ज्ञानानुराग महिमातिशयान्तसीम्ने] मधु नामक राक्षस को मार कर जीतनेवाले जो श्रीमन्नारायण भगवान् हैं उनके चरण कमल का जो यथार्थ सुन्दर ज्ञान और प्रेम इन दोनों की जो महिमा उसकी अत्यन्त अन्तिम सीमा अर्थात् परम अवधि। तात्पर्य इसका यह हुआ कि नाथाचार्य स्वामीजी से अधिक अनुराग श्रीमन्नारायण भगवान् के चरणारविन्दों में किसी का नहीं हुआ है। मधुजित् श्रीमन्नारायण का नाम मधुराक्षस को मारने से पड़ा। यह कथा देवी भागवत के पहले स्कन्ध में है कि जब तीनों लोक एकार्णव में लीन हुए और श्रीमन्नारायण शेष शय्या पर शयन किये थे, तो उनके कान के मल से मधु, कैटभ दो दैत्य उत्पन्न हुए और वे दोनों ही दस हजार वर्ष घोर तपस्या करके देवता दैत्यों से अजेय हो गये, देवी से अजेय वरदान पाकर एक दिन दोनों ने ही पद्मस्थित ब्रह्माजी से कहा कि युद्ध करो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं तो इस आसन को छोड़ दो। इस बात को सुन कर डर से शेषशायी भगवान् के पास जाकर ब्रह्मा ने कहा कि हे भगवन् इन दुष्ट मधु कैटभ दैत्यों से मेरी रक्षा कीजिये। ऐसी बात कर ही रहे थे कि वे दैत्य ब्रह्माजी को खोजते २ शेषशायी के पास पहुँचे और क्रमशः श्रीमन्नारायण से पांच हजार वर्ष युद्ध किये। तब अपनी योगमाया से दैत्यों को मोहित करके भगवान् ने कहा कि तुम सब वरदान मुझ से मांगों। इस वाक्य को सुनकर मोहित दैत्य बोले कि आप ही को जो वर मांगना हो वह मांगिये। यह सुन श्रीविष्णुजी बोले कि अच्छा हमारे हाथ से तुम दोनों मरो। इस बात को सुनकर हाय! हम सब छले गये ऐसा कहते हुए बोले कि हे हरे जो हमें वर देने को कहे हो तो यही वर दीजिये कि जहाँ जल न हो वहाँ मारिये इस वाक्य को सुनकर एवमस्तु, अच्छा कह कर चक्रसुदर्शन को हाथ में लेकर जल के ऊपर श्रीविष्णु भगवान् ने अपनी जंघा को फैलाया तब वे राक्षस अपनी देह एक हजार योजन की किये। तब श्रीविष्णु भगवान् ने दो हजार योजन जंघा फैला कर उन दोनों के शिरको चक्र से काट डाला। इसी से श्रीमन्नारायण भगवान् का मधुजित् नाम पड़ा। यह कथा नवीं अध्याय की है। और मार्कण्डेय पुराण में भी यह कथा है। अब प्रकृत को कहता हूँ कि श्रीमन्नारायण के चरणारविन्द का सुन्दर ज्ञान और प्रेम के अन्तर्भूत सीमा (तस्मै) उस परम दयालु [नाथाय] हमारे स्वामी [नाथ मुनये] जो शाक पत्र मूल फल को भोजन करने वाले तथा बन में निवास करने वाले अर्थात् वेद के आरण्य भाग में निवास करने वाले जो श्री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आचार्यनाथ मुनि स्वामीजी हैं उनके लिये मैं [नमः] प्रणाम साष्टाङ्ग करता हूँ ॥ ५ ॥

श्रीमन्नारायण की प्राप्ति आचार्य के द्वारा ही होती है और आचार्य के संबन्ध स्थित रहने पर ज्ञान भक्ति वैराग्य उत्पन्न होते हैं और आचार्याभिमान ही संसार सागर से पार कर सकता है। इस बात को लोकाचार्य स्वामीजी ने श्रीवचन भूपण में कहा है कि ॥ भगवल्लाभ आचार्येण ॥ सू० ४५५ ॥ *आचार्य सम्बन्धः स्थितश्चेद् ज्ञानभक्ति वैराग्याण्युत्पादयितुं शक्यानि आचार्य सम्बन्धो नष्टश्चेत्तेषां सत्वेऽपि प्रयोजनं नास्ति ॥ ४५८ ॥ आचार्याभिमान एवोत्तारकः ॥ ४६८ ॥ हस्तगतार्थं त्यक्त्वा भूमिनिक्षिप्तमर्थं न वहुमन्येत ॥ ४६९ ॥ पिपासोत्पत्तिसमये करस्थमुदकमुपेक्ष्य जीमूतजलं सागरजलं सरित्सलिलं वापी कूपपयांसि न वांच्छेत ॥ ४७० ॥* आचार्य से भगवत्प्राप्ति होती है ॥ ४५५ ॥ आचार्य के संवन्ध स्थित रहने पर ज्ञान भक्ति वैराग्य उत्पन्न होते हैं और आचार्य के संबन्ध नष्ट होने पर ज्ञान भक्ति और वैराग्य के रहने पर भी कुछ फल नहीं है ॥ ४५८ ॥ आचार्याभिमान ही पार करने वाला है ॥ ४६८ ॥ हाथ में प्राप्त अर्थ को त्याग कर भूमि में गाड़े हुए अर्थ की अत्यन्त भावना न करे ॥ ४६९ ॥ प्यास लगने पर हाथ में मिले हुए जल को छोड़ कर मेघ या समुद्र या नदी या बावड़ी या कूप के जल को कोई भी बुद्धिमान् न चाहे ॥ ४७० ॥ इस आचार्याभिमान का उपदेश देने के लिये स्तोत्ररत्न कर्त्ता श्रीनाथाचार्य स्वामीजी को फिर भी साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८ ९ १
भूयोनमोऽपरिमिताच्युतभक्तितत्त्वज्ञानामृताब्धि
२ ३ ४
परिवाहशुभैर्वचोभिः ।। लोकेऽवतीर्णपरमार्थसमग्र-
७ ५ ६
भक्तियोगाय नाथमुनये यमिनां वराय ।। ६ ।।

अर्थ—(अपरिमिताच्युतभक्ति तत्वज्ञानामृताब्धिपरिवाहशुभैः) परिमाण या सदृश रहित परिपूर्ण च्युतिरहित अर्थात् सर्वदा भूत भविष्य वर्त्तमान इन तीनों कालों में एक रूप रहने वाले श्रीमन्ना-रायण के विषय जो भक्ति और यथार्थ तत्व का ज्ञान या सुन्दर ज्ञान वही हुआ जन्म मरण से रहित करने वाला क्षीरसमुद्र, उस क्षीरसागर का जो परिवाह अर्थात् जल निकलने की गति विशेष झरना या मोरी उसकी नाईं आत्म स्वरूप को प्राप्त कराके कल्याण करनेवाले रमणीय शुभ (वचोभिः) वाक्यों से अर्थात् श्री सूक्तियों से (लोके) इस मृत्युलोक में (अवतीर्ण परमार्थसमग्रभक्ति-योगाय) उत्पन्न जो परमार्थ समस्त भक्तियोग उसके लिये अथवा ब्रह्म प्राप्ति करने वाली जो नवधा भक्ति है उससे समस्त चेतनों का संयोग कराने के लिये अवतार लिया है जिन्होंने उस (यमिनां) यमियों में यमि उसको कहते हैं कि जिसमें यम हो। दश यम हैं। यह वराहोपनिषद् में लिखा है ।। *'अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दयार्जवम्। क्षमाधृतिमिताहारः शौचञ्चेतियमादश'* ।। वरा० अ० ५ मं० १३ ।। अहिंसा १ सत्य २ अस्तेय ३ ब्रह्मचर्य ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दया ५ कोमलता ६ क्षमा ७ धीरता ८ मिताहार ९ शौच १० ये दश यम हैं ॥ १३ ॥ और शाण्डिल्योपनिंषद् में तथा जावालदर्शनोपनिषद् में भी दश यम कहा है, इस बातको भगवान् वेदव्यासजी ने भी ॥ *'एतेनयोगः प्रत्युक्तः'* ॥ इस वेदान्त सूत्र करके कहा है और श्रीभाष्यकार ने भी इस सूत्र के भाष्य में कहा है कि जो वेद से विरुद्ध योग शास्त्र का सिद्धान्त है वह इस सूत्र से खण्डन हो गया। अहिंसा आदि का लक्षण भी शाण्डिल्योपनिषद् में लिखा है। *तत्राहिसानाम मनोवाक्कायकर्मभिः सर्व भूतेषु सर्वदा क्लेशाजननम्* ॥ शा० । मं० । १ ॥ सर्वदा मन वाणी शरीर के कर्म से किसी जीवको दुःख न देना इसको अहिंसा कहते हैं ॥ १ ॥ *सत्यं नाम मनोवाक्कायकर्मभिर्भूत हित यथार्थाभिभाषणम्* ॥ १ ॥ मन वाणी शरीर के कर्म से जीवों के हितार्थ जो यथार्थ कहा जाता है उसको सत्य कहते हैं ॥ १ ॥ *अस्तेयं नाम मनोवाक्कायकर्मभिः परद्रव्येषुनिःस्पृहा* ॥ १ ॥ मन वाणी शरीर के कर्म से दूसरे के द्रव्य में स्पृहा न करना इसको अस्तेय कहते हैं ॥ १ ॥ *ब्रह्मचर्य नाम सर्वावस्थासु मनोवाक्कायकर्मभिः सर्वत्र मैथुनत्यागः* ॥ १ ॥ सब अवस्था में मन वाणी शरीर के कर्म से मैथुन त्याग देना इसको ब्रह्मचर्य कहते हैं ॥ १ ॥ *दया नाम सर्व भूतेषु सर्वत्रांनुग्रहः* ॥ १ ॥ सर्वत्र सब जीवों पर अनुग्रह करना इसको दया कहते हैं ॥ १ ॥ *आर्जवं नाम मनोवाक्कायकर्मणि विहिताविहितेषु प्रवृत्तौ निवृतौ वा एक रूपत्वम्* ॥ १ ॥ वेद विहित या अविहित कायिक वाचिक और मानसिक कर्म में प्रवृत्त हो या निवृत्त हो उन सबों में एकरूपता उसको आर्जव कहते हैं ॥ १ ॥ *क्षमा नाम प्रियाप्रियेषु सर्वेषु ताड़न पूजनेषु सहनम्* ॥ १ ॥ प्रिय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

या अप्रिय करे ताड़े या पूजे इन सबों को सह लेना इसको क्षमा कहते हैं ॥ १ ॥ *धृतिर्नामार्थहानौ स्वेष्टबन्धु वियोगे तत्प्राप्तौ सर्वत्र चेतः स्थापनम्* ॥ १ ॥ अर्थ के लाभ और हानि में तथा अपने इष्ट बन्धु के वियोग और प्राप्ति में सर्वदा चित्त को दृढ़ स्थापन करना इसको धृति कहते ॥ १ ॥ *मिताहारो नाम चतुर्थांशावशेष सुस्निग्ध मधुराहारः* ॥ १ ॥ पेट का चौथा भाग छोड़ कर सुन्दर स्निग्ध मीठा भोजन करना इसको मिताहार कहते हैं ॥ १६ ॥ *'शौचंनाम द्विविधं वाह्यमाभ्यन्तरं चेति तत्रमृज्जलाभ्यां वाह्यंमनःशुद्धिरान्तरम् तदध्यात्मलभ्यम्* ॥ १ ॥ शौच दो प्रकार के होते हैं। एक वाह्य दूसरा अभ्यन्तर शौच होता है। मिट्टी जल से वाह्य शौच होता है। तथा वह अभ्यन्तर शौच ब्रह्म विद्या से प्राप्त होता है ॥ १ ॥ ग्रन्थ के बिस्तार के भय से विशेष शौच का विचार मैं नहीं लिखता हूँ। जिसको जानना हो वह मेरा बनाया हुआ "यतीन्द्र धर्म मार्तण्ड" को देख ले। अब यमिनां इस पद का यह अर्थ हुआ कि अहिंसा आदिक यम को पालन करने वाले योगियों में (वराय) सम्यक् भक्ति करने योग्य और स्वीकार करने योग्य श्रेष्ठ (नाथमुनये) मनन शील तत्व को जानने वाले श्रीनाथाचार्य स्वामीजी के लिये [भूयो] फिर बारंबार [नमः] मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ ॥ ६ ॥

अब ब्रह्म जीव माया ये तीनों अनादि हैं। इस विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के पोषक जो श्रीपराशर ऋषिजी हैं उनके लिये यामुनाचार्य स्वामीजी साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४ १ ३
तत्त्वेनयश्चिदचिदीश्वरतत्स्वभावभोगापवर्गतदुपाय
२ ५ ७ ६ ९
गतीरुदारः । संदर्शयन्निरमिमीत पुराणरत्नं तस्मै
११ ८ १०
नमो मुनिवराय पराशराय ॥ ७ ॥

अर्थ—(यः) जो (उदारः) उदार दयालु श्रेष्ठ श्रीपराशर ऋषिजी (चिदचिदीश्वर तत्स्वभाव भोगापवर्ग तदुपायगतीः) ब्रह्म जीव माया, इन तीनों के गुण स्वभाव, और भोग नाम किंचित् लौकिक सुखानुभव, तथा मोक्ष, और लौकिक सुखानुभव तथा मोक्ष के उपाय की गति को (तत्वेन) यथार्थ रूप से (संदर्शयन्) सम्यक् प्रकार से दिखाते हुए अथवा यथार्थ तत्व के उपदेश करते हुए (पुराण रत्नं) पुराणों में श्रेष्ठ श्रीविष्णु पुराण को [निरमिमीत] बनाये [मुनिवराय] मननशील तत्वों के जानने वाले शाक पत्र मूल फल का भोजन करके बन में रहने वाले मुनियों में श्रेष्ठ सबके स्वीकार करने योग्य तथा सम्यक् प्रकार से भक्ति करने योग्य [तस्मै] उस प्रसिद्ध [पराशराय] वैदिक सिद्धान्त के विरोधी शत्रुओं को भलीभांति पराजय करने वाले ऋषि पराशराचार्य के लिये [नमः] मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ। बहुत से आधुनिक अल्पज्ञ लोग यहाँ शङ्का करते हैं कि यद्यपि पुराणों में तत्वत्रय अनादि स्थापन किया गया है परन्तु उपनिषदों में तीनों तत्वों को कहनेवाली श्रुतियां नहीं है। इस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शङ्का के निराकरण करने के लिये कुछ श्रुतियों को मैं यहाँ दिखाता हूँ ॥ *'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां वह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः । अजाह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां मुक्तभोगामजोऽन्यः ॥'* श्वेताश्वरोप० । अ० । ४ । मं ५ ॥ *ज्ञाज्ञौद्वावजावीशानीशावजाह्येका भोक्तृभोगार्थयुक्ता* ॥ श्वेताश्व० । अ० । १ । मं० । ६ ॥ *'द्वासुपर्णासयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते' तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति* । मुण्ड० । ३ । खं० । १ । मं० १ ॥ *'समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः । जुष्टो यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीत शोकः* ॥ २ ॥ *ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्द्धे । छायातपौ ब्रह्मोविदोवदन्ति पञ्चाग्नयो ये च त्रिणाचिकेताः ॥'* कठोपनिष० । अ० । १ । वल्ली० । ३ । मं० १ ॥ *'नित्योनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनांयो विदधाति कामान्* ॥ कठो० । अ० । २ । व० । ५ । मं० । १३ ॥ ये सब श्रुतियां तत्वत्रय को अनादि कहती हैं और भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी भी तत्वत्रय के अनादित्व का ही उपदेश दिये हैं कि ॥ *'प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्धयनादी उभावपि ॥'* गी० । अ० । १३ । श्लो० । १६ ॥ प्रकृति और पुरुष इन दोनों को अनादि जानो ॥ १६ ॥ और भी कहे हैं कि ॥ *द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च । क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते* ॥ गी० । अ० । १५ । श्लो० । १६ ॥ *'उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः'* ॥ १७ ॥ लोक में दो प्रकार के पुरुष हैं एक क्षर और दूसरा अक्षर है । उसमें ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यन्त क्षर पुरुष हैं और कूटस्थमुक्तात्मा अक्षर पुरुष है यह ऋषियों ने कहा है ॥ १६ ॥ और इन दोनों से अन्य उत्तम पुरुष है जिनको

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...पुस्तकालय, ...निधि, करौंदी, वाराणसी-5

परमात्मा कहते हैं ॥ १७ ॥ इन प्रमाणों से स्पष्ट तत्त्वत्रय अनादि मालूम होता है । इस परम वैदिक मत के पोषक जो श्रीपराशर ऋषिजी हैं उनके लिये मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ ॥ ७ ॥

अब कलियुग के आदि में द्राविड़ देश में ताम्रपर्णी और कावेरी नदी के तट पर कुरुकापुरी अर्थात् आल्वारतिरुनगरी नाम के ग्राम में जो नाथाचार्य स्वामीजी के आचार्य श्रीशठकोपाचार्य स्वामीजी अवतार लिये थे जिनके अवतार के विषय में श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्ध में लिखा है ॥ *'कृतादिषु प्रजा राजन्कलाविच्छन्ति संभवम् । कलौ खलु भविष्यन्ति नारायण परायणाः ॥* भाग० । स्क० । ११ । अ० । ५ । श्लो० । ३८ ॥ *कचित्कचित्महाराज द्रविड़ेषु च भूरिशः । ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी ॥ ३९ ॥* ऐ राजन् ! कृतयुग आदि में जो नित्यमुक्त जीव थे वे कलियुग में चेतनों के उद्धार के लिये उत्पन्न होना चाहते हैं । वे कलियुग में श्रीमन्नारायण के अनन्य भक्त होंगे ॥ ३८ ॥ हे महाराज ! वे अनन्य भक्त कहीं कहीं अवतार लेंगे और द्रविड़ देश में जहां पर ताम्रपर्णी कृतमाला पयस्विनी कावेरी ये नदियाँ बहती हैं वहाँ पर विशेष रूप से अवतार लेंगे ॥ ३९ ॥ पुराण के इन श्लोकों से स्पष्टसिद्ध दिव्यमूरि श्रीशठकोपाचार्य स्वामीजी हैं उनके लिये स्तोत्र रत्न कर्त्ता साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं ।

२ ३ ४ ५ ६ ९ ७ ८

माता पिता युवतयस्तनया विभूतिस्सर्वं यदेव

१० १ ११ १२ १३

नियमेन मदन्वयानाम् । आद्यस्यनः कुलपते-

६

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[१४]बकुलाभिरामं [१५]श्रीमत्[१६]तदंघ्रि युगलं [१८]प्रणमामि [१७]मूर्ध्ना ॥ ८ ॥

अर्थ—(मदन्वयानाम्) हमारे वंश में उत्पन्न होनेवाले पुरुषों के, अर्थात् श्री संप्रदायावलम्बी जनों के [माता] मान करनेवाली माता तथा [पिता] रक्षा करनेवाले पिता (युवतयः) साथ रहनेवाली अर्धाङ्गिनी स्त्रियां [तनयाः] तन से उत्पन्न होनेवाले पुत्र पुत्रियां [विभूतिः] अन्न धन पृथ्वी इत्यादि ऐश्वर्य [यत्] जो [एव] ये [सर्वम्] पदार्थ हैं ये सब (नियमेन) निश्चय नियम करके (आद्यस्य) कलियुग में श्री संप्रदाय के प्रवर्तक प्रथम आचार्य (नः) हम सबों के (कुलपतेः) कुल के रक्षक स्वामी जो श्रीशठकोपाचार्य स्वामीजी हैं उनके [बकुलाभिरामं] मौलेसरी के फूल के समान मनोहर अत्यन्त रमणीय [श्रीमत्] तथा शोभा और संपत्ति के धारण करनेवाले [तदंघ्रियुगलं] जो चरण युगल हैं, अर्थात् ये सब पदार्थ जिनके चरण युगल से ही प्राप्त हैं उन युगल चरण की मैं [मूर्ध्ना] मस्तक से [प्रणमामि] साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूं। इस श्लोक से यह सिद्ध हुआ कि शिष्य के लिये सब पदार्थ आचार्य ही हैं यह बात लोकाचार्य स्वामीजी भी श्रीवचन भूषण में कहे हैं कि॥ *'मंत्रो देवताफलं फलानुबन्धिनः फलसाधनमैहिक भोगश्चैते सर्वे आचार्य एवेत्यनुसन्धानं कुर्यात् ॥* सू० । ३५१ ॥ फलानुबन्धिन जो मंत्र है तथा फल का साधन जो देवता है और ऐहिक भोग जो फल है ये सब पदार्थ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आचार्य ही हैं। इस प्रकार सर्वदा शिष्य अनुसन्धान करे ॥३४१॥ इस बात का उपदेश देने के लिये श्रीशठकोपाचार्य स्वामीजी के चरण युगल को मस्तक से साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं ॥ ८ ॥

अब श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी स्तोत्ररत्न की समाप्ति पर्यन्त अपार कारुण्य सौशील्य सौलभ्य वात्सल्य औदार्य ऐश्वर्य महोदधि और अतिशय ज्ञान बल वीर्य शक्ति तेज आदि अनेक कल्याण गुणगण निधि तथा संसार के समस्त दोषों से रहित प्रणतार्तिहर श्रीसन्नारायण भगवान् की स्तुति करते हैं।

१२ ४ ३ ५ ७ ६ ८
यन्मूर्ध्नि मे श्रुतिशिरस्सु च भाति यस्मिन्न-
९ १० ११ १७
स्मन्मनोरथ पथः सकलः समेति। स्तोष्यामि
१३ १४ १५ १६ २
नः कुलधनं कुलदैवतं तत्पादारविन्दम-
१
रविन्दविलोचनस्य ॥ ९ ॥

अर्थ—(अरविन्द विलोचनस्य) कमल के समान नेत्र वाले पुण्डरीकाक्ष भगवान् के, पुण्डरीकाक्ष श्रीसन्नारायण का नाम है, क्योंकि उनका पुण्डरीक के समान नेत्र है। यह उपनिषद् में लिखा है कि ॥ *'तस्य यथा कप्यासं पुण्डरीकमेवमक्षिणी ॥* छान्दोग्योप० ।३। खं०।६। मं०।७॥ सूर्य की किरणों से खिला हुआ जो कमल उसके समान श्रीसन्नारायण भगवान् के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोनों नेत्र हैं ॥ ७ ॥ उस कमलनयन भगवान् के (पादारविन्दं) चरणारविन्द (मे) इस अकिञ्चन दास के या मेरे (मूर्ध्नि) आज्ञाचक्र के ऊपर ॥ 'सहस्र दल संख्यातं ब्रह्मरंध्रे महापथि ॥' योगचूडा० । मं० । ५ ॥ मस्तक में जो ब्रह्मरन्ध्र मार्ग है वहां पर जो हजार दल वाला कमल है उसमें या मस्तक के ऊपर तथा जो (श्रुतिशिरस्सु) वेद के शिरो भाग जो वेदान्त है उसमें (भाति) प्रकाशित हो रहा है (च) और (यस्मिन्) जिस चरणारविन्द में (अस्मन्मनोरथपथः) हम सबके मनोरथों का मार्ग (सकलः) समस्त सपूर्ण (समेति) सम्यक् प्रकार से प्राप्त करता है (यत) और जोचरणारविन्द (नः) हम सबों के [कुलधनं] कुल का. अर्थात् वैष्णवों का मूलधन है और [कुलदैवतं] वंश परम्परा से कुल के देवता रूप है [तत्] वह श्रुतिस्मृति इतिहास पुराण प्रसिद्ध जो श्रीमन्नारायण भगवान् का चरणारविन्द है उसकी [स्तोष्यामि] मैं स्तुति करूँगा अथवा मैं स्तुति करता हूं ॥ ६ ॥

अब श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि जिस श्रीमन्नारायण के ध्यान की महिमा का अन्त ब्रह्मादिक देवता भी नहीं जानते हैं, क्योंकि भागवत में लिखा है कि ॥ '*यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैर्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः । ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥*' जिस श्रीमन्नारायण देव की ब्रह्मा वरुण इन्द्र रुद्र और मरुद्गण दिव्य स्तोत्रों से स्तुति करते हैं। और सामवेद के गानेवाले लोग शिक्षाकल्प व्याकरण निरुक्त छन्द ज्योतिष इन षडङ्गों के साथ पद क्रम और उपनिषदों से तथा ऋग् यजुः साम अथर्वण इन चारों वेदों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से जिसको गाते हैं और जिसमें मन लगा कर ध्यानावस्थित हो योगी लोग देखते हैं और जिस देव के अन्त को देवता या राक्षस-गण कोई नहीं जानते हैं इस श्रीमन्नारायण देव के लिये मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ ॥ एवंभूत श्रीमन्नारायण की स्तुति करने में मैं असमर्थ हूँ ।

४ १ २ ७ ६ ५ ८

तत्त्वेन यस्य महिमार्णवशीकराणुः शक्योनमातुमपि

३ १० ९ ११

सर्वपितामहाद्यैः। कर्तुं तदीयमहिमस्तुतिमुद्यताय

१४ १५ १६ १३ १२

मह्यं नमोस्तु कवये निरपत्रपाय ॥ १० ॥

अर्थ—[यस्य] जिस अखिल ब्रह्माण्ड नायक श्रीमन्नारायण भगवान् की [महिमार्णवशीकराणुः] महिमारूप समुद्र के विन्दु की कणिका को भी [सर्वपितामहाद्यैः] रुद्र चतुर्मुख इन्द्र आदि देवता (तत्त्वेन) यथार्थ रूप से [मातुं] इतना ही है ऐसा परिच्छेद अन्दाजा करने के लिये [न] नहीं [शक्यः] समर्थ हैं, अर्थात् भगवान् का प्रभाव इतना ही है ऐसे निरूपण करने में असमर्थ हैं [अपि] तो (तदीयमहिमस्तुति) उस परमात्मा श्रेष्ठदेव की महिमा की स्तुति को [कर्तुं] करने के लिये (उद्यताय) उद्यत तैयार हुए [निरपत्रपाय] निर्लज्ज [कवये] कवितारूप स्तोत्र करने वाले [मह्यं] मेरे जैसे निर्लज्ज को [नमः] नमस्कार [अस्तु] है। क्योंकि जिस भगवान् की महिमा को शंकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जी भी नहीं जानते। यह साक्षात् शंकरजीने अपने मुख से श्रीमद् भागवत के अष्टम स्कन्ध के बारहवें अध्याय में कहा है कि। 'नाहं परायुर्ऋषयो न मरीचिमुख्या जानन्ति यद्विरचितं खलुसत्वसर्गाः ।।' भाग०। स्कं०।८।अ०। १२ श्लो०।१०।। आप से विरचित जो आप की महिमा है उसको दीर्घायु मैं और सात्विक श्रेष्ठ मरीचि आदि ऋषि भी निश्चय करके नहीं जानते हैं।। १०।। और श्रीमन्नारायण की महिमा को ब्रह्मा भी नहीं जानते हैं। यह साक्षात् चतुर्मुख ने अपने मुख से श्रीमद्भागवत् के दशम स्कन्ध के पूर्वार्ध चौदहवें अध्याय में स्तुति करते हुए कहा है कि।। 'अतः क्षमस्वाच्युत मे रजोभुवोह्यजानतस्त्वत्पृथगीशमानिनः।। भाग०। स्कं०।१०। पूर्वा०। अ० १४। श्लो० १०।। हे अच्युत भगवन्। आपकी महिमा को न जानता हुआ और आपसे पृथक् अपने को स्वतन्त्र सृष्टिकर्त्ता मालिक माननेवाला रजोगुण से उत्पन्न मैं ब्रह्मा हूँ, तथा मैंने गोवत्सोंका चुराना रूप जो अपराध किया है इसको आप क्षमा कीजिये क्योंकि मैंने आपकी महिमा को नहीं जाना।। १०।। और श्रीमन्नारायण भगवान् की महिमा को इन्द्र भी नहीं जानते हैं क्योंकि इन्द्र ने अपने मुख से स्पष्ट श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध पूर्वार्ध के सत्ताइसवें अध्याय में कहा है कि।। सत्वं ममैश्वर्यमदप्लुतस्य कृतागसस्तेऽविदुषःप्रभावम्। क्षन्तुं प्रभोऽथार्हसि मूढ़चेतसोमैवंपुनर्भून्मतिरीश ! मेऽसती ।। भाग०। स्कं०।१०। पूर्वा०।अ०।२७। श्लो०।८।। हे ईश ? भगवन् ऐश्वर्यमद को पा करके अत्यन्त मोहित चित्तवाला अपराध पाप को करनेवाला मैंने आप की महिमा को न जान करके जो यह मूसलाधार वृष्टि संवर्तक मेघ द्वारा करवाया इस अपराध को हे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रभो ? क्षमा कीजिये । और फिर कभी आप के विषय में मेरी बुद्धि ऐसी बुरी न हो ॥ ८ ॥ इन प्रमाणों से स्पष्ट विदित होता है कि श्रीमन्नारायण भगवान् की महिमा को रुद्र आदिक देवता भी नहीं जानते हैं । उस महिमा की स्तुति मैं मूढ़ कैसे करूंगा ॥१०॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि यदि अखिल ब्रह्माण्डनायक की महिमा वर्णन करने में ऋग् यजुः साम अथर्व वेद तथा ब्रह्मा रुद्र इन्द्र शेष आदि असमर्थ हैं तथापि स्तुति करते हैं तो वैसे ही मैं भी यथा शक्ति स्तुति करूंगा ॥

१ २ ३ ४ ६ ५ ९ ७ ८
यद्वाश्रमावधि यथामति वाप्यशक्तः स्तौम्येवमेव
१० १४ १३ ११ १२ १५ १७ १६
खलु तेपि सदास्तुवन्तः । वेदाश्चतुर्मुखमुखाश्च
१८ २१ २० १९ २२
महार्णवान्तः को मज्जतोरणुकुलाचलयोर्विशेषः॥११

अर्थ—(यद्वा) अथवा (श्रमावधि) अर्थात् स्तुति करने में मैं जब तक न थकूँगा (यथामति) और अपनी मति के अनुसार, मति किसको कहते हैं यह लिखा है कि ॥ *'मतिरागामिगोचरा ॥'* जिससे भविष्य बात जाना जाता है उसको मति कहते हैं (वा) अथवा (अशक्तः) जब तक मेरी शक्ति नष्ट नहीं हो जायगी तब तक अयोग्य या असमर्थ मैं हूं [अपि] तौभी [एवं] इस प्रकार से [एव] निश्चय करके टूटे फूटे शब्दों से [स्तौमि] मैं भगवान् की स्तुति करता हूँ [खलु] निश्चय करके [सदा] सर्वदा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सर्वकाल में [स्तुवन्तः] स्तुति करने वाले [अपि] भी [ते] वे सब [वेदाः] ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद [च] और (चतुर्मुखमुखाः) ब्रह्मा रुद्र इन्द्र शेष वरुण यम कुवेर आदिक देवता [मज्जन्ति] अर्थात् भगवान की महिमा रूपी समुद्र में डूब जाते हैं। तात्पर्य यह हुआ कि स्तुति करनेवाले ब्रह्मादिक देवता तथा समस्त वेद ये सर्वदा स्तुति करते ही हैं तथापि श्रीमन्नारायण भगवान् की महिमा का यथावत् निरूपण नहीं कर सकते तो विचारिये कि [महार्णवान्तः] बड़ा भारी समुद्र के मध्य में [अणुकुलाचलयोः] परमाणु और कुलाचल पर्वत ये दोनों जब (मज्जतोः) डूबने लगे तब इन दोनों में [कः] क्या [विशेषः] विशेषता रही अर्थात् इनकी बड़ाई छोटाइं क्या रही। परमाणु का लक्षण यह है कि ॥ *'जालान्तरगते भानौ सूक्ष्मं यद्दृश्यते रजः तस्य षष्ठितमो भागः परमाणुस्तदुच्यते ॥'* झरोखे में सूर्य की किरण जाने से घर में उड़ती हुई जो छोटे २ धूलिकण दिखाई देते हैं उसके साठवें भाग को परमाणु कहते हैं। यामुनाचार्य स्वामीजीका इस श्लोक में यह भाव है कि श्रीमन्नारायण भगवान् की स्तुति करने में मेरी और ब्रह्मादिक देवताओं का असामर्थ्य तुल्य ही है ॥ ११ ॥

अब स्तोत्ररत्न कर्त्ता यह कहते हैं कि यह अकिञ्चन जन आपकी दया के योग्य है और यदि आप की कृपा हो जायगी तो मैं आनन्द से स्तुति करूंगा।

१ ४ ५ ८ ६ ७ ३ ९
किंचैष शक्त्यतिशयेन न तेऽनुकंप्यः स्तोता पितुः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०　　११　　१३　१६　१२　१७　१५
स्तुतिकृतेन परिश्रमेण । तत्र श्रमस्तुसुलभो मम
१४　　१९　२१　　२०　२३　　२२　१८　२
मन्दबुद्धेरित्युद्यमोयमुचितो मम चाब्जनेत्र ॥१२॥

अर्थ—[किंच] तथा और [अब्जनेत्र ?] हे कमलके समान नेत्र वाले पुण्डरीकाक्ष भगवान् [स्तोता] आपकी स्तुति करने वाला [एषः] यह अकिंचन जन [शक्त्यतिशयेन] स्तुति करने के अत्यन्त सामर्थ्य से [ते] आपकी [अनुकंप्यः] दया के योग्य (न) नहीं है किन्तु [पितुः] समस्त चर अचर के रक्षक या जनक आप संसार भर के पिता श्रीमन्नारायण हैं यह श्रीभगवद्गीता में लिखा हुआ है कि ॥ *'पितासि लोकस्य चराचरस्य ॥'* गी अ० । ११ । श्लो० । ४३ ॥ इस संपूर्ण चर अचर संसार के आप पिता हैं ॥ ४३ ॥ उस पिता आपकी (स्तुतिकृतेन) स्तुति करने से उत्पन्न (परिश्रमेण) परिश्रम थकावट करके यह जन दया का पात्र है (तु) किन्तु (तत्र) उस स्तोत्र रत्न करने में [मन्दबुद्धेः] अल्प या मन्द बुद्धि वाले, बुद्धि की परिभाषा यह है कि ॥ *'सर्वव्यवहार हेतुर्ज्ञानंबुद्धिः ॥'* संपूर्ण व्यवहारों के कारणीभूत ज्ञान को बुद्धि कहते हैं ॥ [मम] आपके शेष मेरा [श्रमः] यह परिश्रम [सुलभः] सुलभ है [च] और [इति] इस कारण से (अयं) यह स्तोत्र करने का जो [उद्यमः] उद्योग है वह (मम) मेरे स्वरूप के [उचितः] उचित अनुरूप ही है ॥ १२ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब यह यामुनाचार्य स्वामीजी कहते हैं कि यदि सर्व शेषी सर्वस्वामी सर्व रक्षक दीन दयालु अपार कृपासिन्धु आप हैं तो आश्रित के ऊपर कटाक्षपात होजा कुछ आश्चर्य नहीं है।

५ ६ २ ७ ४ ३ १० ११ १ ८
नावेक्षसे यदि ततोभुवनान्यमूनिनालं प्रभो भवि-
९ १३ १२ १७ १६ १७ १५
तुमेवकुतः प्रवृत्तिः । एवं निसर्गसुहृदित्वयिसर्व
१४ २० १८ १९
जन्तोःस्वामिन्नचित्रमिदमाश्रितवत्सलत्वम् ॥ १ ३॥

अर्थ--[प्रभो] हे श्रीमन्नारायण स्वामिन्! (यदि) जो आप (अमूनि) इस समस्त (भुवनानि) भुवनों को अर्थात् अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महीतल, पाताल तथा भूर्लोक भूवर्लोक स्वर्लोक महर्लोक जनलोक तपलोक सत्यलोक इन सबों को यदि आप (न) नहीं (अवेक्षसे ; कृपा कटाक्ष से देखें अथवा यदि अपनी इच्छा न करें (ततः) तो [भवितुं] उत्पन्न होने के लिये (एव) ही निश्चय करके [न] नहीं [अलं] समर्थ हो सकते हैं क्योंकि भगवान् के संकल्प रूपी इच्छा से ही सृष्टि होती है। यह उपनिषदों में लिखा हुआ है कि ॥ *'तदैक्षत वहुस्यां प्रजायेयेति ॥'* छान्दोग्यो० । प्रपाठ० । ६ । खं० । २ । मं० ३ ॥ उस भगवान् ने ईक्षण किया कि मैं वहुत हो जाऊँ ॥ ३ ॥ और तैत्तिरीयोपनिषद् में स्पष्ट लिखा हुआ है कि ॥ *'सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेयेति ॥'* तैत्ति० । आनन्दव० । २ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुवा० । ६ ।। उस श्रीमन्नारायण भगवान् ने ईक्षण किया कि मैं बहुत हो जाऊं।। ६ ।। अर्थात् हे स्वामिन् यदि आप कृपाकटाक्ष न करें तो इस भुवन की उत्पत्ति होना ही मुश्किल है तो (प्रवृत्तिः) व्यवहार (कुतः) कहां से हो सकता है (स्वामिन्) हे षडैश्वर्य संपन्न भगवन् ! (सर्वजन्तोः) समस्त अण्डज, पिण्डज, ऊष्मज, स्थावर जीवों के (निसर्ग सुहृदि) स्वभाव से ही उपकार न चाहते हुए निर्हेतुक कृपा कटाक्ष से हित करने वाले (त्वयि) आप से (इदं) यह [आश्रितवत्सलत्वं] भक्त वात्सल्य अर्थात् भक्तों के दोषों को भोग रूप मान लेना [अचित्रं] आश्चर्य नहीं है क्यों कि आप में वात्सल्य गुण है। वात्सल्य गुण उसको कहते हैं कि बछड़ों को उत्पन्न करने वाली गौ में जो गुण है, वैसे ही गुण वाले उसमें यह गुण है कि उत्पन्न बछड़ा गौ से नहीं कहता है कि ऐ माँ मेरे शरीर के मल को दूर करो फिर भी गौ अपनी जीभ से मल को चाटकर दूर कर देती हैं। वैसे ही श्रीमन्नारायण भगवान् अपने भक्तों के दोषों को कृपा कटाक्ष के पात से दूर करके अपना लेते हैं ।। १३ ।।

अब स्तोत्र रत्न कर्त्ता यह कहते हैं कि ब्रह्मादिक देवता आपके शरीर से उत्पन्न हैं क्योंकि सबसे पहले केवल एक श्रीमन्नारायण आप ही उत्पन्न हुए थे। यह शुक्ल यजुर्वेद में लिखा है कि ।। *'पूर्वोयो देवेभ्योजातः ।।'* यजु० । अ० । ३१ । मं० । २० ।। जो श्रीमन्नारायण भगवान् संपूर्ण देवताओं से पहले अपने आप उत्पन्न हुए ।। २० ।। और भी लिखा है कि ।। *'दिव्यो देव एको नारायणो न ब्रह्मानेशानः ।।'* नारायणोपनिषद् में लिखा है कि सृष्टि के आदि में दिव्य देव एक नारायण ही थे ब्रह्मा या रुद्र उस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समय नहीं थे। जब भगवान् को सृष्टि करने की इच्छा हुई तो श्रीमन्नारायण के नाभी से कमल हुआ और कमल से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए यह कथा पद्म पुराण और श्री मद्भागवत में स्पष्ट लिखी हुई है। और श्रीमद्भागवत के तृतीय स्कन्ध के बारहवें अध्याय में यह लिखा है कि प्रजापति ब्रह्मा ने सनक सनन्दनसनातन और सनत्कुमार को मन से उत्पन्न करके कहा कि तुम सब सृष्टि करो परन्तु मोक्षपरायण भगवद्भक्त सनकादिक उस बात को न स्वीकार किये तब ब्रह्मा को बड़ा भारी क्रोध उत्पन्न हुआ और ॥ 'धिया निगृह्यमाणोऽपि भ्रुवोर्मध्यात्प्रजापतेः। सद्योऽजायत तन्मन्युः कुमारो नीललोहितः ॥' भा० । स्क० । ३ । अ० । १२ । श्लो० ७ ॥ सवै रुरोद देवानां पूर्वजो भगवान् भवः नामानि कुरु मेधातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥ ८ ॥ इति तस्य वचः पाद्मोभगवान् परिपालयन्। अभ्यधाद्भद्रयावाचा मारोदीस्तत्करोमिते ॥ ९ ॥ यदरोदीः सुरश्रेष्ठ सोद्वेगइव बालकः। ततस्त्वामभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्र इति प्रजा ॥ १० ॥ बुद्धि से क्रोध को रोकने पर भी उस ब्रह्मा के दोनों भौहों के बीच से वह क्रोध शीघ्र ही नील लोहित कुमार रूप में उत्पन्न हुआ। इन्द्रादि देवों के पूर्वज वह भव भगवान् रोये और कहे कि हे जगद्गुरो ब्रह्मन्? आप मेरा नामकरण कीजिये और स्थान भी कीजिये ॥ ८ ॥ इस वाक्य को सुनकर ब्रह्माने दौड़कर कोमल एवं सुन्दर वाक्य कहा कि रोओ मत मैं तुम्हारा नाम करण करता हू ॥ ९ ॥ कि हे सुरश्रेष्ट। आपने उद्विग्न बालक के समान रोदन किया है इससे आपको सभी लोग रुद्र कहेंगे ॥ १० ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि रुद्र के जनक ब्रह्मा हैं और उसी ब्रह्मा के मन से मरीचि ऋषि उत्पन्न हुए हैं और उस मरीचि से कश्यप ऋषि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न हुए और कश्यप ऋषि से इन्द्र देव उत्पन्न हुए तो इस तरह से ब्रह्मादि देव आपके अङ्गभूत हैं। इसलिये आपके ऐश्वर्य को कौन वैदिक पुरुष नहीं सह सकता है।

३ १
स्वाभाविकानवधिकातिशयेशितृत्वं नारायण
२ ६ ७ ५ ४ ८ ९ १०
त्वयि न मृष्यति वैदिकः कः। ब्रह्मा शिवः शत-
११ १२ १३ १४ १५ १६ १८
मखः परमः स्वराडित्येतेऽपि यस्य महिमार्णव
१७
विप्रुषस्ते ॥ १४ ॥

अर्थ—(नारायण) हे जगदाधार ! नित्य वस्तुओं के निवास-स्थान, अथवा नारायण शब्द का यह अर्थ कि॥ '*आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः। ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः॥* मनु०। अ०। १। श्लोक। १०॥ जल नर से उत्पन्न है इस कारण से जल का नाम नार है। वे ही नार इस परमात्मा के प्रथम सृष्टि के आदि में निवास स्थान हैं। उससे इस परमात्मा का नाम नारायण हुआ॥ १०॥ हे नारायण पतितपावन, नारायण शब्द पतितों को पवित्र करने वाला है यह स्पष्ट श्रीमद्भागवत के छठे स्कन्ध के पहले अध्याय में अजामिल ब्राह्मण की कथा में लिखा हुआ है, और साक्षात् ब्रह्माने भी अपने मुखसे कहा है कि॥ '*ये मानवा विगतरागपरावरज्ञा नारायणं सुरगुरुं सततं स्मरन्ति।*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ध्यानेन तेन हतकिल्बिषचेतनास्ते मातुः पयोधररसं न पुनः पिबन्ति ॥' पां० गी० श्लो० । ३ ॥ और इन्द्र ने भी कहा है कि ॥ *'नारायणो नाम नरो नराणां प्रसिद्ध चौरः कथितः पृथिव्याम् । अनेकजन्मार्जित पापसंचयं हरत्यशेषं स्मरतां सदैव ॥'* पाण्ड० । गी० । श्लो० । ४ ॥ तथा शुक्राचार्य ने भी कहा है कि ॥ *आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्यैवं पुनः पुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥* पां० । गी० । श्लो० । ७३ ॥ महादेवजी ने भी कहा है कि ॥ *'शरीरं च नवच्छिद्रं व्याधिग्रस्तकलेवरम् । औषधं जान्हवीतोयं वैद्यो नारायणोहरिः ॥'* पां० । गी० । श्लो० ७४ ॥ इस प्रमाण से स्वतः सिद्ध सर्वाराध्य सर्वध्येय संसारसागरोत्तारक ऐ अखिल ब्रह्माण्डनायक श्रीमन्ना-रायण भगवान् ! (त्वयि) आपके विषय में [स्वाभाविकानवधि-कातिशयेशितृत्वं] स्वभाव से सिद्ध अवधि या सीमा रहित अतिशय अत्यन्त जो ईश्वरपना है उसको [कः] कौन [वैदिकः] वेदपाठी या वेद के मार्ग से चलने वाला वैदिक पुरुष (न) नहीं [मृष्यति] सहन करता है, अर्थात् जो वैदिक है वह तो सभी सहन कर सकता है [ब्रह्मा] वेद को जानने वाला प्रजापति ब्रह्मा तथा [शिवः] त्रिपुरासुरको मार कर देवों के कल्याण करने वाले शङ्कर भगवान् [शतमखः] तथा सौ यज्ञ करनेवाला इन्द्र (परमः) उत्कृष्ट श्रेष्ठ [स्वराड्] स्वतंत्र जीव अर्थात् मुक्त जीव, क्योंकि लिखा है कि ॥ *'स स्वराड्भवति ॥'* मुक्त जात्र भोग के विषय में स्वतंत्र हो जाता है । इस बात को भगवान् वेदव्यास जी ने भी कहा है कि ॥ *'जगद्व्यापारवर्जं प्रकरणादसन्निहितत्वाच्च ॥ भोग मात्र साम्यलिङ्गाच्च ॥'* मुक्त जीव भी संसार की रचना रूप व्यापार को नहीं कर सकता है क्योंकि ईश्वर का प्रकरण होने से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और मुक्त जीवके सन्निहित न होने से ईश्वर ही संसार का कर्ता है और मुक्त जीव का ईश्वर के तुल्य केवल भोग ही होता है ॥ अथवा वह मुक्त जीव कर्म परतन्त्र न होकर स्वीय रूप से प्रकाशित होता है । इन सूक्तियों से जो लोग मुक्तावस्था में जीव ब्रह्म हो जाता है यह मानते हैं वह खण्डित हो गया, [इति] ब्रह्मा रुद्र इन्द्र मुक्त जीव [एते] ये सब [अपि] भी [यस्य] जिस [ते] आप श्रीमन्नारायण भगवान् के [महिमार्णवविप्रुषः] महिमा रूपी समुद्र के विन्दु नाम एक कणिका रूप हैं अर्थात् जैसे समुद्र से विन्दु उत्पन्न होता है वैसे ही श्रीमन्नारायण भगवान् से ब्रह्मादि देव आविर्भूत हैं ॥ १४ ॥

अब श्रीमन्नारायण भगवान् के अत्यन्त महिमा को स्तोत्र रत्न कर्ता वर्णन करते हैं ।

३ २ १ ४ ५ ७

कः श्रीः श्रियः परमसत्त्वसमाश्रयः कः कः

६ ८ ९ १० ११

पुण्डरीकनयनः पुरुषोत्तमः कः। कस्यायुतायुत-

१२ १३

शतैककलांशकांशे विश्वं विचित्रचिदचित्प्र-

विभागवृत्तम् ॥ १५ ॥

अर्थ—हे भगवन् आपके बिना [श्रियः] जगत् जननी सभी के समाश्रयण करने योग्य श्रीलक्ष्मी देवीजी की [श्रीः] शोभा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करने वाला अर्थात् श्री को श्रियत्व देनेवाला [कः] कौन है अर्थात् कोई नहीं, क्योंकि शुक्ल यजुर्वेद में लिखा है कि ॥ *'श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्यौ ॥'* यजु० । अ० । ३१ । मं० । २२ ॥ श्री और लक्ष्मी ये दो श्रीमन्नारायण की स्त्रियाँ हैं ॥ २२ ॥ इसी कारण से जब समुद्र मथन समय में श्रीलक्ष्मीजी उत्पन्न हुईं तब संपूर्ण देवतागण असुरगण की इच्छा हुई कि यह श्रीलक्ष्मी देवी मुझको मिले परन्तु आकारत्रय सम्पन्ना श्रीलक्ष्मी देवी ने अपने आप श्रीमन्नारायण को पति जान कर स्वीकार कर लिया। यह कथा श्रीमद्भागवत के आठवें स्कन्ध के आठवें अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है। [परम सत्व समाश्रयः] और श्रेष्ठ शुद्ध सत्वगुण के आधार भी आपके बिना (कः) और कौन है, अर्थात् कोई नहीं। तात्पर्य इसका यह है कि शुद्ध सत्व गुण के आधार सबसे श्रेष्ठ श्रीमन्नारायण भगवान् हैं। यह कथा श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध उत्तरार्ध ८९ अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है, कि सरस्वती नदी के तट पर ऋषि लोग यज्ञ किये और आपस में तर्क करने लगे कि ब्रह्मा विष्णु रुद्र तीनों में कौन बड़ा है। इस बात को जानने के लिये ब्रह्मा के पुत्र भृगु मुनि को सब ऋषियों ने भेजा। भृगु मुनि पहले अपने पिता ब्रह्मा के पास गये परन्तु उनके सत्व गुण की परीक्षा करने के लिये साष्टाङ्ग प्रणाम नहीं किये तो ब्रह्मा ने भृगु मुनि को मारने के लिये ब्रह्मास्त्र लेकर बड़ा क्रोध किया। परन्तु उनकी स्त्री ने उस क्रोध को शान्त किया, इसके बाद भृगुजी कैलाश को गये तो महादेवजी ने भाई को आते देखकर आनन्द से अङ्कमालिका करना चाहा परन्तु भृगुजी ने अपना शरीर उनसे मिलने न दिया और कहा कि तुम वाम मार्ग से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चलने वाले हो । इस बात को सुनकर श्रीरुद्रजी ने भृगु मुनि को मारने के लिये त्रिशूल उठाया परन्तु पार्वती देवी ने पति के पैरों पर पड़ कर कोमल वाक्यों से शान्त किया । इसके बाद भृगु मुनि ने वैकुण्ठ में प्रस्थान किया कि जहाँ पर श्रीमन्नारायण भगवान् रहते हैं । श्री देवी के अङ्क में सोये हुए नारायण भगवान् की छाती में भृगुजी ने पैर से मारा । इसके बाद लक्ष्मी देवी के साथ भगवान् ने पलङ्ग से उतर कर भृगुमुनि को प्रणाम किया और कहा कि हे मुने ? आप का स्वागत हो, इस आसन पर बैठिये और मैंने आपको आया न जान करके जो अपराध किया उसको क्षमा कीजिये, और ब्राह्मण का चरण अत्यन्त कोमल होता है इससे मारने में आप को चोट लगी होगी ऐसा कह कर भगवान् अपने हाथों मुनि के चरण को दबाने लगे । अस्तु इस समस्त वृत्तान्त को फिर भृगु मुनि ने संपूर्ण ऋषियों के पास आकर कहा ॥ *'तन्निशम्याथ मुनयो विस्मिता मुक्तसंशयाः । भूयांसं श्रद्दधुर्विष्णुं यतः शान्तिर्यतोऽभयम् ॥ १५ ॥'* भृगु मुनि के वाक्य को सुनकर सब मुनि आश्चर्ययुक्त हो गये और संदेह रहित होकर कहे कि सबसे बड़े सर्वव्यापक श्रीमन्नारायण भगवान् हैं क्योंकि उन्हीं में शान्ति और अभय देखा जाता है । (पुंडरीकनयनः) और कमल के समान नेत्र वाले (कः) और कौन है, अर्थात् कोई नहीं । क्योंकि पुण्डरीक नयन को ही उपनिषद् कहती है कि ॥ *'पुण्डरीकमेवमक्षिणी ॥'* कमल के समान भगवान् के दोनों नेत्र हैं और [पुरुषोत्तमः] अर्थात् बद्ध पुरुष और मुक्त पुरुष इन दोनों से अन्य उत्तम पुरुष (कः) और कौन है, आप ही केवल हैं । यह भगवद्गीता में भी लिखा है कि ॥ *'द्वाविमौ पुरुषौ लोके*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्षरश्चाक्षर एव च । क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥ गी० । अ० । १५ । श्लो० । १६ ॥ उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः' ॥ १७ ॥ लोक में दो प्रकार के पुरुष हैं एक क्षर, दूसरा अक्षर । बद्ध संपूर्ण जीव को क्षर कहते है और मुक्त कूटस्थ जीव को अक्षर कहते हैं ॥ १६ ॥ और बद्ध पुरुष तथा मुक्त पुरुष इन दोनों से अन्य पुरुषोत्तम श्रीमन्नारायण हैं जिनको परमात्मा कहते हैं ॥ १७ ॥ [कस्य] और किसके [अयुतायुतशतैककलांशकांशे] सौ करोड़ का जो सौगुना उसकी जो एक कला उस कला का जो अंश उस अंश का भी जो खण्ड टुकड़ा उस खंड में [विश्वं] यह संसार (विचित्रचिदचित्प्रविभागवृत्तम्) विचित्र अद्भुत चेतन तथा अचेतन इस विभाग करके विद्यमान है ऐसे परमात्मा के निरंकुश ऐश्वर्य को कौन पुरुष नहीं सहन कर सकता है ॥ १५ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी ब्रह्मादि देवता से श्रीमन्नारायण भगवान् की उत्कृष्टता वर्णन करते हुए सर्वरक्षक सिद्ध करते हैं । बहुत से लोग कहते है कि पिता रक्षक है परन्तु यह बात ठीक नहीं है क्योंकि प्रह्लाद का पिता क्या हिरण्यकशिपु नहीं था कि अनेक प्रकार से मारने का उपाय किया तो साक्षात् श्रीमन्नारायण भगवान् ने नृसिंह अवतार धारण करके हिरण्यकशिपु को मार कर प्रह्लाद की रक्षा की । यह कथा श्रीमद्भागवत के सातवें स्कन्ध के छठवें सातवें आठवें अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है । माता भी रक्षक नहीं हो सकती है क्योंकि कर्ण की माता क्या कुन्ती न थी जो कि कर्ण को नदी के तट पर फेंक कर चली गई । यह लिखा है कि ॥ '*सद्यो गर्भधरा कुन्ती कर्णं प्रासूत तं सुतम् । पुत्रं मुक्त्वा नदी तीरे सा गता स्वं गृहं तदा ॥*' म० भारतसा० । पर्व । १ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंची
वाराणसी-5

अ० । ६ । श्लो० ६ ।। शीघ्र गर्भ धारण करके कुन्ती ने कर्ण नाम वाले लड़के को उत्पन्न किया और उसको नदी के तीर पर छोड़ कर वह अपने घर को चली गई ।। ६ ।। इसी प्रकार से सौतेली माँ भी रक्षक नहीं हो सकती है। क्योंकि क्या श्रीरामचन्द्रजी की सौतेली माँ कैकेयी न थी जो कि वाल्मीकीय रामायण के अयोध्या काण्ड के ग्यारहवें सर्ग में लिखा है कि दशरथ राजा से पहला वर भरत को राज्याभिषेक, और दूसरा वर चीर वल्कल पहन कर तापस वेष से चौदह वर्ष श्रीरामचन्द्रजी दण्डकारण्य में निवास करें, यह वरदान माँगा तो रक्षक कैसे हो सकती है ? और आज कल भी बहुत सी विधवा और कुमारी स्त्रियाँ बच्चों को व्यभिचार से उत्पन्न करके मार डालती हैं या बाहर खेतों में फेंक देती हैं। इससे माता रक्षक नहीं हो सकती है। और स्त्री भी रक्षक नहीं हो सकती क्योंकि श्रीदशरथजी महाराज की स्त्री क्या कैकेयी न थी कि श्रीरामचन्द्रजी के वनवास रूप वरदान माँग कर श्रीदशरथजी का प्राण हरण कर लिया। तथा पुत्र भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि उग्रसेन राजा का पुत्र क्या कंस न था जो कि उग्रसेन को राज्यसिंहासन से हटाकर तथा जेल में बन्द करके अपने स्वयं राज्य करता था। यह कथा श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध के पहले अध्याय में लिखी हुई है। तथा श्याला भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि वसुदेव का श्याला क्या कंस न था कि हाथ और पैरों में बेड़ियाँ डाल कर जेल में रखा था। और मामा भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि देवकी के छवों पुत्रों का मामा कंस न था जो कि छवों को मार डाला ? और भाई भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि विभीषण का भाई क्या

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रावण न था जिसने उनका अत्यन्त अपमान किया। यह कथा वाल्मीकीय रामायण युद्धकाण्ड के सोलहवें सर्ग में लिखी हुई है। और स्त्रियों के पति भी रक्षक नहीं हो सकते हैं क्योंकि द्रौपदी के पति क्या युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव नहीं थे कि जिन लोगों के सामने सभा में दुःशासन ने रजस्वला द्रौपदी का वस्त्र खींचा यह कथा महाभारत के सभा पर्व में स्पष्ट लिखी हुई है। तथा शिष्य भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि द्रोणाचार्य का शिष्य क्या धृष्टद्युम्न न था कि जिसने स्वयं उनका वध किया, जैसा लिखा है कि *"वधाय निर्मितो धात्रा खड्गहस्त उपाययौ। द्रोणस्य च शिरश्छित्वा जगाम च यथागतम् ॥"* भारत सा०। द्रोण। प०। ७। अ०। ६६ श्लो० २७॥ द्रोणाचार्य को मारने के लिये धाता से बनाये हुए तलवार धृष्टद्युम्न ने हाथ में लेकर के द्रोणाचार्य के पास जाकर उनके शिर को काट लिया ॥ २७॥ और धन भी रक्षक नहीं हो सकता है क्योंकि देखा जाता है कि राजकुमार लोग राज्य के लोभ से अपने पिता को विष दे देते हैं और शिष्य सब भी महन्त होने के लिये गुरु को विष दे देते हैं। तथा धन से डाँके पड़ते हैं और बड़े बड़े वेश्या गमन आदिक बुरे बुरे कर्म होते हैं। इसी प्रकार से ब्रह्मादिक देवता भी रक्षक नहीं हैं बल्कि उन लोगों के भी रक्षक श्रीमन्नारायण भगवान् हैं यह वर्णन करते हैं।

१

वेदापहारगुरुपातकदैत्यपीडाद्यापद्विमोचनमहिष्ठ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३ २ ४ ६ ५
फलप्रदानैः । कोऽन्यः प्रजाः पशुपतिः परिपाति
७ ८ १० ११ ९
कस्य पादोदकेन स शिवः स्वशिरोधृतेन ॥१६॥

अर्थ—(वेदापहारगुरुपातकदैत्यपीडाद्यापद्विमोचनमहिष्ठफलप्रदानैः) हे भगवन् ? ऋग् यजुः साम अथर्व इन वेदों का हरण तथा ब्रह्माजी के शिर का छेदन और वृत्रासुर तथा रावण आदिकों से जो पीड़ा हुई ये सब तथा और ऐसी ऐसी अनेक प्रकारकी आपत्तियोंसे छुटकारा करके और नाना प्रकार मनोभिलषित बड़े बड़े फलोंको दे करके [अन्यः] और दूसरा (कः) कौन है जो (प्रजाः) प्रजाओं की या अपने जनों की या सन्तति की (परिपाति) अच्छी प्रकार से रक्षा करे। इसका भावार्थ यह हुआ कि ब्रह्मादिक देवता तो अपनी ही रक्षा नहीं कर सकते हैं तो दूसरों की रक्षा क्या करेंगे। इस बात को स्पष्ट दिखाते हैं कि ब्रह्मा नहीं रक्षक हैं यदि रक्षक होते तो प्रलय समय में हयग्रीव नामक राक्षस उनसे वेदों को हरण कैसे कर लेता ? यह कथा श्रीमद्भागवत के आठवें स्कन्ध में लिखी हुई है और तब उस समयमें श्रीमत्स्यावतार धारण करके भगवान् वेद को लाये हैं। यह लिखा है कि ॥ *हत्वाऽसुरं हयग्रीवं वेदान् प्रत्याहरद्धरिः* ॥ भागव० स्कन्ध ॥ ८ । अ० । २४ श्लो० । ५७ ॥ श्रीमत्स्यावतारधारी श्रीमन्नारायण भगवान् ने हयग्रीव असुर को मार कर ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेदको लाया ॥५७॥ यदि यह कोई कहे कि ब्रह्मा के शयनका वह समय था इससे वेद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की रक्षा न कर सके तो इसका उत्तर यह है कि शिवजी ने जिस समय ब्रह्मा के एक शिरको काट लिया उस समय ब्रह्माजीने अपनी रक्षा क्यों न की यह पद्मपुराण के पुरुषोत्तम माहात्म्य में लिखा है। और भारतसार के आदि पर्व में भी लिखा है कि ॥ *तदा चैकेन वक्त्रेण निःसृतः खरवत्स्वरः। दुर्विनीतं च विज्ञाय हेत्वर्थं ब्रह्मणस्तदा* ॥ भार०। आदिप०। अ०। ३। श्लो १०॥ *त्रोटितं तत्करे लग्नं रुद्रेण पञ्चमं शिरः। न पपात धरा देशे ब्रह्मभालं करे स्थितम्* ॥ ११॥ ब्रह्माजी जब शिवजी की स्तुति करने लगे तब ब्रह्माजी के एक मुखसे गदहे के स्वर के समान शब्द निकला तो ब्रह्मा को उद्धत जानकर उपदेश देनेके लिये ॥ १० उनके पांचवें शिर को शिवजी ने काट लिया तब कटा हुआ वह ब्रह्माका शिर हाथ ही में चिपक गया पृथ्वी पर नहीं गिरा ॥ ११॥ जिस समय ब्रह्माका शिर काटा गया उस समय ब्रह्माने अपनी रक्षा क्यों न की और सृष्टि के आदि में जब मधुकैटभ नामक दैत्य ने ब्रह्मा को पीड़ित किया तो उस समय ब्रह्माने अपनी रक्षा क्यों न की। इससे यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्मा रक्षक नहीं हैं। तथा रुद्रजी भी रक्षक नहीं हैं क्योंकि यदि रक्षक होते तो जो हाथ में ब्रह्म कपाल चिपका था उस ब्रह्म हत्या से अपनी रक्षा क्यों न की। उस समय में श्रीमन्नारायण भगवान् ने ही रक्षा की है यह भारत सारके आदि पर्व में लिखा है कि शिवजी जब ब्रह्महत्या से व्याकुल हो गये हैं तो भगवान् ने ब्रह्महत्या से कहा है कि ॥ *शिवाङ्गं मुञ्च हत्ये त्वमन्यं याचय मां वरं। तत्तवैव प्रदास्यामि न दास्ये चेदघं मम* ॥ भार०। पर्व०। १। अ०। ३। श्लो०। ३३॥ हे ब्रह्महत्ये ! तुम शिवजीके अङ्ग को छोड़ दो दूसरा कोई वर मुझसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मांगो । वह तुमको मैं दूँगा यदि मैं तुमको न दूँ तो ब्रह्महत्या का पाप मुझे लगे ॥ ३३ ॥ इस वाक्य को सुन करके ब्रह्महत्या बोली कि हे भगवन्! अठारह अक्षौहिणी सेना का रुधिर मुझको दीजिये इस बात को सुन करके भगवान् ने कहा कि "*द्वापरे युगमध्ये तु सोमवंशो भविष्यति । तदा दास्यामि हत्ये ते शोणितं हि यथेप्सितम् ॥ ३५ ॥ केशवस्य वचः श्रुत्वा हत्या मुक्तः शिवस्त्वयम् ॥ ३६ ॥* द्वापर युगमें चन्द्रवंश होगा तब हे हत्ये ? अट्ठारह अक्षौहिणी सेनाका रुधिर तेरे लिये मैं दूँगा ॥ ३५ ॥ ऐसे केशव भगवान् के वाक्य को सुन कर ब्रह्महत्या ने शिवजी को छोड़ दिया ॥ ३६ ॥ तो उस समय रुद्रजीने अपनी रक्षा क्यों नहीं की । और जिस समय शकुनि के पुत्र वृकासुर ने रुद्र को भस्म करने के लिये उनका पीछा किया उस समय डर करके बैकुण्ठ में क्यों गये अपनी रक्षा क्यों न की । यह कथा श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध उत्तरार्ध के अट्ठाइसवें अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है । इससे यह सिद्ध हुआ कि रुद्र रक्षक नहीं हैं । और इन्द्र भी रक्षक नहीं हो सकते हैं क्योंकि लिखा है कि ॥ *गौतमेनैवमुक्तस्य सुरोषेण महात्मना । पेततुर्वृषणौ भूमौ सहस्राक्षस्य तत्क्षणात् ॥* वाल्मी० बालक० । सर्ग० । ४८ । श्लो० २८ ॥ क्रोध युक्त महात्मा गौतम ऋषिके कहने से उसी समय में इन्द्र के दोनों अण्डकोश भूमि पर गिर गये ॥ २८ ॥ उस समय इन्द्र ने अपनी रक्षा क्यों न की । तथा जिस समय मेघनाद ने इन्द्र को बाँध लिया था उस समय इन्द्र ने अपनी रक्षा क्यों नहीं की । यह लिखा है कि ॥ *स तं यदा परिश्रान्तमिन्द्रं जज्ञेऽथ रावणिः । तदैनं मायया बद्ध्वा स्वसैन्यमभितोऽनयत् ॥* बा० । रा० । उत्तर० कां० । सर्ग० । २९ । श्लो०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२७॥ वह मेघनाद जब इन्द्र अत्यन्त थक गये तो माया से उनको बाँध कर अपनी सेनाके सामने ले गया॥ २७॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि इन्द्र रक्षक नहीं हैं। और इसी प्रकार से यम वरुण कुवेर आदिक देवता भी रक्षक नहीं हो सकते हैं क्योंकि जिस समय रावण ने इन लोगों को पराजित किया उस समय ये लोग अपनी रक्षा क्यों नहीं की। यह कथा वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में स्पष्ट लिखी हुई है। इससे यह सिद्ध हुआ कि यम आदिक देवता कोई भी रक्षक नहीं हैं। केवल श्रीमन्नारायण भगवान् रक्षक हैं इस विषय में प्रह्लाद विभीषण गजेन्द्र द्रौपदी अहिल्या ध्रुव ये सभी साक्षी हैं। और (पशुपतिः) पशु की रक्षा करनेवाले नन्दी नामक वृषभके मालिक रुद्रने (कस्य) किस पुरुषोत्तमके (पादोदकेन) चरणोदक अर्थात् विष्णु पादोदकी गङ्गा को (स्वशिरोधृतेन) अपने मस्तक पर धारण किया जिससे (सः) वे रुद्र (शिवः) मङ्गल स्वरूप शिव हो गये। तात्पर्य यह है कि पहले रुद्र श्मशान में वास तथा चिता भस्मालेप करते थे और भूतों के स्वामी थे तथा मुण्डों की माला धारण करते थे और नग्न रहते थे इससे अमङ्गल रूप था परन्तु श्रीविष्णु पादोदकी गङ्गा को जब उन्होंने अपने मस्तक पर धारण किया तब मङ्गल स्वरूप हो गये इससे शिव ऐसा नाम पड़ा। श्रीविष्णु पादोदकी गङ्गा को पशुपति ने धारण किया है यह वाल्मीकिरामायण के बालकाण्ड के तैंतालिसवें सर्ग में लिखा हुआ है ॥ १६ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता जगत् की उत्पत्ति पालन संहार आदि करने से श्रीमन्नारायण को सर्वोत्कृष्ट कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ २ ३ ४ ५ ७ ६
कस्योदरे हरविरञ्चिमुखः प्रपञ्चः को रक्षतीमम-
११ ८ ९ १० १५ १६ १७
जनिष्ट च कस्य नाभेः । क्रान्त्वा निगीर्य पुन-
१८ १२ १३ १४ २० १९ २१ २२ २३
रुद्गिरति त्वदन्यः कः केन चैष परवानिति
२४
शक्यशङ्कः ॥ १७ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपके बिना (कस्य) किसके (उदरे) पेट में (हरविरञ्चिमुखः) शिव ब्रह्मा आदिक (प्रपञ्चः) अत्यन्त फैला हुआ यह संसार स्थित है। अर्थात् आप ही में ब्रह्मादिक देवता स्थित हैं इसी से अर्जुन ने आपके देह में ब्रह्मादिक देवताओं को देखा है। यह भगवद्गीता में लिखा हुआ है कि ॥ *पश्यामि देवाँस्तव देव ! देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान् । ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥* गी० । अ० । ११ । श्लो० । १५ ॥ हे श्रीमन्नारायण देव ! आपके देह में मैं सम्पूर्ण देवताओं को तथा जीवों के समूहों को और कमल के आसन पर बैठे हुए ब्रह्मा को तथा महादेवजी को तथा ऋषियों को और दिव्य सर्पों को भी देखता हूं ॥ १५ ॥ और (कः) कौन (इमं) इस समस्त संसार रूप प्रपञ्च को (रक्षति) रक्षा करता है (च) और (कस्य) किसके [नाभेः] नाभी से प्रपञ्च कर्ता ब्रह्मा (अजनिष्ट) उत्पन्न हुए हैं । श्रीमन्नारायण भगवान् की नाभी हैं,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यह शुक्लयजुर्वेद में लिखा हुआ है कि *"नाभ्या आसीदन्तरिक्षम् ॥"* यजु० । अ० । ३१ । मं० । १३ ॥ श्रीमन्नारायण की नाभी से अन्तरिक्ष उत्पन्न हुआ ॥ १३ ॥ यदि नाभी न होता तो उससे अन्तरिक्ष उत्पन्न हुआ यह वेद कैसे कहता । और [त्वद्] आप से [अन्यः] अन्य दूसरा (कः) कौन पुरुष है जो कि [क्रान्त्वा] इस समस्त संसार रूप प्रपञ्च को आक्रमण करके (निगीर्य) अपने पेट में निगल करके (पुनः) फिर [उद्गिरति] बाहर निकाल देता है । अर्थात् केवल एक आप ही हैं । यह मुण्डकोपनिषद में लिखा है कि ।। *'यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथा पृथिव्यामौषधयः संभवन्ति । यथा सतः पुरुषात् केशलोमानि तथाऽक्षरात् संभवन्तीह विश्वम् ॥'* मुण्ड० । १ । ख० । १ । म० । ७ ॥ जैसे जीव विशिष्ट मकरी अपने पेट से सूत को बाहर निकालती है, और निगल जाती है, और जैसे बीज विशिष्ट पृथ्वी में औषधियाँ उत्पन्न होती हैं, और जैसे जीव विशिष्ट देह से केश लोम नख उत्पन्न होते हैं वैसे ही सूक्ष्म चिदचिद्विशिष्ट अविनाशी श्रीमन्नारायण देव से यह स्थूल प्रपञ्च रूप संसार उत्पन्न होता है ॥ ७ ॥ इस प्रकार से आपके बिना (च) और (केन) किस करके [एषः] यह संसार [परवान्] नाथवान् स्वामीवाला है (इति) इससे (शक्यशङ्कः) शङ्का की सम्भावना आप से इतर में नहीं हो सकती है । अर्थात् आप ही से उत्पत्ति पालन संहार मोक्ष ये सब कुछ होता है । यह तैत्तिरीयोपनिषद् में लिखा है कि ॥ *यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते । येन जातानि जीवन्ति । यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति । तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्मेति ॥* तैत्ति० । भृगुव० । ३ । अनु । वा० । १ ॥ जिस श्रीमन्नारायण देव से ये संपूर्ण जीव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न होते हैं और वे ही समस्त जीवों की रक्षा करते हैं तथा संहार करते हैं और उन्हीं से जीव मोक्ष को पाता है उस श्रीमन्नारायण देव को तुम जानने की इच्छा करो, वही ब्रह्म है ॥ १ ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि श्रीमन्नारायण भगवान् से अन्य देव उत्पत्ति पालन संहार आदिक के कर्ता नहीं हैं ॥ १७ ॥

अब अखिलभुवनजन्मस्थितिभङ्गादि कर्ता श्रीमन्नारायण देव को अनादि पाप वासना से दूषित अन्तःकरण वाले तमोगुणी लोग श्रुति स्मृति इतिहास पुराण सदाचार्य के वचनों से नहीं जानते हैं इस बात को स्तोत्ररत्नकर्ता वर्णन करते हैं ।

११ १ २ ३
त्वां शीलरूपचरितैः परमप्रकृष्टसत्त्वेन सात्त्विकतया
४ ५ ६ ८ ९ ७
प्रबलैश्च शास्त्रैः । प्रख्यातदैवपरमार्थविदां मतैश्च
१३ १४ १० १५ १२
नैवासुरप्रकृतयः प्रभवन्ति बोद्धुम् ॥ १८ ॥

अर्थ—हे भगवन् ? [शीलरूपचरितैः] प्रह्लाद विभीषण गजेन्द्र द्रौपदी अहिल्या ध्रुव आदिक की रक्षा करने का शील स्वभाव से और अचिन्त्य अद्भुत नित्य निरवद्य निरतिशयौज्ज्वल्य सौन्दर्य लावण्य यौवनादि दिव्य मङ्गल विग्रह से और पूतना शकट यमलार्जुन अरिष्ट प्रलंब धेनुक केशि कुबलयापीड़ चाणूर मुष्टिक कोसल कंस शिशुपाल आदिक का वध आदि जो अतिमानुप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चरित हैं इससे और [परमप्रकृष्टसत्त्वेन] अत्यन्त उत्कृष्ट शुद्ध सत्त्व गुण से तथा (सात्त्विकतया) सात्त्विक भाव होने से [च] और [प्रबलैः] अत्यन्त प्रबल (शास्त्रैः) शासन करने वाले मीमांसा आदिक शास्त्रों से (च) और (प्रख्यात दैव-परमार्थविदां) प्रसिद्ध देव के परमार्थ को जानने वाले पराशरादि ऋषियों के (मतैः) सिद्धान्तों से भी (असुरप्रकृतयः) राक्षस स्वभाव वाले अधम (त्वां) अनन्त कल्याण गुणवाले सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् जगत्कारण आपको (वेद्धुं) जानने के लिये (न) नहीं (एव) निश्चय करके (प्रभवन्ति) समर्थ होते हैं। इस बात को श्रीकृष्ण भगवान् ने भी कहा है कि ॥ 'न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः। माययापहृतज्ञाना आसुरं भाव-माश्रिताः।' गी० । अ० । ७ । श्लो० १५ ॥ माया से नष्ट ज्ञानवाले पापी आसुरी प्रकृतिवाले मूढ नीच मनुष्य मुझको नहीं प्राप्त कर सकते हैं ॥ १५ ॥ इस कारण से तमोगुणी लोग आपकी उपासना सेवा नहीं करते हैं ॥ १८ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि अनन्य भगवद्भक्त श्रीमन्नारायण भगवान् को देख लेते हैं।

१ उल्लङ्घितत्रिविधसीमसमातिशायिसंभावनं २ तव ३
४ परिव्रढिमस्वभावम् । ६ मायाबलेन ५ भवतापि ८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७ १२ १० ११
निगुह्यमानं पश्यन्ति केचिदनिशं
९
त्वदनन्यभावाः ॥ १९ ॥

अर्थ—हे भगवन् ? (उल्लंघितत्रिविधसीमसमातिशायि) देश काल और वस्तु इन तीन प्रकार की सीमा या परिच्छेद से रहित तथा समाभ्यधिक रहित [संभावनम्] जो अच्छी प्रकारसे आपकी संभावना है और (तव) हे श्रीमन्नारायण ? आपके जो (परिर्व्राढमस्वभावं) बड़ा भारी प्रभुत्वका स्वरूप है उस को (भवता) आप अपनी [मायाबलेन] माया के बल से। माया किसको कहते हैं यह लिखा है कि ॥ *'मायां तु प्रकृतिं विद्धि मायिनं तु महेश्वरम् ॥'* तूं माया प्रकृतिको जानो और मायी परमात्मा को जानो ॥ इस प्रकृतिके भेद को भी श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा है कि ॥ *'भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च। अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥'* गी०। अ०। ७। श्लो०। ४॥ *'अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्। जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ५ ॥'* पृथ्वी जल अग्नि हवा आकाश मन बुद्धि और अहंकार ये आठ प्रकार के प्रकृतिके भेद हैं ॥ ५ ॥ इसको अपरा प्रकृति कहते हैं। इससे अन्य मेरी पराप्रकृति जीवभूत तुम जानो। जिस पराप्रकृति के द्वारा इस समस्त संसार को मैं धारण करता हूँ ॥ ५ ॥ उक्त प्रकार की दैवी माया के बल से आप अपने स्वरूप को [निगुह्यमानं] आच्छादित रखते हैं (अपि) फिर भी [त्वदनन्यभावाः] आपके विषयमें अनन्यभावना वाले

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

परम ऐकान्तिक [केचित्] कोई कोई महात्मा पुरुष [अनिशं] निरन्तर सर्वदा आपका [पश्यन्ति] साक्षात्कार करते हैं । यह साम वेद में लिखा है कि ॥ 'सदा पश्यन्ति सूरयः ।' दिव्यसूरि सब सर्वदा भगवान् के पद को देखते हैं ॥ १६ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि हे भगवन् । संपूर्ण पदार्थ आपकी विभूति है ।

१ २ ५ ३ ४ ८ ९ १०
यदण्डमण्डान्तरगोचरं च यद्दशोत्तराण्या-
७ ६ ११ १२ १३
वरणानि यानि च । गुणाः प्रधानं पुरुषः
१४ १५ १७ १८ १९ १६ २० २१
परं पदं परात्परं ब्रह्म च ते विभूतयः ॥ २० ॥

अर्थ—हे भगवन् ? (यद्) जो (अण्डं) संपूर्ण ब्रह्माण्ड है [च] और (यद्) जो (अण्डान्तरगोचरं) ब्रह्माण्डके भीतर स्थित देव मनुष्य पशु पक्षी आदिक पदार्थ इन्द्रियों के ग्रहण करने के योग्य हैं (च) और [यानि] ब्रह्माण्ड से जो (दश) दश गुणित (उत्तराणि) उत्तर जल आदिक (आवरणानि) ढकने वाले आवरण हैं और (गुणाः) सत्वगुण रजोगुण तमोगुण ये तीन गुण और (प्रधानं) प्रकृति तथा (पुरुषः) अनन्त जीव और (परं) अत्यन्त उत्कृष्ट [पदं] स्थान त्रिपाद् नित्य विभूति (च) और [परात्] ब्रह्मा आदिक देवता से [परं] श्रेष्ठ (ब्रह्म) बड़ा व्यापक दिव्य मङ्गलमय विग्रह तथा स्वरूप, ये सब [ते] आपकी (विभूतयः) विभूति अर्थात् ऐश्वर्य हैं । यह शुक्ल यजुर्वेद में

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिखा है कि ॥ *'पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥'* यजु० । अ० । ३१ । मं० । ३ ॥ श्रीमन्नारायण भगवान् के एक पैर में संपूर्ण संसार लीला विभूति है और दिव्य लोक में तीन पाद अमृत नित्य विभूति है ॥ ३ ॥ इस प्रकार से सब कुछ आप की विभूति है ॥ २० ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि परमात्मा अनेक कल्याण गुणों के समुद्र हैं ।

३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १०

वशी वदान्यो गुणवानृजुः शुचिर्मृदुर्दयालुर्मधुरः

११ १२ १३ १४ १ १६ २

स्थिरः समः । कृती कृतज्ञस्त्वमसि स्वभावतः

१५

समस्तकल्याणगुणामृतोदधिः ॥ २१ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण देव ? [त्वं] आप (स्वभावतः) स्वभाव से ही [वशी] संपूर्ण पदार्थों को अपने आधीन करने वाले हो । यह उपनिषद् में भी लिखा है कि ॥ *एको वशी सर्व भूतान्तरात्मा ॥* कठो० । अ० । २ । वल्ली० ५ मं० १२ ॥ एक ही देव समस्त पदार्थों को अपने वश रखने वाला संपूर्ण जीवों का अन्तरात्मा परमात्मा है ॥ १२ ॥ और [वदान्यः] दानशूर अर्थात् माँगी हुई वस्तु से भी अधिक देने वाले हो अथवा "वदान्यः" इसमें दो पद हैं एक वद दूसरा अन्यः तो यह अर्थ हुआ कि हे भगवन् ? आप ही कहिये क्या ? दूसरा कोई संपूर्ण पदार्थों को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपने आधीन करने वाला है ? (गुणवान्) और आश्रित पारतंत्र्य रूप गुणवाले हो और [ऋजुः] अत्यन्त सरल स्वभाव वाले हो और (शुचिः) अत्यन्त पवित्र हो और (मृदुः) अत्यन्त कोमल स्वभाव वाले हो और [दयालुः] समस्त जीवों के ऊपर दया करने वाले हो [मधुरः] और मीठा स्वभाव वाले हो और [स्थिरः] अचल स्वभाव वाले हो तथा [समः] अपने आश्रयण करने के लिये सब जीवों पर एक स्वभाव वाले हो और (कृती) कुशल हो तथा [कृतज्ञः] की हुई सेवा को जानने वाले हो और (समस्तकल्याणगुणामृतोदधिः) संपूर्ण कल्याण गुण के क्षीर समुद्र (असि) हो । इस बात को उपनिषद् भी कहती है कि ।। *'यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्यैष महिमाभुवि ॥'* मुण्ड० । २ । खं० । २ । मं० । ७ ।। जो परमात्मा सर्वज्ञ है और प्रकारतः सब कुछ जानने वाला है जिसकी यह महिमा पृथिवी पर भी है ।। ७ ।। और भी परमात्मा के बहुत गुण हैं । यह उपनिषद् कहती है कि ।। *'य आत्मापहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोकोऽविजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः ॥'* छान्दोग्य० । प्रपाठ० । ८ । खं० । ७ । मं० । १ ।। जो पाप से रहित है तथा बूढ़ा नहीं होता है और मृत्यु से तथा शोक से रहित है और भूख प्यास जिसको नहीं लगती है और जिसकी इच्छा तथा संकल्प सत्य है वही आत्मा है उस आत्मा को ढूढ़ना चाहिये और अच्छी तरह से जानने की इच्छा करनी चाहिये ।। १ ।। इस उपनिषद् के मन्त्र में स्पष्ट प्राकृत छः गुणों का निषेध करके सत्य काम और सत्य संकल्प इन दो दिव्य स्वाभाविक गुणों का विधान है । इससे जो लोग यह कहते हैं कि परमात्मा में कुछ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भीं गुण नहीं है उनका सिद्धान्त वेद से विरुद्ध है इससे उसको नही मानना चाहिये ॥ २१ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि वेद भी श्रीमन्नारायण के गुणों की अवधि को नहीं जानते हैं।

५ ६ ३ ४ १२ १३ ७ ८

उपर्युपर्य्यब्जभुवोऽपि पूरुषान् प्रकल्प्य ते ये

९ १० ११ १ २

शतमित्यनुक्रमात् । गिरस्त्वदेकैकगुणावधी-

१४ १५ १७ १६ १८

प्सया सदास्थिता नोद्यमतोऽतिशेरते ॥ २२ ॥

अर्थ—हे भगवन्? (गिरः) संपूर्ण वेद वाणी [*त्वदेकैकगुणावधीप्सया*] आपके एक एक गुण के अन्त को प्राप्त करने की इच्छा करके [अब्जभुवः] कमल से उत्पन्न प्रजापति ब्रह्मा के (अपि) भी (उपरि) ऊपर (उपरि) ऊपर (ते) वे (ये) जो (शतं) सौ आनन्द (इति) अर्थात् "ते ये शतम्" यह तैत्तिरीयोपनिषद् के दूसरी जो ब्रह्मानन्द वल्ली है इसके आठवें अनुवाक् का मन्त्र है इस मन्त्र के (अनुक्रमात्) अनुक्रम से (पूरुषान्) समस्त पुरुषों की (प्रकल्प्य) कल्पना करके (सदा) निरन्तर [स्थिता] स्थित हुई [उद्यमतः] उद्योग से (न) नहीं (अतिशेरते) निवृत्ति को प्राप्त हुई, अर्थात् भगवान्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के एक आनन्द गुण की भी अवधि को वेद वाणी नहीं जान सकी । (*ते ये शतम्*) इस मन्त्र का अनुक्रम ऐसा लिखा है कि मनुष्य के जो वे सौ आनन्द वह मनुष्य गन्धर्वों में जो इच्छा से रहित श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है और मनुष्य गन्धर्वों के जो वे सौ आनन्द वह देव गन्धर्वों में जो इच्छा से रहित श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है तथा देव गन्धर्वों के जो वे सौ आनन्द वह बहुत दिन तक पितृलोक में रहनेवाले पितरों में इच्छा से रहित जो श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है और बहुत दिन तक पितृलोक में रहनेवाले पितरों के जो वे सौ आनन्द वह अजानज देवों में जो इच्छा से रहित श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है तथा अजानज देवों के जो वे सौ आनन्द वह कर्म से देवता को प्राप्त करने वाले जो कर्मदेव हैं उन सबों में जो इच्छा से रहित श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है तथा कर्मदेव देवों के जो वे सौ आनन्द वह देवों में इच्छा से रहित जो श्रोत्रिय हैं उनका एक आनन्द है और देवों के जो वे सौ आनन्द वह इच्छा रहित श्रोत्रिय इन्द्र का एक आनन्द है तथा इन्द्र के जो वे सौ आनन्द सो इच्छा रहित श्रोत्रिय बृहस्पति का एक आनन्द है और बृहस्पति के जो वे सौ आनन्द सो इच्छा रहित श्रोत्रिय प्रजापति ब्रह्मा का एक आनन्द है और ब्रह्मा के जो वे सौ आनन्द सो ब्रह्मा श्रीमन्नारायण भगवान् का एक आनन्द है। यह तैत्तिरीयोपनिषद् के ब्रह्मानन्द वल्ली के आठवें अनुवाक् में स्पष्ट लिखा हुआ है और "*ते ये शतम्*" यह मन्त्र श्रीमन्नारायण से आगे नहीं बढ़ा । इससे यह भी सिद्ध होता है कि वही परदेव हैं ॥ २२ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि आपके भक्तजन आपकी लीला से संसारकी उत्पत्ति पालन संहार और मोक्ष मानते हैं।

१ २
त्वदाश्रितानां जगदुद्भवस्थितिप्रणाशसंसार-
८ ३ ६ ४ ५
विमोचनादयः। भवन्ति लीला विधयश्च वैदि-
७
कास्त्वदीयगम्भीरमनोऽनुसारिणः ॥ २३ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण देव ? (*त्वदाश्रितानां*) आपके अधीन रहने वाले भक्त जनों के तो [*जगदुद्भवस्थितिप्रणाशसंसारविमोचनादयः*] संपूर्ण जगत् की उत्पत्ति पालन संहार और संसार से छूट जाना, अर्थात् मोक्ष ये सब [लीलाः] विलास क्रियायें हैं, [च] और [वैदिक] वेद विहित जो वेदों के (विधयः) विधान हैं, वेद का लक्षण आपस्तम्ब ऋषि ने कहा है कि ॥ '*मन्त्रब्राह्मणयोर्वेद नामधेयम् ॥*' मन्त्र और ब्राह्मण इन दोनों का वेद नाम है। तात्पर्य यह हुआ कि समस्त वेदों के जो विधान हैं ये सब (*त्वदीयगम्भीरमनोऽनुसारिणः*) आपके दास जनों के गम्भीर मन के अनुसार ही [भवन्ति] होते हैं, अर्थात् इन सभी प्रवृत्तियों को महाभागवतों के मनके संतोष के लिये ही आपके दासजन मानते हैं ॥ २३ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी ॥ '*भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥*'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यजु०। अ०।४०। मं०।१६॥ इस सिद्धान्त को ले करके श्रीमन्नारायण भगवान् को साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं।

३ २ १ ५ ६ ४
नमो नमो वाङ्मनसातिभूमये नमो नमो वाङ्-
८ ९ ७
मनसैकभूमये। नमो नमोऽनन्तमहाविभूतये
११ १२ १०
नमो नमोऽनन्तदयैकसिन्धवे ॥ २४ ॥

अर्थ—हे भगवन् [वाङ्मनसातिभूमये] भक्ति से विमुख जनों के वाणी और मन से भी नहीं ग्रहण होनेवाले जो आप हैं, उस विमुख चेतन के वाणी और मन के अविषय आपके लिये, अथवा वाणी और मन से इयत्तया परिच्छेद के अयोग्य आपके लिये [नमः] मैं उर से प्रणाम करता हूँ और शिर से भी [नमः] प्रणाम करता हूँ और [वाङ्मनसैकभूमये] भक्तजनों के मन और वाणी के मुख्य स्थान आपके लिये, अथवा वाणी और मन के एक मात्र गोचर आपके लिये यथा, "*मनसा तु विशुद्धेन*" यह श्रुति ब्रह्म को विशुद्ध मनोग्राह्य बताती है। [नमः] मैं दृष्टि से प्रणाम करता हूँ और मन से भी [नमः] प्रणाम करता हूँ और [अनन्तमहाविभूतये] देश काल वस्तु परिच्छेद रहित एवं अन्त रहित अपरिमित ऐश्वर्य वाले आपके लिये वाक्य से [नमः] प्रणाम करता हूँ और दोनों पैरों से भी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[नमः] प्रणाम करता हूँ और (अनन्तदयैकसिन्धवे) अन्तर्हित अपरिमित कृपा समुद्र रूप आपके लिये दोनों हाथों से [नमः] प्रणाम करता हूँ और दोनों जंघाओं से भी [नमः] साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ, अर्थात् आपके लिये मैं बारम्बार साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ परमात्मा भक्ति से विमुख जनों से दूर रहते हैं तथा भक्तजनों के पास में रहते हैं। यह शुक्ल यजुर्वेद में लिखा है कि ।। *'तद्दूरे तद्वदन्तिके ॥'* यजु० । अ० ४० । मं० ५ ॥ वह परमात्मा अभक्त जनों से दूर और भक्तजनों के पास रहता है ॥ ५ ॥ यह श्रीमद्भगवद्गीता में भी लिखा है कि *"दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥"* गी० । अ० १३ । श्लो० १५ ॥ अज्ञों के दूर और भक्तों के पास में परमात्मा रहते हैं ॥ १५ ॥ इस श्लोक में आठ नमः पद देने का यह भाव है कि भगवद् भागवत और आचार्य के सन्निधि में आठो अङ्गों से पृथिवी में दण्ड के समान पड़ करके साष्टाङ्ग प्रणाम करना चाहिये ॥ २४ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि हे भगवन् ! कर्मयोग ज्ञानयोग भक्तियोग करने में असमर्थ मैं केवल प्रपत्ति करता हूँ, उस प्रपत्ति मार्ग का उपदेश साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने अर्जुन को दिया है कि ।। *'मामेकं शरणं व्रज ॥'* गी० । अ० १८ । श्लो० ६६ ॥ केवल एक मेरे शरण को प्राप्त करो अर्थात् केवल मेरी प्रपत्ति करो ॥ ६६ ॥ इस चरमोपदेश को ग्रहण करके श्रीपूज्यपाद संसारी जीवों को उपदेश देने के लिये प्रपत्ति करते हैं इससे हम सबों का भी चाहिये कि, कर्म ज्ञान भक्ति में उपायता बुद्धि छोड़ कर केवल भगवान् की प्रपत्ति करें, क्योंकि भगवत्प्राप्ति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के लिये कोई उपाय नहीं है। यह मुण्डकोपनिषद् में लिखा है कि॥ *"नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष- वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम् ॥"* मुण्ड० । ३ । खं० । २ । म० ३ ॥ यह आत्मा बहुत कहने से नहीं प्राप्त होता है, न तो केवल बुद्धि से ही प्राप्त होता है और न तो बहुत सुनने से ही प्राप्त होता है। जिसको यह परमात्मा स्वीकार कर लेता है वही परमात्मा को प्राप्त करता है और परमात्मा स्वीकार उसी को करता है जो परमात्मा में न्यस्त भर हो जाता है ॥ ३ ॥ यह मुण्डकोपनिषद् मन्त्र स्पष्ट अनन्योपाय केवल प्रपत्ति को ही कहता है यह प्रपत्ति सब वर्ण एवं आश्रम वालों के तथा अन्य जीवों के भी करने योग्य है इसको लोकाचार्य स्वामीजी ने श्रीवचनभूषण में कहा है कि ॥ *'प्रपत्तेर्देशनियमः कालनियमोऽधि- कारि नियमः फलनियमश्च नास्ति ॥'* श्रीवच० । सू० २७ ॥ प्रपत्ति के लिये पवित्र देश का नियम या बसंत आदिक सुन्दर काल का नियम तथा द्विजाति अधिकारि का नियम और फल का भी नियम नहीं है ॥ २७ ॥ और शुद्धि अशुद्धि का भी नियम नहीं है। यह वहाँ ही लिखा है कि ॥ *'द्रौपदी स्नाता न खलु प्रपत्तिम- करोत् अर्जुनो नीच मध्येऽमुमर्थमशृणोत् ॥'* श्रीवच० सू० ३३ ॥ द्रौपदी रजस्वला थी जो कि बिना स्नान किये ही प्रपत्ति किया और अर्जुन ने नीचों के मध्य संग्राम में प्रपत्ति को सुना ॥ ३३ ॥ और इसमें किसी जाति पांति का भी नियम नहीं है यह श्रीवचनभूषण में ही लिखा है कि ॥ *'धर्मपुत्रादयः द्रौपदी काकः कालीयः श्रीगजेन्द्रः श्रीविभीषणः स्वामी वालस्वामी एतत्प्रभृतयः शरणं*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गता इत्यधिकारि नियमो नास्ति ॥' श्रीवच० सू० ॥ ३७ ॥ युधिष्ठिर आदिक पांचो पाण्डव द्रौपदी जयन्त कौवा कालीयनाग गजराज विभीषण रामचन्द्र और लक्ष्मणजी वगैरह ये सब प्रपत्ति किये हैं इससे अधिकारी का नियम नहीं है ॥ ३७ ॥ और फल के विषय में भी लिखा है कि ॥ *'धर्मपुत्रादीनां फलं राज्यं द्रौपद्याः फलं वस्त्रं काककालीययोः फलं प्राणः श्रीगजेन्द्रस्य फलं कैङ्कर्यं श्रीविभीषणस्य फलं रामप्राप्तिः स्वामिनः फलं समुद्रतरणं वालस्वामिनः फलं रामानुवृत्तिः ॥'* श्रीवच० सू० ३८ ॥ प्रपत्ति का फल युधिष्ठिर आदिक पाण्डवों का राज्य प्राप्त हुआ तथा द्रौपदी को वस्त्र बढ़ना फल है और जयन्त काक तथा कालीयनाग का प्राण बच जाना फल है तथा गजराज को नित्य भागवतकैंकर्य प्राप्ति फल है और विभीषण को राम प्राप्ति तथा रामभद्र को समुद्र पार होना फल है और लक्ष्मणजी को रामानुवृत्ति फल है ॥ ३८ ॥ यह प्रपत्ति भुक्ति मुक्ति को देने वाली है। इस बात का उपदेश देने के लिये सामवेद, वाल्मीकि रामायण, और महाभारत, तथा नारद पांचरात्र और विष्णु पुराण आदिक में विशेष रूप से कही हुई जो प्रपत्ति है उसको यामुनाचार्य स्वामीजी कहते हैं।

२ ३ ४ ६ ५ ७ ८ १० ९

न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी न भक्तिमांस्त्व

११ १२ १

च्चरणारविन्दे । अकिञ्चनोऽनन्यगतिः शरण्य !

१३ १४ १५

त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये ॥ २५ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे [शरण्य] ऐ शरण में आये हुए की रक्षा करने वाले दीनरक्षक भगवन् ? (न) नहीं मेरी (धर्म निष्ठः) धर्म या कर्म में निष्ठा (अस्मि) है। धर्म का लक्षण जैमिनि महर्षि ने कहा है कि ॥ *'चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः ॥'* मीमा० । अ० १ । पा० १ । सू० २ ॥ प्रेरणात्मक जो वेदवाक्य है उसको धर्म कहते हैं ॥ २ ॥ उस धर्म का स्वरूप दश प्रकार का है। यह मनुस्मृति में लिखा है कि ॥ *'धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥'* मनु० । अ० ६ । श्लो० ६२ ॥ धीरता, क्षमा, मन को विषयों से रोकना, अन्याय से पराये धन को न लेना, मिट्टी तथा जल से देह को शुद्ध करना, विषय से चक्षु आदिक को रोकना, शास्त्र आदि के तत्व का ज्ञान, आत्मज्ञान, यथार्थ कहना और क्रोध न करना यह दश प्रकार का धर्म का स्वरूप है ॥ ६२ ॥ और मनुस्मृति के पहले अध्याय में आचार को परम धर्म कहा है ॥ *'आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च। तस्मादस्मिन्सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः ॥'* मनु० अ० १ । श्लो० १०८ ॥ श्रुति तथा स्मृति में कहा हुआ आचार परम धर्म है इसलिए आत्मवान् अपने धर्म को चाहने वाला ब्राह्मण सदा आचार युक्त रहे ॥ १०८ ॥ इस तरह कर्मयोग को करने में मैं असमर्थ हूं [च] और [न] न मैं (आत्मवेदी) आत्मज्ञानी हू, अर्थात् ज्ञानयोग को करने में मैं असमर्थ हूं और [न] न [त्वच्चरणारविन्दे] आपके चरणारविन्द में मैं [भक्तिमान्] भक्तिवाला हूं, अर्थात् भक्तियोग को करने में भी मैं असमर्थ हूँ, इससे [अकिञ्चनः] सब उपायान्तर से शून्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अत्यन्त दीन [अनन्यगतिः] और आपके विना और नहीं है प्राप्यान्तर जिसके, ऐसा जो मैं हूँ सो (त्वत्पादमूलं) आपके चरणारविन्द के मूल को (शरणं) रक्षक जान करके (प्रपद्ये) प्राप्त करता हूं, अर्थात् आपका चरणारविन्द ही मेरा रक्षक है ऐसा दृढ़ निश्चय करता हूँ। इसी को प्रपत्ति कहते हैं। प्रपत्ति करनेवालों में अकिञ्चनत्व और अनन्यगतित्व ये दो अवश्य होना चाहिये ॥ २५ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! उपायान्तर से शून्य एवं पापकर्म परायण मैं आपके आगे रुदन या अनुताप करता हूँ।

१२ ४ ५ ७ ६ २ ८ ३ १०
न निन्दितं कर्म तदस्ति लोके सहस्रशो यन्न
९ ११ १३ १४ १५ १
मया व्यधायि। सोहं विपाकावसरे मुकुन्द ?
२० १६ १७ १८ १९
क्रन्दामि संप्रत्यगतिस्तवाग्रे ॥ २६ ॥

अर्थ—हे (मुकुन्द) ऐ मुक्तिभूमिप्रद श्रीमन्नारायण भगवन् ? (लोके) इस मृत्युलोक में (यत्) जो (निन्दित) निन्दित बुरा (कर्म) काम [अस्ति] है [तत्] उसको [सहस्रशः] हजारों बार, अथवा सहस्र शब्द उपलक्षण मात्र है तो यह अर्थ हुआ कि अनेकों बार (मया) मैंने [न] नहीं (व्यधायि)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किया यह [न] नहीं, किन्तु जितने भी भूलोक में बुरे कर्म हैं उसको हजारों बार मैं किया हूँ [सः] वही अत्यन्त पाप कर्म को करनेवाला [अहं] मैं [विपाकावसरे] कर्म फल भोग के समय में (संप्रति) अब इस समय (अगतिः) गत्यन्तर रहित, अर्थात् आपके बिना जिसको दूसरा और कोई पाप कर्म के फल से छुड़ाने वाला नहीं है ऐसा मैं [तव] आपके [अग्रे] आगे [क्रन्दामि] रुदन या अनुताप करता हूँ अर्थात् ऐसा अनुताप करता हूँ कि जिससे मेरे ऊपर परम दयालु आप दया करके रक्षा कीजिये । इस श्लोक में संसारी जीवों के जो दोष हैं वे अपने ही हैं इस बात का उपदेश देने के लिये स्वरूपानुरूप नीचत्वानुसन्धान करते हुए अनुताप किये हैं ॥ २६ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्? यदि यह आप कहिये कि तुम्हारी रक्षा करने से मुझे क्या लाभ है तो मैं जो यह विज्ञापन करता हूँ इसको श्रवण कीजिये ।

३ २ ५ ४ ६ ७
निमज्जतोनन्तभवार्णवान्तश्चिराय मे कूलमि-
९ ८ १० ११ १७ १ १२
वासि लब्धः । त्वयापि लब्धं भगवन्निदानी-
१५ १६ १४ १३
मनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥ २७ ॥

अर्थ—हे (भगवन्) ऐ जीवों की उत्पत्ति प्रलय और अगति गति तथा विद्या और अविद्या को जाननेवाले षड़ैश्वर्यसंपन्न

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमन्नारायण देव ! (अनन्तभवार्णवान्तः) नहीं है अन्त जिसका ऐसा अपार संसाररूप जो समुद्र उसके बीच में (निमज्जतः) डूबनेवाला पाप कर्म परायण जो मैं हूँ (मे) मुझको (चिराय) बहुत दिन पर, अर्थात् न मालूम इस अपार संसार सागर में जन्म मरण को प्राप्त करते हुए कितने योनियों में घूमते घूमते बहुत दिनों के बाद (कूलं) तीर के (इव) समान आप (लब्धः) प्राप्त हुए (असि) हो और (त्वया) आप [अपि] भी [इदानीं] इस समय (दयायाः) अपनी दया के [इदं] यह [अनुत्तमं] जिससे उत्तम कोई भी नहीं है ऐसे मुझको अर्थात् अत्यन्त पाप के आचरण करनेवाले मुझ नीचको [पात्रं] दया रखने का पात्र [लब्धं] प्राप्त किये हैं, इसलिये मैं सर्वोत्तम दया का पात्र एवं रक्षणीय हूँ। ऐ भगवन् मेरी ही रक्षा करके आप अपने पतितपावन और दीनबन्धु इस नाम को सार्थक कर सकते हैं ॥ २७ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे श्रीमन्नारायण देव ? आपकी प्रपत्ति ग्रहण करनेवाले भक्त जनों को दुखानुभव होना यह आपको उचित नहीं है क्योंकि श्रीमद्भगवद्गीता के चरम श्लोक में आपने कहा है कि ॥ *'अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥'* गी० । अ० १८ । श्लो० ६६ ॥ आश्रित वात्सल्य जलधि मैं तुमको अपने प्राप्ति के विरोधी अनादिकाल के संचित जो अनन्त अकृत्यकरण और कृत्याकरण रूप संपूर्ण पापों से छुड़ा दूँगा, तुम शोक मत करो ॥ ६६ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२ ५ ६ ३ ४ ७ ८ १० १२
अभूतपूर्वं मम भावि किं वा सर्वं सहे मे सहजं
९ ११ १३ १४ १५ १६
हि दुःखम् । किं तु त्वदग्रे शरणागतानां
१७ १ २० १८ १९
पराभवो नाथ न तेऽनुरूपः ॥ २८ ॥

अर्थ—हे [नाथ] ऐ सर्व स्वामिन् भगवन् ? [अभूतपूर्वं] जिन दुःखों का अनुभव मैंने पहले कभी न किया हो (किं) अथवा [वा] और जो दुःख (मम) मेरे [भावि] होनेवाले हैं उन [सर्वं] समस्त दुःखों को (सहे) मैं सहता हूँ या सह लूंगा [हि] क्योंकि निश्चय करके [मे] मेरे (दुःखम्) दुःख (सहजम्) साथ ही उत्पन्न हैं अर्थात् स्वभाविक है। दुःख किसको कहते हैं यह मनुस्मृति में लिखा है कि ॥ *'सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् । एतद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः ॥'* मनु० । अ० ४ । श्लो० १६० ॥ जिसमें दूसरे की परतन्त्रता है वह सब दुःख है और सब अपने आधीन हो वह सुख है। यही सुख दुःख का लक्षण है ॥ १६० ॥ अर्थात् मैं अनादि काल से दुःख ही सहता आता हूँ (किन्तु) लेकिन (*त्वदग्रे शरणागतानां*) सर्व समर्थ आपके आगे शरण में आये हुए पुरुषों का (पराभवः) आपके अनुभव के विरुद्ध विषयाभिरुचिरूप तिरस्कार होना (ते) आपके (अनुरूपः) स्वरूपानुरूप (न) नहीं है। हे भगवन् ? जैसे प्रपत्ति करने पर जयन्त काक तथा कालीय नाग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और श्रीगजेन्द्र आदिक की रक्षा आप किये हैं वैसे ही केवल प्रपत्ति करनेवाले हम सबों की रक्षा करना आपको उचित है ॥२८॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्? यदि आप अकिञ्चन जनों का तिरस्कार भी करें तो भी मैं आपके चरणारविन्द को नहीं त्याग कर सकता हूँ ।

२ ३ ८ ६ ९ १ ७ ४
निरासकस्यापि न तावदुत्सहे महेश हातुं तव
५ १० ११ १२ १४ १३
पादपङ्कजम् । रुषा निरस्तोपि शिशुः स्तनंधयो
१८ १५ १६ १७ १९
न जातु मातुश्चरणौ जिहासति ॥ २९ ॥

अर्थ—हे [महेश] ऐ सबसे बड़े ऐश्वर्यवाले भगवन् श्रीमन्नारायण देव! (निरासकस्य) हमारे वर्ग के चेतनों को त्याग करने में शील स्वभाव को यदि आप प्रवृत्त करेंगे (अपि) फिर भी [तव] आपके [पादपङ्कजम्] चरणारविन्द को [तावत्] तब तक, अर्थात् जब तक हमारे कलेवर में प्राण रहेगा तब तक [हातुम्] छोड़ने के लिये मैं (न) नहीं [उत्सहे] उत्साह कर सकता हूँ, कारण कि माता [रुषा] क्रोध से [निरस्तः] छोटे बच्चे को अपने से दूर हटाती है (अपि) फिर भी (स्तनन्धयः) स्तन पीनेवाला [शिशुः] बालक [जातु] कभी भी [मातुः] अपनी माता के [चरणौ]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोनों चरणों को [न] नहीं [जिहासति] त्याग करने की इच्छा करता है, अर्थात हे भगवन् ? मैं कभी भी आपके चरणारविन्द को नहीं छोड़ सकता हूँ। वस्तुतस्तु हे स्वामिन् ? अत्यन्त अज्ञ-अकिञ्चन इस जन को छोड़ देना आप को भी उचित नहीं है क्योंकि केवल स्तन पान करनेवाला अज्ञ बालक माता के देह पर मल मूत्र कर देता है तथा पैरों से मारता है और दूध पीने के समय में मां के स्तन को काट लेता है फिर भी माता बालक को कभी नहीं परित्याग करती है बल्कि बालक के रोगी होने पर उस बालक के आरोग्य होने के लिये स्वयं ही औषधि सेवन करती है वैसे ही आपको भी उचित है ॥ २६ ॥

अब यामुनाचार्य्य स्वामीजी यह कहते हैं कि ॥ *'मुमुक्षवो-घोररूपान्हित्वा भूतपतीनथ । नारायणकलाः शान्ता भजन्ति ह्यनसूयवः ॥'* भाग० । स्क० १ । अ० २ । श्लो० २६ ॥ मुमुक्षु सब घोर रूप तमोगुणीभूतपतियों को त्याग करके असूया रहित निश्चय करके शान्त नारायण की कला को भजते हैं ॥ २६ ॥ इस श्रीमद्भागवत के श्लोक के अनुसार और ॥ *'तमेव विदित्वा-तिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥'* यजु० । अ० ३३ । मं० २८ ॥ उस केवल श्रीमन्नारायण भगवान् को जान करके जन्म मरण से रहित हो सकता है। मोक्ष के लिये दूसरा कोई मार्ग नहीं है ॥ १८ ॥ इस शुक्ल यजुर्वेद के मन्त्र के अनुसार हे भगवन् ! आपके भक्त मुमुक्षजन आपके चरणारविन्द से अन्य की इच्छा नहीं करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२ १ ३ ४
तवामृतस्यन्दिनि पादपङ्कजे निवेशितात्मा
६ ५ ७ १० ९ ८
कथमन्यदिच्छति । स्थितेऽरविन्दे मकरन्द
११ १४ १३ १२ १५
निर्भरे मधुव्रतो नेक्षुरकं हि वीक्षते ॥ ३० ॥

अर्थ—हे स्वामिन् ? (*अमृतस्यन्दिनि*) अमृत का स्राव करने वाला या अमृतरूप गङ्गा के स्राव का उद्‌गम स्थान जो [तव] आपका (पादपङ्कजे) चरणारविन्द है उस चरण कमल में [निवेशितात्मा] जो लोग मन को लगा दिये हैं या जो लोग भगवान् के चरणारविन्द में आत्म समर्पण कर चुके हैं वे चेतन पुरुष [अन्यत्] अन्य वस्तु मात्र को या संसार के प्रपञ्च को [कथं] कैसे [इच्छति] इच्छा कर सकते हैं, अर्थात् नहीं कर सकते हैं कारण कि [मकरन्दनिर्भरे] परिमल या पराग या पुष्प रस करके परिपूर्ण भरे हुए [अरविन्दे] कमल में [स्थिते] स्थित रहने पर अर्थात् जब तक रस से भरा हुआ कमल का फूल मिलता है तब तक [मधुव्रतः] भ्रमर [हि] निश्चय करके नीरस (इक्षुरकं) तालमखाने को [न] नहीं (वीक्षते) विशेषरूप से देखता है, अर्थात् तालमखाने के रस को अनुभव नहीं करता है ॥ ३० ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! आपके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चरणाविंद के उद्देश्य से एक बार भी यदि दोनों हाथों की अञ्जलि जोड़ दी जाती है तो सम्पूर्ण पाप दूर हो जाते हैं ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७
त्वदंघ्रिमुद्दिश्य कदापि केनचिद्यथा तथा
८ ९ १० ११ १२ १३ १६ १४
वापि सकृत्कृतोञ्जलिः । तदैव मुष्णात्यशु-
१५ १७ १८ २० १९
भान्यशेषतः शुभानि पुष्णाति न जातु
२१
हीयते ॥ ३१ ॥

अर्थ—हे आश्रित पापहर भगवन् ? [त्वदंघ्रि] आपके चरण कमल को [उद्दिश्य] उद्देश करके (कदा) किसी काल में (अपि) भी (केनचित्) कोई पुरुष (यथा) जिस (तथा) किसी प्रकार से (वापि) भी यदि (सकृत्) एक बार [कृतोऽ-ञ्जलिः] अञ्जलि कर लेवै तो [तदा] उसी समय में (एव) निश्चय करके वह (अशुभानि) चेतन के पापरूप अमङ्गल कर्मों को (अशेषतः) निःशेष सम्पूर्ण (मुष्णाति) आप चुरा लेते हैं और (शुभानि) शुभ अच्छे कर्मों को (पुष्णाति) आप बढ़ा देते हैं जिससे कि यह चेतन [जातु] कभी भी (न) नही [हीयते] शुभ कर्म से रहित होता है ॥ ३१ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ? आपके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चरणारविन्द की भक्ति का लेश भी संसारतापको दूर करके परमानन्द को देनेवाला है ।

उदीर्णसंसारदवाशुशुक्षणिं क्षणेन निर्वाप्य परां च निर्वृतिम् । प्रयच्छति त्वच्चरणाम्बुजद्वयानुरागामृतसिन्धुशीकरः ॥ ३२ ॥

अर्थ—हे भगवन् (*त्वच्चरणाम्बुजद्वयानुरागामृतसिन्धुशीकरः*) आपके लाल कमलके समान जो दोनों चरणारविन्द उसमें प्रेम रूपापन्न भक्ति रूप जो जन्म मरण से रहित करनेवाला अमृतका समुद्र उसकी कणिका अर्थात् भक्ति के लेश मात्र भी (उदीर्णसंसारदवाशुशुक्षणिं) बड़े भारी जलते हुए संसार रूप दावानल अग्निको शीघ्र तत्काल ही (क्षणेन) क्षणमात्र में (निर्वाप्य) शान्त करके (च) और [परां] परम उत्कृष्ट [निर्वृतिं] जन्म मरण से रहित होना रूप जो अत्यन्त सुख है उस सुख को (प्रयच्छति) देनेवाला है । अर्थात् भगवद्भक्ति के लेश मात्र से परमानन्दसन्दोहसुधा की प्राप्ति होती है जिसको पाकर यह चेतन ॥ न स पुनरावर्तते न स पुनरावर्तते ॥ फिर इस संसार में नहीं आता है । इस बात को श्रीवेदव्यासजी ने भी वेदान्तसूत्र में कहा है कि—(*अनावृत्तिः शब्दात्*) परमानन्द सन्दोह सुख को भोगता हुआ मुक्त जीव संसार में जन्म नहीं लेता है वेद के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रमाण होने से । इससे हम सबों को भगवद्भक्ति अवश्य करनी चाहिये ॥ ३२ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि, हे भगवन्! आपके युगल चरणारविन्द जो हमारा धन है उसको नेत्र से कब देखूँगा ।

१ २
विलासविक्रान्तपरावरालयं नमस्यदार्तिक्षपणे
३ ५ ४ ६ ७ १० ८
कृतक्षणम् । धनं मदीयं तव पादपङ्कजं कदा नु
११ १२ ९
साक्षात्करवाणि चक्षुषा ॥ ३३ ॥

अर्थ—हे त्रिविक्रमावतार धारण करनेवाले भगवन् ! *[विलासविक्रान्तपरावरालयम्]* लीला से अपने पैर को फैला कर आधीन कर लिया है ब्रह्मा इन्द्र आदिक के स्थान स्वर्ग लोक और अण्डज पिण्डज उष्मज स्थावर जीवों के स्थान मृत्यु लोक तथा पाताल लोकों को जिसने । श्रीत्रिविक्रमावतारधारी विष्णु वामन भगवान् ने तीन पैर में आकाश पाताल मृत्युलोक इन तीनों लोकों को ग्रहण कर लिया है शुक्लयजुर्वेद में लिखा हुआ है कि ॥ इदं *विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्यपाꣳसुरे स्वाहा ॥* यजु० । अ० ५ । मं० १५ ॥ त्रिविक्रमावतारधारी विष्णु भगवान् ने इस संपूर्ण ब्रह्माण्ड में अपने चरण को फैलाया और तीन स्थान पर रक्खा । उस वामन भगवान् की धूलि युक्त चरण में समस्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ब्रह्माण्ड अन्तर्गत हो गया ॥ १५ ॥ और भी लिखा है कि ॥ *यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥* यजु० । अ० ५ । मं० २० ॥ जिस श्रीवामन भगवान् के तीन पैर फैलाने में उसके भीतर आकाश पाताल मृत्युलोक समस्त हो गया ॥ २० ॥ इससे यह सिद्ध हो गया कि ब्रह्मा आदिक देवों के स्थान को आधीन रखनेवाला भगवान् का चरणारविन्द है, और (नमस्यदार्तिक्षपणे) नमस्कार साष्टाङ्ग करनेवाले शरण में आये हुए दुःखी पुरुषों के दुःख निवारण करने के विषय में, अर्थात् श्रीगजेन्द्र आदिक के दुःख निवारण करने के लिये (कृतक्षणम्) किया है शीघ्रता जिसने ऐसे जो [मदीयं] मेरे [धनं] धन, सर्वस्व [तव] आपके (पादपङ्कजं) चरण कमलको [नु] वितर्क करके निश्चय (चक्षुषा) नेत्र से (कदा) कब [साक्षात्] प्रत्यक्ष [करवाणि] मैं करूंगा ॥ ३३ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! पाञ्चजन्य शंख आदिक के चिन्हों से भूषित आपका चरणारविन्द मेरे मस्तक को कब सुशोभित करेगा ।

५ ४ २

कदा पुनः शङ्खरथाङ्गकल्पकध्वजारविन्दाङ्कुशव-

१ ३

ज्रलाञ्छनम् । त्रिविक्रम ! त्वच्चरणाम्बुजद्वयं

७

मदीयमूर्द्धानमलङ्करिष्यति ॥ ३४ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे (त्रिविक्रम !) ऐ स्वर्ग पाताल मृत्यु लोक इन तीन जगह पैर को फैलानेवाले वामन भगवन् ! त्रिविक्रम वामनावतारधारी श्रीविष्णु भगवान् का नाम है। यह कथा श्रीमद्भागवत या नारद पुराण में लिखी हुई है कि बलि नाम का दैत्यराज ने संग्राम में इन्द्र आदिक देवों को पराजय करके जब उनके स्थान को ले लिया तब देवों की आपत्ति दूर करने के लिये श्रीविष्णु भगवान् का कश्यपऋषि की भार्या जो अदिति थी उससे प्रादुर्भाव हुआ और उन्होंने अत्यन्त छोटा वामन रूप धारण करके राजा बलि के यज्ञ में जाकर साढ़े तीन पैर पृथ्वी की याचना की। और नापते समय इतना पैर बढ़ाया कि तीन डेग में तीनों लोकों को नाप लिया, इसी से श्रीविष्णु भगवान् का त्रिविक्रम नाम पड़ा है। तो हे त्रिविक्रम श्रीमन्नारायण देव ! [*शङ्खरथाङ्गकल्पकध्वजारविन्दाङ्कुशवज्रलाञ्छनम्*] पाञ्चजन्यशंख तथा चक्रसुदर्शन और कल्प वृक्ष तथा ध्वजा और कमल एवं अङ्कुश और वज्रायुध ये समस्त हैं चिह्न जिसमें ऐसे (*त्वच्चरणाम्बुजद्वयं*) आपके दोनों चरण कमल (पुनः) फिर (कदा) किस समय में (मदीयमूर्धानं) मेरे मस्तक को (अलंकरिष्यति) सुशोभित करेगा। अर्थात् हे भगवन् ! आप अपने चरण कमल को मेरे मस्तक पर कब रक्खेंगे ॥ ३४ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी ॥ *विराजमानोज्ज्वलपीतवाससम्* ॥ इस श्लोक से लेकर ॥ *भगवन्तमेवानुचरन्* ॥ इस श्लोक पर्यन्त पन्द्रह श्लोक में अचिन्त्य दिव्य अद्भुत नित्य निरवद्य निरतिशयौज्ज्वल्य सौन्दर्य सौगन्ध्य सौकुमार्य लावण्य यौवनादि अनन्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

गुणनिधि तथा दिव्य आयुध वसन भूषण स्रग् चन्दनादि भूषित और नित्य अनन्त गरुड विष्वक्सेन आदि जीवों से सुसेवित तथा अपार कारुण्य सौशील्य वात्सल्य औदार्य ऐश्वर्य महोदधि और करोड़ों कामदेव को मोहित करनेवाले अखिल ब्रह्माण्डनायक श्रीमन्नारायण भगवान् का वर्णन करते हैं। अग्रिम श्लोकों में उञ्चासवें श्लोक के *"भवन्तमेवानुचरन् कदाहं सनाथजीवितं प्रहर्षयिष्यामि"* ये पद अन्वित होते रहेंगे।

विराजमानोज्ज्वलपीतवाससं[१] स्मितातसीसून-[२]
समामलच्छविम्। निमग्ननाभिं[३] तनुमध्यमुन्नतं[४][५]
विशालवक्षःस्थलशोभिलक्षणम्[६] ॥ ३५ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण देव! (*विराजमानोज्ज्वलपीतवाससं*) अत्यन्त प्रकाशमान निर्मल स्वच्छ पीताम्बर को धारण करनेवाले और (*स्मितातसीसूनसमामलच्छविम्*) खिले हुये तीसी के फूल के समान निर्मल स्वच्छ कान्ति या शोभावाले और (निमग्ननाभिं) अत्यन्त गंभीर नाभि वाले (तनुमध्यं) अति सुंदर या कृश पतले मध्यभाग वाले (उन्नतं) और अति दीर्घ या अतिह्रस्व आदि विकार रहित अर्थात् उच्च (*विशालवक्षःस्थलशोभिलक्षणम्*) विस्तार वाले वक्षः स्थल में अत्यन्त शोभा करनेवाला जो भृगुमुनि के पैर का श्रीवत्स चिन्ह है उसको धारण करनेवाले।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीविष्णु भगवान् ने श्रीवत्स चिन्ह को धारण किया है यह श्रीमद्भागवत में लिखा हुआ है कि ॥ *अद्याहं भगवँल्लक्ष्म्या आसमेकान्तभाजनम् । वत्स्यत्युरसि मे भूतिर्भवत्पादहतांहसः ॥* भाग० । स्कं० १० उत्तरार्धदश० । अ० ८६ । श्लो० १२ ॥ हे भगवन् भृगो ! आज मैं लक्ष्मी के साथ एकान्त भाजन हो गया था अब उसके बाद आपके पैर मारने का जो यह चिन्ह है वह मेरे वक्षःस्थल में भूति रूप से रहेगा ॥ १२ ॥ उस श्रीवत्स चिन्ह को धारण करनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) अच्छी प्रकार से संतोष प्राप्त कराऊँगा । इस श्लोक का अन्वय यहाँ से पन्द्रहवें श्लोक में होता है क्योंकि यह कूलक है । इसका लक्षण यह है कि ॥ *द्वाभ्यां युग्ममितिप्रोक्तं त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकम् । कलापकं चतुर्भिःस्यादित ऊर्ध्वं कूलकं स्मृतम् ॥* जब दो श्लोकों का एक साथ अन्वय होता है तो उसको युग्म कहते हैं और तीन श्लोकों का अन्वय एक साथ होता है तो उसको विशेषक कहते हैं तथा चार श्लोकों का अन्वय एक साथ होता है तो उसको कलापक कहते हैं और उससे अधिक श्लोकों का एक साथ अन्वय होता है तो उसको कूलक कहते हैं । अन्वय का भी लक्षण लिखा हुआ है कि ॥ *आदौ कर्तृपदं वाच्यं द्वितीयादिपदं ततः । क्त्वाल्यप्तुमुन्मध्ये तु कुर्यादन्ते-क्रियापदम् ॥* अन्वय में पहले सुऔजस् का रूप अर्थात् कर्तृपद का प्रयोग करना चाहिये । इसके बाद द्वितीया आदिक पदों का प्रयोग करना चाहिये । क्त्वा ल्यप् तुमुन् प्रत्ययान्त पद को मध्य में कहना चाहिये । और अन्त में क्रिया पद को कहना चाहिये ॥ ३५ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमन्नारायण की नाभि और वक्षःस्थल का वर्णन करके अब स्तोत्ररत्नकर्ता उनके चारों भुजाओं का वर्णन करते हैं ।

चकासतं ज्याकिणकर्कशैः शुभैश्चतुर्भिराजानु-
विलम्बिभिर्भुजैः । प्रियावतंसोत्पलकर्णभूषण-
श्लथालकाबन्धविमर्दशंसिभिः ॥ ३६ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (*प्रियावतंसोत्पलकर्णभूषणश्लथालकाबन्ध-विमर्दशंसिभिः*) सर्वदा प्रिय चाहनेवाली जगज्जननी प्रिया श्रीलक्ष्मी देवीजीका शिरोभूषण चूड़ामणि, या मस्तक का भूषण रूप जो कुवलय नामका कमल तथा कर्ण भूषण अर्थात् कानों का भूषण कर्णफूल तथा गुथे हुए चिकने लम्बे लम्बे काले केशों और नीवी के बन्धन इन सबों को विहार समय में संपर्क रूप संघर्ष की सूचना करनेवाले तथा (ज्याकिणकर्कशैः) शार्ङ्ग धनुष की जो ज्या रस्सी है उसके चढ़ाने से या धनुष के टंकोर करने से ठेला पड़े हुए अर्थात् धनुष की रस्सी के घर्षण से उत्पन्न हुई मांस ग्रन्थि करके कठिनता वाले तथा (आजानुविलम्बिभिः) अच्छी प्रकार से जानु पर्यन्त पहुँचे हुए लम्बे लम्बे (शुभैः) सुन्दर मनोहर (चतुर्भिः) चार (भुजैः) भुजों करके (चकासतं) प्रकाशमान, (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) संतोष प्राप्त कराऊंगा ॥ ३६ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब स्तोत्ररत्नकर्ता श्रीमन्नारायण की ग्रीवा का वर्णन करते हैं।

१
उदग्रपीनांसविलम्बिकुण्डलालकावलीबन्धुर-
२ ३
कम्बुकन्धरम् । मुखश्रिया न्यक्कृतपूर्णनिर्मला-
मृतांशुबिम्बाम्बुरुहोज्ज्वलश्रियम् ॥ ३७ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण देव ! (*उदग्रपीनांसविलम्बिकुण्डलालकावलीबन्धुरकम्बुकन्धरम्*) उन्नत ऊँचा तथा पुष्ट मोटा जो स्कन्ध उस पर अत्यन्त लम्बमान जो मकराकृतिकुण्डल उस कुण्डल से तथा लम्बे लम्बे घुँघुराले काले केशों की श्रेणियों करके सुन्दर मनोहर शंख के समान ग्रीवा (गर्दन) वाले तथा (मुखश्रिया) अपने मुखारविन्द की शोभा या कान्ति से (*न्यक्कृतपूर्णनिर्मलामृतांशुबिम्बाम्बुरुहोज्ज्वलश्रियं*) पूर्णिमा के निर्मल चन्द्रमा और लाल जल में उत्पन्न होनेवाले कमल इन दोनों की उज्ज्वल शोभा या कान्ति को तिरस्कार अर्थात् लज्जित करनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ३७ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता भगवत् के मुखारविन्द का वर्णन करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ २ ३
प्रबुद्धमुग्धाम्बुजचारुलोचनं सविभ्रमभ्रूलतमु-
४ ५ ६
ज्ज्वलाधरम् । शुचिस्मितं कोमलगण्डमुन्नसं
७
ललाटपर्य्यन्तविलम्बितालकम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—हे भगवन्! (*प्रवुद्धमुग्धाम्वुजचारु लोचनं*) विकसित अत्यन्त खिले हुए सुन्दर रमणीय कमल के समान मनोहर नेत्रवाले तथा (सविभ्रमभ्रूलतं) विलास सहित टेढ़ी कमान के समान भौंहों वाले और (उज्ज्वलाधरं) प्रकाशमान लाल विम्ब फलके समान अधरोष्ठ वाले तथा (शुचिस्मितं) अत्यन्त शुद्ध धीरे धीरे मुसकान वाले और (कोमलगण्डं) अत्यन्त कोमल गोले गोले गालवाले तथा (उन्नसं) उच्च तोते के समान नासिका वाले और (ललाटपर्य्यन्तविलम्बितालकम्) ललाट पर्यन्त लिपट रहे हैं भ्रमर के समान घुँघुराले काले वाल जिनके ऐसे (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथ-जीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्ष-यिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ३८ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता शंख चक्र आदिक आयुध तथा भगवान् के किरीटादिक भूषण का वर्णन करते हैं ।

१
स्फुरत्किरीटाङ्गदहारकण्ठिकामणीन्द्रकाञ्चीगु-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२ ६
णनूपुरादिभिः । रथाङ्गशङ्खासिगदाधनुर्वरैर्ल-
३ ४ ५
सत्तुलस्या वनमालयोज्ज्वलम् ॥ ३९ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (*स्फुरत्किरीटाङ्गदहारकण्ठिकामणीन्द्रकाञ्चीगुणनूपुरादिभिः*) प्रकाशमान किरीट मुकुट तथा केयूर विजायठ मोती की माला या चन्द्रहार तथा मोहरमाला कण्ठ भूषण तुरदल्ली कौस्तुभमणि तथा मेखला करधनी क्षुद्रघण्टिका यज्ञोपवीत नूपुर पैजनीं कटिसूत्र मकराकृति कुण्डल मणिमय नगजड़ित अँगूठी तहबीज बाघनांहा कमरकस आदिक भूषणों करके तथा (*रथाङ्गशंखासिगदाधनुर्वरैः*) सुदर्शनचक्र पाञ्चजन्य शंख नन्दक तलवार कौमोदकी गदा और धनुषों में श्रेष्ठ शार्ङ्ग धनुष इन पांच आयुधों करके तथा (तुलस्या) तुलसी करके (वनमालया) तुलसी कुन्द मन्दार पारिजात और कमल इन पांच चीजों की बनी हुई वनमालाओं से (उज्ज्वलं) उज्ज्वल प्रकाशमान (लसत्) अत्यन्त सुन्दर छटा देनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा ।

श्रीमन्नारायण भगवान्के करमें शंख चक्र आदिक रहता है यह पांडव गीतामें लिखा हुआ है कि ॥ *यस्य हस्ते गदाचक्रे गरुडो यस्य वाहनम् । शंखः करतले यस्य स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥* पां० । गी० । श्लो० ७७ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सनत्कुमार ऋषि ने कहा है कि जिस श्रीविष्णु भगवान् के हाथ पाञ्चजन्य शंख तथा सुदर्शन चक्र और कौमोदकी गदा तथा अनन्त दलवाला कमल रहता है और गरुड़ जिसके वाहन हैं वह विष्णु भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होवें ॥ ७७ ॥ और भी महानारायणोपनिषद् में लिखा हुआ है कि ॥ *ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्तीनारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः । केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटीहारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ॥* सूर्यमण्डल के मध्य में वर्तमान कमलासन से बैठे हुए और केयूर मकराकृति कुण्डल किरीट हार तथा शंख चक्र को धारण करनेवाले तथा सुवर्ण के समान देहवाले श्री सन्नारायण भगवान् का सर्वदा ध्यान करना चाहिये । इससे यह सिद्ध होता है कि किरीट कुण्डल केयूर आदि भूषणों से भूषित श्रीसन्नारायण हैं ॥ ३९ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता भगवान् के वक्षःस्थल का वर्णन करते हुए श्री सेनेशविष्वक्सेनाचार्य स्वामीजी को मूल मन्त्रोपदेष्ट्री लक्ष्मी देवीजी के महत्व को सवा दो श्लोक में वर्णन करते हैं ।

११ ३ ४ २ १ ६ ७
चकर्थ यस्या भवनं भुजान्तरं तव प्रियं धाम
५ १० ९ ८ १२
यदीयजन्मभूः । जगत्समग्रं यदपाङ्गसंश्रयं यद-
१३ १४ १६ १५
र्थमम्भोधिरमन्थ्यबन्धि च ॥ ४० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे भगवन् ? (तव) आपके (भुजान्तरं) चारों भुजाओं के बीच का वक्षःस्थल (यस्याः) जिस लक्ष्मीजी के (भवनं) रहनेका घर है और (यदीयजन्मभूः) जिस लक्ष्मीजी की जन्म भूमि क्षीर समुद्र आपको (प्रियं) अति प्रिय सर्वदा रहने का (धाम) स्थान है। श्रीमन्नारायण को प्रिय एवं सर्वदा रहने का स्थान क्षीर समुद्र ही है इसी से आपत्ति आने पर सब देवताओं ने क्षीर समुद्र के तटपर जा करके श्रीविष्णु भगवान् की स्तुति की है। यह श्रीमद्भागवत के दशमस्कन्ध पूर्वार्ध के पहले अध्याय में स्पष्ट लिखा है। (यदपाङ्गसंश्रयं) और जिस लक्ष्मी जी के कटाक्ष के संकेत होने से (समग्रं) सम्पूर्ण (जगत्) संसार की सृष्टि (चकर्थ) आप करते हैं और (यदर्थं) जिस लक्ष्मीजी के लिये (अम्बोधिः) समुद्र (अमन्थि) मन्थन आपने किया, यह कथा श्रीमद्भागवत के आठवें स्कन्ध के आठवें अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है (च) और जिस लक्ष्मीजी के लिये श्रीरामावतार में (अवन्धि) आपने समुद्र बाँधा। श्रीरामचन्द्रजी ने नल के द्वारा समुद्र में महा सेतु बँधवाया है यह स्पष्ट वाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड के बाइसवें सर्ग में लिखा हुआ है (तया) उस लक्ष्मीजी करके (सह) सहित (आसीनं) एक आसनपर स्थित (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) संतोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ४० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ २ ३ ४ ५ ६ ७
स्ववैश्वरूपेण सदानुभूतयाप्यपूर्ववद्विस्मयमाद-
८ ९ १० ११ १२ १४
धानया। गुणेन रूपेण विलासचेष्टितैः सदातवै
१३ १५ १६ १७ १८ २०
वोचितया तव श्रिया ॥ ४१ ॥ तया सहासी
१९
नमनन्तभोगिनि-

अर्थ—हे भगवन्! (स्ववैश्वरूपेण) आपने अपने सम्पूर्ण विराट् स्वरूप से (सदा) सब काल में, हमेशा (अनुभूतया) अनुभव किया है (अपि) तोभी (अपूर्ववत्) अपूर्व की नाईं (विस्मयं) आश्चर्यको (आदधानया) अच्छी प्रकार से कराने वाली और (गुणेन) वात्सल्य सौशील्य सौलभ्य दया क्षान्ति आदि स्वाभाविक गुणों करके तथा (रूपेण) सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में रहनेवाले देवता तथा दैत्यों को मोहित करनेवाला सुन्दर दिव्य मङ्गल विग्रह करके और (विलासचेष्टितैः) विलास पूर्वक करचरणादि व्यापारों से (सदा) सम्पूर्ण काल में (तव) आपके (उचितया) उचित अनुरूप (एव) ही निश्चय करके (तव) आपकी (श्रिया) प्रिया जो लक्ष्मीजी, श्रीमन्नारायणकी पत्नी लक्ष्मीजी हैं यह शुक्ल यजुर्वेद भी कहता है कि ॥ *श्रीश्च ते-लक्ष्मीश्च पत्न्यौ* ॥ यजु० ॥ अ० ३१ ॥ मं० २२ ॥ श्री और लक्ष्मी ये दो भगवान् की स्त्रियाँ हैं ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि लक्ष्मीजी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवान् की पत्नी हैं ॥ ४१ ॥ (तथा) उस लक्ष्मीजी के (सह) सहित (अनन्त भोगिनि) जिसका अन्त न हो सके ऐसे अनन्त फणोंवाले जगदाधार अनन्त नाम वाले शेषजी के ऊपर अनन्त नामवाला नाग सम्पूर्ण नागों में श्रेष्ठ हैं इसी से भगवद्गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा है कि ॥ *अनन्तश्चास्मि नागानाम्* ॥ भग० ॥ गी० अ० १० ॥ श्लो० २९ ॥ नागों में मैं अनन्त नाम वाला हूँ ॥ २९ ॥ उस अनन्तजी पर (आसीनं) बैठनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) संतोष प्राप्त कराऊँगा ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता भगवान् का वर्णन करते हुए फणिराज शेषजी का वर्णन करते हैं ।

१ २

प्रकृष्टविज्ञानबलैकधामनि । फणामणिव्रातमयूख-
मण्डलप्रकाशमानोदरदिव्यधामनि ॥ ४२ ॥

१

निवासशय्यासनपादुकांशुकोपधानवर्षातपवारणा-

६ ३ ४ ५ २ ८

दिभिः । शरीरभेदैस्तवशेषतां गतैर्यथोचितं शेष

९ १० ७

इतीर्यते जनैः ॥ ४३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—जिस शेषजी पर श्रीमन्नारायण भगवान् बैठते हैं वे कैसे हैं कि (प्रकृष्टविज्ञान बलैकधामनि) अत्यन्त उत्कृष्ट विज्ञान रूप बल के मुख्य स्थान हैं और फिर कैसे हैं (फणामणिव्रात-मयूखमण्डलप्रकाशमानोदरदिव्यधामनि) फणों की जो मणि उनके समूहों के जो किरण समूह उससे प्रकाशमान है अप्राकृत रूप उदर कुक्षिगृह जिनका ऐसे शेषजी पर (आसीनं) बैठनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित (कदा) कब (प्रहर्ष-यिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ४२ ॥ (निवासशय्यासन-पादुकांशुकोपधानवर्षातपवारणादिभिः) निश्चय करके रहने का वासस्थान शय्या सिंहासन खड़ाऊँ तथा पहनने के लिये पीताम्बर तकिया वर्षा तथा घाम को निवारण करनेवाले छाता आदि हैं जिनके ऐसे जो (यथोचितं) यथोचित (तव) आपके (शेषतां) शेषभावको (गतैः) प्राप्त (शरीरभेदैः) शरीर के भेद होने से (जनैः) सम्पूर्णजन (शेषः) शेष (इति) ऐसा (इर्यते) कहते हैं । ऐसे (अनन्तभोगिनि) अनन्त नामवाले शेषजी पर (आसीनं) बैठनेवाले (भवन्तं) आपकी (अनु-चरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) स्वामी सहित जीवनको (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ४३ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता श्रीमन्नारायण का वर्णन करते हुए जिसको भगवद्गीता में श्रीकृष्णचन्द्रजीने कहा है कि ॥ (वैनतेयश्च-पक्षिणाम् ॥) गी० ॥ अ० १० ॥ श्लोक० ३० ॥ पक्षियों में विनता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुत गरुड़ मैं ही हूँ ॥ ३० ॥ और शुक्ल यजुर्वेद में भी लिखा है कि ॥ *सुपर्णोसि गरुत्मान्पृष्टे पृथिव्याःसीद* ॥ यजु० अ० ॥ १७ ॥ मं० ॥ ७२ ॥ हे गरुड़ ! तुम सुन्दर पंख वाले गरुत्मान् हो इससे पृथ्वी की पीठ पर आगे बैठो ॥ ७२ ॥ इत्यादि मन्त्रों से स्पष्ट कहे हुए गरुड़ का वर्णन करते हैं ।

४ ५ ६ ७ ८ २ ३ ९ १०

दासः सखा वाहनमासनं ध्वजो यस्ते वितानं व्य-

१ १५ १२ १४ १३

जनं त्रयीमयः । उपस्थितं तेन पुरो गरुत्मता

११

त्वदङ्घ्रिसंमर्द्दकिणाङ्कशोभिना ॥ ४४ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (त्रयीमयः) ऋग् यजुः साम वेदमय मूर्तिवाले (यः) जो गरुड़जी हैं वेही (ते) आपके (दासः) सेवक नौकर हैं तथा (सखा) उपकार न चाहते हुए शुभ कार्य करनेवाले सुहृत् हैं तथा (वाहनं) ढोनेवाले वाहन हैं तथा (आसनं) बैठने के लिये सिंहासन हैं तथा (ध्वजः) फहराने के लिये ध्वजा हैं तथा (वितानं) ऊपर में टाँगने के लिये चाँदनी हैं और (व्यजनं) हवा देनेके लिये पंखा हैं अर्थात् हे श्रीमन्नारायण देव ! जब जिस वस्तु की आवश्यकता होती है तब तत् तद्रूप होकर गरुड़जी आपकी सेवा करते हैं और (त्वदंघ्रि-संमर्द्दकिणाङ्कशोभिना) आपके चरणारविन्द के संघर्षण से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न जो शंख चक्र कल्पवृक्ष ध्वजा कमल अंकुश वज्र आदि के चिन्ह हैं; उनसे अत्यन्त सुन्दर शोभायमान (तेन) उस (गरुत्मता) गरुड़जी करके (पुरः) अग्र भाग में (उपस्थितं) उपस्थित, अर्थात् आपकी सेवा करने के लिये गरुड़जी अग्र भाग में खड़े रहते हैं ऐसे (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) संतोष प्राप्त कराऊँगा ॥४४॥

अब भगवान् का वर्णन करते हुए श्री शठकोपाचार्य स्वामीजी के आचार्य जो भगवान् विष्वक्सेनाचार्यजी हैं उनको स्तोत्ररत्न-कर्ता वर्णन करते हैं ।

१ २ ३
त्वदीयभुक्तोज्झितशेषभोजिना त्वया निसृष्टा-
७ ६ ४ ५ ८
त्मभरेण यद्यथा । प्रियेण सेनापतिना निवेदितं
९ ११ १०
तथानुजानन्तमुदारवीक्षणैः ॥ ४५ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (*त्वदीयभुक्तोज्झितशेषभोजिना*) आपके उपभोग स्वीकार करने के बाद आपके छोड़े हुए शेष प्रसादको भोजन या स्वीकार करनेवाले तथा (त्वया) आपने (निसृष्टा-त्मभरेण) स्थापित किया है चेतनोद्धार रूप अपना भार जिनके ऊपर ऐसे (प्रियेण) अत्यन्त प्रिय (सेनापतिना) सेना के रक्षक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मालिक श्रीविष्वक्सेनाचार्यजी ने जिस काल में (यथा) जिस प्रकार से (यत्) जो वस्तु (निवेदितं) निवेदित किया है (तथा) उस काल में उस वस्तु को उसी प्रकार से आप अपने (उदारवीक्षणैः) उदार कृपा कटाक्ष से (अनुजानन्तं) अङ्गीकार करनेवाले जो आप हैं उस (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा। इस श्लोक से यह सिद्ध होता कि भगवान् को अर्पण करके उसी भोग को श्रीविष्वक्सेन जी को भोग लगाना चाहिये क्योंकि-भगवद् भुक्तोज्झित को स्वीकार करनेवाले श्रीसेनापतिजी हैं॥ ४५॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता श्रीमन्नारायण का वर्णन करते हुए भगवान् के सचिवों का वर्णन करते हैं।

२ १ १० ३
हताखिलक्लेशमलैःस्वभावतःसदानुकूल्यैकरसै-
५ ६ ४ ११
स्तवोचितैः। गृहीततत्तत्परिचारसाधनैर्निषेव्य-
७ ८ ९
माणं सचिवैर्यथोचितम्॥ ४६॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण देव! (स्वभावतः) स्वभाव से ही (हताखिलक्लेशमलैः) नष्ट हो गये हैं सम्पूर्ण क्लेशमल जिन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोगों के और (आनुकूल्यैकरसैः) आपके अनुकूल रहना यही है एक मुख्य रस जिन लोगों के और (गृहीततत्तत्परिचारसाधनैः) ग्रहण किया है नित्य कैंकर्य के साधन छाता चँवर पंखा छड़ी सिंहासन आदि जिन्होंने ऐसे जो (तव) आपके (उचितैः) अनुरूप योग्य (सचिवैः) मन्त्री या पार्षदगणों करके (यथोचितं) यथोचित जैसा होना चाहिये वैसा (सदा) सर्वदा (निषेव्यमाणं) निश्चय करके आप सेवा करने योग्य हैं ऐसे (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथजीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) संतोष प्राप्त कराऊँगा ॥ ४६ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! ब्रह्मादिक के परार्ध काल को भी आप क्षणमात्र कालका जो अणुमात्र काल है उसके समान व्यतीत करते हैं ।

१ ३
अपूर्वनानारसभावनिर्भरप्रबुद्धया मुग्धविदग्ध-
२ ५
लीलया । क्षणाणुवत्क्षिप्तपरादिकालया प्रहर्ष-
४ ६
यन्तं महिषीं महाभुजम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (अपूर्व नानारसभावनिर्भरप्रबुद्धया) अपूर्व नित्य नये नये जो अनेक प्रकार के शृङ्गार आदिक रस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा अंगुलि कटाक्षपात आदिक भाव या हस्त स्पर्श कपोल स्पर्श विलास आदिक इन सभीसे परिपूर्ण होने से विकसित प्रकाश गोचर और (क्षणाणुवत्क्षिप्तपरादिकालया) क्षणमात्र काल का ही जो अणुमात्र काल है उसके समान बिताया है ब्रह्मादिक देवताओं का परार्ध रूप काल जिसने ऐसी जो (मुग्धविदग्ध-लीलया) ब्रह्मा शिव इन्द्र नारद आदिक ज्ञानियों को मोहित करनेवाली आपकी लीला अथवा अत्यन्त सुन्दर निपुण प्रियाजी के मस्तक के भूषण रूप कुवलय नामक मूल कर्णभूषण, अलका-वली, तथा नीवी इन सबों के संघर्ष और विहार समय में बिम्बोष्ठ चुम्बन आदिक लीला से (महिषीं) अपनी कृताभिषेका अर्धाङ्गिनी श्रीदेवी को (प्रहर्षयन्तं) अति प्रसन्न करनेवाले और (महाभुजं) आजानुभुजावाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथ जीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा। भगवान् शृङ्गारादिक रस में भी अत्यन्त निपुण हैं। यह श्रीमद्भागवत के दशमस्कन्ध पूर्वार्ध के उन्तीसवें, तीसवें, एकतीसवें, बत्तीसवें, तैंतीसवें अध्याय में स्पष्ट लिखा हुआ है ॥ ४७ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! आपत्ति से उद्धार करनेवाले तथा मनोभिलषित पदार्थों को देनेवाले आप ही हैं।

१ २
अचिन्त्यदिव्याद्भुतनित्ययौवनं स्वभावलाव-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ण्यमयामृतोदधिम् । श्रियः श्रियं भक्तजनैक-
जीवितं समर्थमापत्सखमर्थिकल्पकम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—हे भगवन् ! (अचिन्त्यदिव्याद्भुतनित्ययौवनं) मन से भी इयत्तया नहीं चिन्तन करने योग्य । क्योंकि तैत्तिरीयोपनिषद् में लिखा है कि ॥ *यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह* ॥ तैत्ति० । वल्ली० । अनुवा० ४ ॥ मन के साथ वाणी श्रीमन्नारायण को न पाकर जहाँ से लौट आती है ॥ ४ ॥ और मुण्डकोपनिषद् में भी लिखा है कि ॥ *तद्दिव्यमचिन्त्यरूपम्* ॥ मुण्ड० । ३ खं० ॥ १ ॥ मं० ७ ॥ श्रीमन्नारायण का रूप दिव्य और अचिन्त्य है ॥ ७ ॥ अर्थात् जिनका परिच्छेद करके चिन्तन भी न हो सके और दिव्य आश्चर्य्ययुक्त नित्य युवावस्था वाले । नित्य का लक्षण लिखा है कि ॥ *ध्वंस भिन्नत्वे सतिध्वंसाभावाप्रतियोगित्वं नित्यत्वम्* ॥ ध्वंस से भिन्न हो और ध्वंस के अभाव का प्रतियोगिन हो तो उसको नित्य कहते हैं ॥ और (स्वभावलावण्यमयामृतोदधिम्) स्वभाव से ही सुन्दरता रूप अमृत के समुद्र स्वरूपवाले और (श्रियः) लक्ष्मी देवी की (श्रियं) शोभा करनेवाले और (भक्त-जनैकजीवितम्) प्रह्लाद, अम्बरीप, शौनक, भीष्माचार्य आदिक भक्तों के मुख्य प्राण स्वरूप और (समर्थ) सर्वथा सब कुछ करने में समर्थ तथा (आपत्सखं) युधिष्ठिरादिक पाण्डवों की तथा द्रौपदी की तथा अहिल्या की तथा श्री गजेन्द्र की और सुग्रीव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदिक की आपत्ति में सखारूप सहायता करनेवाले और (अर्थि कल्पकम्) ध्रुव, सुदामा, व्रजवनिता, कश्यप, अदिति आदिक याचकों के मनोरथ पूर्ण करने के लिये कल्पवृक्ष स्वरूप आप हैं ऐसे गुणवाले (भवन्तं) आपकी (अनुचरन्) सेवा करता हुआ (अहं) मैं (सनाथ जीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा। इस श्लोक से यह सिद्ध होता है कि स्त्री, पुत्र, पति, राज्य, अन्न, धन, इत्यादि भोगों को भी श्रीमन्नारायण ही देते हैं। इस बात को श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा है कि॥ *लभते च ततः कामान्मयैव विहितान् हितान्* ॥ गी०। अ०७॥ श्लो०२२॥ मेरे द्वारा ही विधान किये हुए सम्पूर्ण अपनी कामनाओं को वह पुरुष प्राप्त करता है ॥ २२ ॥ इससे यदि सकाम भी उपासना करना हो तो श्रीपति ही की करनी चाहिये अन्य की नहीं क्योंकि महाभारत के अनुशासन पर्व के विष्णु सहस्र नाम स्तोत्र में लिखा है कि॥ *एष निष्कंटकः पन्था यत्र सम्पूज्यते हरिः। कुपथं तं विजानीयाद्-गोविन्दरहितागमम्* ॥ ३० ॥ यह बिना कांटे के स्वच्छ मार्ग है जहां पर श्रीमन्नारायण की पूजा होती है। गोविन्द से रहित आगम को भी कुमार्ग ही समझना चाहिये ॥ ३० ॥ और पांडव गीता में यह भी लिखा है कि॥ *वासुदेवं परित्यज्य येऽन्यं देवमुपासते। तृषिता जान्हवी तीरे कूपं वाञ्छन्ति दुर्भगाः* ॥ पां०। गी०। श्लो० १७॥ वासुदेव भगवान् को छोड़ कर जो लोग अन्य देवता की उपासना करते हैं वे दुर्भागी अज्ञानी जैसे गङ्गा के तीर पर प्यासा कोई अज्ञानी कूप की इच्छा करे उसके समान हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ १७ ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि केवल श्रीमन्नारायण भगवान् की पूजा करनी चाहिये ॥ ४८ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि भगवन्! आपके नित कैंकर्य को मैं अब कब प्राप्त करूँगा।

२ ३ ४ १ ५
भवन्तमेवानुचरन्निरन्तरं प्रशान्तनिःशेषमनो-
९ ७ ६
रथान्तरः । कदाहमैकान्तिकनित्यकिङ्करः
१० ८
प्रहर्षयिष्यामि सनाथजीवितम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—हे भगवन्! (निरन्तरं) सर्वदा हमेशा (भवन्तं) उक्त विशेषण विशिष्ट आपकी (एव) ही निश्चय करके (अनुचरन्) सेवा करते हुए और (प्रशान्त निःशेष मनोरथान्तरः) अत्यन्त शान्त हो गये हैं नाना प्रकार के संपूर्ण मनोरथ जिसके ऐसे (ऐकान्तिक नित्य किङ्करः) ऐकान्तिक नित्य कैंकर्य परायण (अहं) मैं (सनाथ जीवितं) अपने स्वामी सहित जीवन को (कदा) कब (प्रहर्षयिष्यामि) सन्तोष प्राप्त कराऊँगा, अर्थात् आपके नित्य कैंकर्य को मैं कब प्राप्त करूँगा। इससे यह सिद्ध हुआ है कि भगवान् की दासता ही हम सबों को माँगनी चाहिये क्योंकि पाण्डव गीता में लिखा है कि ॥ पुरुषोत्तम देहि दास्यम् ॥ पां० । गी० श्लो० २६ ॥ हे पुरुषों में उत्तम पुरुष! मेरे लिये अपनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दासता को दीजिये ॥ २६ ॥ और भी लिखा है कि ॥ अहं तु *नारायणदासदासदासस्य दासस्य च दासदासः* ॥ पां० गी० ॥ श्लो० ॥ २० ॥ मैं श्रीमन्नारायण भगवान् के दासों के दास का दास के दास का दास का अन्तिम दास हूँ ॥ २० ॥ और वाल्मीकि रामायण के सुन्दर कांड में भी लिखा है कि ॥ दासोऽहं *कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः* ॥ वाल्मी० रामा० सुन्द० सर्ग० ॥ ४३ ॥ श्लो० ६ ॥ शुद्ध कर्म करनेवाले कोसलेन्द्र श्रीरामचन्द्र का मैं दास हूँ ॥ ६ ॥ इन प्रमाणों से यह ज्ञात होता है कि यह चेतन श्रीमन्नारायण भगवान् का दास है ॥ ४६ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी अपने में नीचत्वानुन्धान करते हुए कहते हैं कि हे भगवन् ! ब्रह्मा रुद्र आदि योगियों के ध्यान में भी न आने वाला जो आपका कैंकर्य है उसको मैं चाहता हूँ इससे मुझको धिक्कार है ।

१७ १२ १३ १४ १६ १५ १

धिगशुचिमविनीतं निर्दयं मामलज्जं परम-

९ १० २ ३

पुरुष योऽहं योगिवर्याग्रगण्यैः । विधिशिव

४ ५ ६ ७

सनकाद्यैर्ध्यातुमत्यन्तदूरं तव परिजनभावं

११ ८

कामये कामवृत्तः ॥ ५० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे (परमपुरुष) ऐ पुरुषों में श्रेष्ठ पुरुषोत्तम ! (योगिवर्याग्रगण्यैः) यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि इन अष्टाङ्ग योग के करने वाले सबसे श्रेष्ठ योगियों में आगे गिने जानेवाले । योगी सबसे श्रेष्ठ हैं यह भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा है कि ॥ *तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः । कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगीभवार्जुन* ॥ गी० । अ० ६ । श्लो० ४६ ॥ केवल चान्द्रायणादिक तपस्याओं के करनेवालों से योगी श्रेष्ठ हैं, और आत्मज्ञान व्यतिरिक्त ज्ञान वालों से योगी श्रेष्ठ हैं और अश्वमेध आदिक कर्म करने वालों से भी योगी श्रेष्ठ हैं यह मेरा मत है इससे ऐ अर्जुन ! तुम भी योगी हो जा ॥ ४६ ॥ इस प्रकार के योगियों में अग्रगणनीय जो (विधिशिवसनकाद्यैः) ब्रह्मा रुद्र सनक सनन्दन सनत्कुमार इन्द्र यम वरुण कुवेर आदिक हैं इन लोगों के भी (ध्यातुं) ध्यान के लिये, ध्यान का लक्षण पातञ्जल योग दर्शन में लिखा है कि ॥ *तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्* ॥ यो० । पा० ३ । सू० २ ॥ धारणा में बुद्धि और चित्त का एकाग्र हो जाने को ध्यान कहते हैं ॥ २ ॥ अथवा शब्दरत्न में लिखा है कि ॥ *ध्यानं चिन्तापरपर्यायम्* । ध्यान चिन्ता ही का दूसरा पर्याय वाचक शब्द है । (अत्यन्त दूरं) अत्यन्त दूर, अर्थात् चिन्तन में भी ब्रह्मादिक देवताओं के न आने वाला जो (तव) आपका (परिजनभावं) नित्य कैंकर्य को (काम वृत्तः) स्वेच्छाचारी (यः) जो (अहं) मैं (कामये) कामना करने वाला हूँ अर्थात् इच्छा करता हूँ । इससे (अशुचिं) स्पर्श नहीं करने योग्य अत्यन्त अपवित्र तथा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(अविनीतं) नम्रता से रहित उद्धत तथा (निर्दयं) दयाहीन, दया के लक्षण शाण्डिल्योपनिषद् में लिखा है कि ।। *दया नाम सर्वभूतेषु सर्वत्रानुग्रहः* ।। शां० । मं० १ ।। सर्वत्र सब जीवों पर अनुग्रह करना इसको दया कहते हैं ।। १ ।। इस दया से रहित और (अलज्जं) निर्लज्ज, लज्जा के भी लक्षण शांडिल्योपनिषद् में लिखा है कि ।। *लज्जा नाम वैदिकलौकिकमार्गकुत्सितकर्मणि ह्रीः* ।। शां० मं० २ ।। वैदिक और लौकिक मार्ग से जो निन्दित कर्म उसमें संकोच करना इसको लज्जा कहते हैं ।। २ ।। इस लज्जा से रहित जो मैं हूं ऐसे (मां) मेरे को (धिक्) धिक्कार है । इस श्लोक का भाव यह है कि जो नित्य कैंकर्य ब्रह्मादिक देवों के चिन्तन में नहीं आता है उसको मैं चाहता हूँ । अहो बड़े आश्चर्य की बात है इससे मुझको धिक्कार है ।। ५० ।।

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! आपको छोड़कर नहीं है दूसरी गति जिसकी ऐसा और अनन्त अपराध करने वाला भवसागर में अनन्त जन्मों से पतित यह जो अकिंचन आपका जन है इसको आप अपने अधीन कर लीजिये ।

२ ४ ३

अपराधसहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरे ।

५ ६ १ ८ ७ ९

अगतिं शरणागतं हरे कृपया केवलमात्म-

१०

सात्कुरु ।। ५१ ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे (हरे) ऐ आश्रितों के पाप हरण करनेवाले श्रीमन्नारायण देव! पापों के हरण करने से श्रीमन्नारायण का हरि नाम है। पाण्डव गीता में लिखा है कि॥ *हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः। अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥* पां०॥ गी०॥ श्लो० ६५॥ बिना मन के दुष्ट चित्त से भी चिन्तन किये हुए हरि पापों को हरण कर लेते हैं जैसे बिना इच्छा के भी अग्नि से सम्पर्क होने से अग्नि जलाता ही है ॥ ६५॥ और श्रीपराशर ऋषिजीने कहा है कि॥ *सकृदुच्चरितं येन हरिरित्यक्षरद्वयम्! बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति॥* पां० गी० श्लो० ६६॥ हरिः ऐसा यह दो अक्षर एक बार भी जो उच्चारण करता है वह मोक्ष प्राप्ति के लिये परिकर बाँधता है ॥ ६६॥ इसी आशय से श्रीपूज्यपादने हरे यह पद कहा है (अपराध सहस्रभाजनं) हजारों अपराधों का स्थानभूत मैं पात्र हूँ, यह वेदनिषिद्धानुष्ठानात्मक अपराध चार प्रकार के श्रीवचनभूषण में लोकाचार्य स्वामीजी ने कहा है कि॥ *निषिद्धानुष्ठानं चतुर्विधम्॥* श्रीवच०॥ सू०॥ ३१६॥ वेद में जो निषिद्ध हैं उसके अनुष्ठानात्मक अपराध चार प्रकार के हैं ॥ ३१६॥ *तच्चाकृत्यकरणं भगवदपचारो भागवतापचारोऽसह्यापचारश्च* ॥ ३२०॥ पहला, नहीं करने योग्य को करना यह अपराध है। दूसरा, भगवदपचार तीसरा भागवतापचार, चौथा असह्यापचार ॥ ३२०॥ *अकृत्यकरणं नाम परहिंसा परस्तोत्रं परदारपरिग्रहः परद्रव्यापहारोऽसत्यकथनमभक्ष्यभक्षणमेतत्प्रभृतिः* ॥ ३२१॥ अकृत्यकरण अपचार इसको कहते हैं कि मन वाणी देह से दूसरे को दुःख देना तथा दूसरों की स्तुति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करना तथा दूसरे की स्त्री को हरण करना तथा दूसरे के द्रव्य की चोरी करना तथा असत्य बोलना और मद्य मांस लहसुन प्याज गजरा मसूर मल मूत्र आदिक अभक्ष्य पदार्थों का भोजन करना इत्यादि हैं ॥ ३२१ ॥ *भगवदपचारो नाम देवतान्तरैस्तुल्यतयेश्वरस्य-चिन्तनं रामकृष्णाद्यवतारेषु मनुष्यसजातीयत्वबुद्धिः वर्णाश्रमविरीतो-पचारः अर्चावतारउपादाननिरुपणम् आत्मापहारः भगवद्द्रव्यापहार एतत्प्रभृतिः ॥ ३२२ ॥ भगवद्द्रव्यस्य स्वयमपहारोऽपहर्तृणां सहकारित्वं तेभ्यो याचितमयाचितं वा परिग्रहश्च भगवतोऽनिष्टः ॥ ३२३ ॥* भगवदपचार इसको कहते हैं कि अन्य ब्रह्मा रुद्र आदिक देवताओं के तुल्य ईश्वर का चिन्तन करना तथा राम कृष्ण आदिक अवतारों में मनुष्य के समान जाति समझना तथा वर्ण और आश्रम से विरुद्ध आचरण करना तथा अर्चावतार के उपादान का निरूपण करना अर्थात् यह मूर्ति पत्थर है, काष्ट है, लोहा, पीतल, ताँबा, चाँदी, सोना, मणि या मिट्टी है इत्यादिक कहना, तथा मूर्ति को चुराना, और भगवान् के द्रव्य को ले लेना, तथा श्रीमन्नारायण की प्रतिमा को साष्टाङ्ग न करना, तथा मूर्ति के सामने पैर फैलाना, आसन पर बैठना, अधोवायु विमोक्षण करना इत्यादि हैं ॥ ३२२ ॥ और भगवान् के द्रव्य को स्वयं चुराना या चुरानेवाले का साथ देना, माँग कर या बिना माँगे हुए कुछ उन सबों से ले लेना ये सब भगवत् के अनिष्ट हैं, अर्थात् ये सब भगवदपचार हैं ॥ ३२३ ॥ *भागवतापचारो नामा-हङ्कारार्थ कामहेतुना श्रीवैष्णवेषु क्रियमाणो विरोधः* ॥ ३२४ ॥ भागवतापचार इसको कहते हैं कि अहंकार से अर्थ और काम के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिये श्री वैष्णवों में विरोध करना ॥ ३२४ ॥ *भागवतापचारोऽनेक विधः ॥ श्रीवच० सू० ॥ २१० ॥ तत्रैकं तेषु जन्मनिरूपणम् ॥ २११ ॥ इदं चार्चावतारे उपादान स्मृतेरपिक्रूरम् ॥ २१२ ॥ तन्मातृयोनि परीक्षया सममिति शास्त्रं वदति ॥ २१३ ॥ त्रिशङ्कुवत्कर्म-चाण्डालो भवेत् वक्षसि यज्ञोपवीतमेव चर्मरज्जु र्भवेत् ॥ २१४ ॥ जाति चाण्डालस्य कालान्तरे भागवतो भवितुं योग्यतास्ति सापि नास्त्यस्य आरूढ़ पतितत्वात् ॥ २१५ ॥* भागवतापचार अनेक प्रकार का होता है ॥ २१० ॥ उन सम्पूर्ण अपराधों में यह एक प्रधान अपराध है कि श्री वैष्णवों का जन्म निरूपण करना ॥ २११ ॥ यह अपराध अर्चावतार के उपादान स्मरण से भी अत्यन्त क्रूर है ॥ २१२ ॥ महाभागवतों के जन्म निरूपण करना अपनी माता के योनि की परीक्षा के समान है ऐसा शास्त्र कहता है ॥ २१३ ॥ भागवतों के जन्म निरूपण करनेवाला त्रिशंकु के समान कर्मचाण्डाल हो जाता है और उसके वक्षस्थल का यज्ञो-पवीत ही चाम की रस्सी के समान हो जाता है ॥ २१४ ॥ चाण्डाल जाति को दूसरे काल में भागवत होने की योग्यता है परन्तु श्रीवैष्णव के जन्म निरूपण करनेवालों को कभी भी भागवत होने की योग्यता नही क्योंकि वह आरूढ़ पतित है ॥ २१५ ॥ और असह्यापचार भी वहाँ ही लिखा है कि ॥ *असह्यापचारो नाम निर्निबन्धनं भगवद्भागवत विषय इत्युक्तावसहमान-तया स्थितिः आचार्यापचारः तद्भक्तापचारश्च ॥* श्रीवच० सू० ३२५ ॥ *एत एकस्मादेकः क्रूरः उपाय विरोधिनः उपेय विरोधिनश्च ॥ ३२६ ॥* असह्यापचार इसको कहते हैं कि बिना कारण के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवत एवं भागवतों की वार्ता को न सहन करना और आचार्य तथा भगवत भागवत आचार्य के भक्तों के किये हुए पाप को कहना या अनुसन्धान करना ॥ ३२५ ॥ ये जो अपचार मैंने कहा है इसमें एक से एक क्रूर हैं, और उपाय तथा उपेय के विरोधी हैं ॥ ३२६ ॥ ये अपराध शाखा प्रशाखा भेद से हजारों प्रकार के हैं परन्तु ग्रन्थ विस्तार के भय से अधिक मैं नहीं लिखता हूँ। इन अनेक अपराधों का स्थान भूत (भीमभवार्णवोदरे) भयङ्कर संसार रूप समुद्र के पेट में (पतितं) गिरा हुआ (अगतिं) अनन्यगतिक अर्थात् आपके बिना जिसकी अन्य कोई गति नहीं ऐसा (शरणागतं) शरण में आपकी आया हुआ जो मैं हूँ ऐसे मुझको (केवलं) निर्हेतुक (कृपया) कृपा करके (आत्मसात्) अपने अधीन (कुरु) कीजिये क्योंकि श्रीमद्भागवद्गीता में अर्जुन के प्रति आपने कहा है कि ॥ *अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि* ॥ गी० ॥ अ० १८ ॥ श्लो० ६६ ॥ मैं तुमको सम्पूर्ण पापों से मुक्ति दूँगा ॥ ६६ ॥ तो इसको याद करके इस शरणागत को अपना लीजिये ॥ अपराध सहस्र० ॥ इस श्लोक को कहते हुए भगवत् भागवत आचार्य की सन्निधि में दाहिने से लाठी के समान भूतल पर पड़ कर साष्टाङ्ग प्रणाम करना चाहिये ॥ ५१ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! सत्य वैदिक मार्ग से पतित मुझे आप कृपा कटाक्ष से अवलोकन कीजिये ।

२ ४ ५

अविवेकघनान्धदिङ्मुखे बहुधा संततदुःख-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ ६ ७ ८
वर्षिणि। भगवन् भवदुर्दिने पथः स्खलितं
९ १० २
मामवलोकयाच्युत ॥ ८२ ॥

अर्थ—हे (भगवन्!) ऐ संपूर्ण जीवों की उत्पत्ति प्रलय अगति गति एवं विद्या और अविद्या को जाननेवाले षड़ैश्वर्य संपन्न भगवन्? (अच्युत) ऐ भूत, भविष्य, वर्तमान इन तीनों कालों में कभी भी न च्युत होने वाले और संसार रूप रोग को शमन करनेवाले औषध रूप हे अच्युत! श्रीमन्नारायण का ही नाम अच्युत है वे संपूर्ण संसार के रोगों का नाश करनेवाले हैं। यह वैद्यराज धन्वन्तरि ने कहा है कि॥ *अच्युतानन्त गोविन्द-नामोच्चारणभेषजात्। नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥* पां० गी० श्लो०॥ ६६॥ अच्युत अनन्त गोविन्द इन नामों के उच्चारण रूप औषध से समस्त संसार के रोग नष्ट हो जाते हैं; यह मैं सत्य कहता हूँ॥ ६६॥ हे अच्युत श्रीमन्नारायण देव! (अविवेकघनान्धदिङ्मुखे) सदसद् विचार के अभाव होने से उत्पन्न जो अज्ञानरूप मेघ उससे अन्ध अर्थात् ढक गये हैं पूरव, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ईशान, अग्नि, निर्ऋति, वायु, ऊपर, नीचे, ये दिशारूप मुख जिसके ऐसे, (बहुधा) बहुत प्रकार के (संततदुःखवर्षिणि) निरन्तर, हमेशा दुःख की वर्षा करनेवाले (भवदुर्दिने) संसाररूप जो दुर्दिन उसके विषय (पथः) श्रीशठकोपाचार्य प्रभृति से स्वीकृत जो वैदिक सन्मार्ग है उससे। पथ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसको कहते हैं यह लिखा है कि ॥ *महाजनो येन गतः स पन्थाः* ॥ महान् पुरुष जिस मार्ग से चलते हैं वही पथ है। उस सत्य मार्ग से (स्खलितं) पतित (मां) अनन्य गतिक मुझको (अवलोकय) आप अवलोकन करें अर्थात् निर्हेतुक दया की दृष्टि से देखें ॥ ५२ ॥

अब यामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि हे भगवन् ! यह मैं सत्य कहता हूँ कि जो आप मेरी रक्षा नहीं करेंगे तो आपको मेरे जैसा दूसरा कोई रक्षा के योग्य नहीं मिलेगा। वस्तुतः मेरे जैसे की रक्षा करके ही आप दयालु कहे जा सकते हैं।

५ ४ २ ३ ७ १० ९ ८ ६

न मृषा परमार्थमेव मे शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।

११ १२ १३ १४ १५ १७ १६ १

यदि मे न दयिष्यसे ततो दयनीयस्तव नाथ

१८

दुर्लभः ॥ ५३ ॥

अर्थ—हे (नाथ) हे अण्डज पिण्डज उष्मज स्थावर संपूर्ण चराचर के स्वामिन् ! (परमार्थमेव) मैं सत्य ही प्रार्थना करता हूँ (मृषा) झूठा (न) नहीं है (अग्रतः) इससे अब पहले (मे) मेरा (एकं) एक या प्रधान या साधारण। मनोरमा में लिखा है कि ॥ *एकोऽन्यार्थे प्रधाने च प्रथमे केवले तथा साधारणे समानेऽल्पे संख्यायाञ्च प्रयुज्यते* ॥ अन्यार्थ, प्रधान, प्रथम, केवल,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साधारण, समान, अल्प, और संख्या, में एक शब्द का प्रयोग किया जाता है ॥ सो एक (विज्ञापनं) प्रार्थना (शृणु) सुन लीजिये हे श्रीमन्नारायण देव! (यदि) जो (मे) मेरे ऊपर आप (न) नहीं (दयिष्यसे) दया करेंगे (ततः) तो फिर (तव) आपके (दयनीयः) दया करने योग्य पात्र (दुर्लभः) दुर्लभ है, अर्थात् मेरे जैसा दयनीय नहीं मिलेगा इससे अवश्य मेरे ऊपर आप दया कीजिये ॥ ५३ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! मेरी रक्षा अवश्य आपको करनी पड़ेगी अतः मुझको परित्याग मत कीजिये ।

२ ३ ४ ५ ७ ६ १० ९ ११ १२

तदहं त्वदृते न नाथवान्मदृते त्वं दयनीयवान्न

८ १४ १३ १५ १ १६

च । विधिनिर्मितमेतदन्वयं भगवन्? पालय

१७

मास्मजीहपः ॥ ५४ ॥

अर्थ—हे (भगवन्) ऐ षड़ैश्वर्य संपन्न श्रीमन्नारायण देव! (तत्) इसलिये (अहं) मैं आपका दास हूं क्योंकि श्रुति कहती है कि जीव ब्रह्म के दास हैं। इसी से वाल्मीकि रामायण के सुन्दर काण्ड में श्रीहनुमान्जी ने कहा है कि ॥ दासोहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्ट कर्मणः ॥ वा० रा० सु० स० ४२ श्लो० ९ ॥ कोसलेन्द्र शुभकर्म करनेवाले रामचन्द्र भगवान् का मैं दास हूँ

११

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ ६ ॥ इससे सिद्ध होता है कि जीव भगवान् का दास है । इससे विरुद्ध जो लोग मैं ईश्वर हूँ ऐसा कहते हैं उन लोगों को भगवद् गीता में श्रीकृष्ण भगवान्ने कहा है कि ॥ *ईश्वरोऽहमहंभोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी* ॥ गी० अ० १६ ॥ श्लो० १४ ॥ आसुर लोग अपने को कहते हैं कि मैं ईश्वर हूँ मैं भोगी हूँ मैं सिद्ध हूँ मैं बलवान् हूँ और मैं सुखी हूँ ॥ १४ ॥ इससे स्पष्ट विदित होता है कि आसुर लोग अपने को ईश्वर कहते हैं । हे श्रीमन्नारायण ! (त्वदृते) आपके विना मैं (नाथवान्) स्वामीवाला (न) नहीं, अर्थात् आपसे दूसरा कोई मेरा स्वामी नहीं है (च) और (त्वं) आपको भी (मदृते) मेरे विना (दयनीयवान्) दया करने योग्य पात्र (न) नहीं, अर्थात् हमसे दूसरा कोई आपको दया करने योग्य पात्र नहीं है इस कारण से हे भगवन् ! (एतत्) यह (विधिनिर्मितं) विधान से बनाया हुआ अथवा ब्रह्मा स्वरूपधारी आपका बनाया हुआ । श्रीमन्नारायण ही ब्रह्मा है यह भगवद्गीता में लिखा है कि ॥ *प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च* ॥ गी० अ० ११ ॥ श्लो० ३९ ॥ आप ही प्रजापति ब्रह्मा हैं और प्रपितामह भी हैं ॥ ३९ ॥ अथवा ब्रह्मादिक के अन्तर्यामी आपका बनाया हुआ (अन्वयं) संबन्ध है, अर्थात् आप शेषी अंशी और मेरे स्वामी हैं और मैं आपका शेष अंश और भृत्य हूँ ऐसे उस अनादि काल से आनेवाले संबन्ध की (पालय) आप रक्षा कीजिये (मास्मजीहपः) त्याग मत कीजिये ॥ ५४ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! आपके चरणकमलों में मैंने आज ही आत्मा का समर्पण कर दिया हूँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२ ३ ४ ५ १ ८ ६
वपुरादिषु योपि कोपि वा गुणतोऽसानि यथा
७ ९ १० ११ १२ १४ १५ १६
तथाविधः। तदहं तव पादपद्मयोरहमद्यैव
१३ १७
मया समर्पितः॥ ५५॥

अर्थ—हे स्वामिन्! (गुणतः) सत्वगुण रजोगुण तमोगुण इन तीन गुणों से, तीन ही गुण होते हैं यह श्वेताश्वतरोपनिषद् में लिखा है कि॥ *लोहित शुक्ल कृष्णां॥* श्वे० अ० ४॥ मं० ५॥ रजोगुण सत्वगुण तमोगुण ये तीन गुण हैं। यह भगवद्गीता में भी लिखा है कि॥ *त्रैगुण्य विषया वेदाः॥* गी० अ० २॥ श्लो० ४५॥ त्रिगुणात्मक विषयकवेद है॥ ४५॥ इससे यह सिद्ध होता है कि तीन गुण हैं इन सत्व आदि गुणों के वश से (वपुरादिषु) देह आदिक के विषय में, देह किसको कहते हैं यह भगवद्गीता में लिखा है कि॥ *महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च। इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्चेन्द्रिय गोचराः॥* गी० अ० १३ श्लो० ५॥ *इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः। एतत्क्षेत्रं समासेन सविकार-मुदाहृतम्॥ ६॥* पृथिवी जल तेज वायु आकाश अहंकार बुद्धि और मूल प्रकृति तथा कान, नाक जिह्वा, आंख, त्वचा, ये पांच ज्ञान इन्द्रिय और हाथ पैर लिङ्ग पायु वाक् ये पांच कर्म इन्द्रिय और एक मन तथा शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध ये पांच इन्द्रियों के विषय हैं॥ ५॥ और इच्छा द्वेष सुख दुःख संघात शरीर चेतना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धैर्य्य इन सबों को विकार के साथ देह संक्षेप से कहा गया है ॥ ६ ॥ अर्थात् शरीर इन्द्रिय मन बुद्धि और शरीर में जो षट् चक्र आदिक है उनके विषय में "योग चूड़ामण्युपनिषद्" में लिखा है कि ॥ *षट्चक्रं षोडशाधारं त्रिलक्ष्यं व्योमपञ्चकम् । स्वदेहे यो न जानाति तस्य सिद्धिः कथं भवेत् ॥* यो० चू० मं० ३ ॥ मूलाधार चक्र स्वाधिष्ठान चक्र मणिपूरक चक्र अनाहत चक्र विशुद्ध चक्र आज्ञा चक्र इन छै चक्रों को और पहला आधार पैर का अंगूठा, दूसरा आधार मूलाधार, तीसरा गुह्याधार, चौथा विन्दुआधार, पांचवाँ आधार उड्डीयानबंध, छठवां आधार नाभिमण्डल, सातवां आधार हृदय, आठवां आधार कण्ठ, नौवां आधार छुद्रघण्टिका, दशवां आधार जिह्वा का मूल, ग्यारहवां आधार जिह्वा अधोभाग, बारहवां आधार ऊर्ध्वदन्त, तेरहवां आधार नाक का अग्रभाग, चौदहवां आधार नासिका मूल, पन्द्रहवां आधार भ्रूमध्य, और सोलहवां आधार नेत्र, है। इन सोलह आधारों को और तीन लक्ष्यों को तथा पृथिवी जल तेज वायु आकाश इन पांचो तत्वों को जो अपने देह में नहीं जानता है उसको भगवत्प्राप्ति नहीं होती है ॥ ३ ॥ और शरीर में जो नाड़ी महाचक्र है उसके विषय में, लिखा है कि ॥ *इड़ा च पिङ्गलाचैव सुषुम्ना च तृतीयगा गान्धारी हस्तिजिह्वाच पूषाचैव यशस्विनी ॥* यो० चू० मं० १६ ॥ *अलम्बुषा कुहूश्चैव शङ्खिनी दशमी स्मृता एतन्नाडी महाचक्रं ज्ञातव्यं योगिभि सदा ॥ १७ ॥ इड़ा पिङ्गला सुषुम्ना गान्धारी हस्तिजिह्वा पूषा यशस्विनी ॥ १६ ॥* अलम्बुषा कुहू शङ्खिनी ये दश मुख्य नाड़ियों के नाम हैं। यह नाड़ी महाचक्र योगियों को सदा जानना चाहिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ १७ ॥ और शरीर में जो दश वायु है उसके विषय में, योगचूड़ामण्युपनिषद् में लिखा है कि ॥ *प्राणापानसमानाव्यानोदानौच वायवः । नागः कूर्मोऽथक्ककरो देवदत्तो धनञ्जयम् ॥* यो० चू० मं० २२ ॥ प्राण अपान समान उदान व्यान नाग कूर्म क्कर देवदत्त धनञ्जय ये दश वायु शरीर में हैं ॥ २२ ॥ इन संपूर्ण शरीर आदिक विषय में (योऽपि) जो (कोपि) कुछ भी (वा) और अथवा (यथा) जिसी (तथाविधः) किसी प्रकार से कुछ भी (असानि) मैं होऊं (तत्) परन्तु (अहं) मैं तो (तव) आपके (पादपद्मयोः) दोनों चरणारविन्दों में (मया) अपने ही आप मैं (अहं) अपने आत्मा को (अद्य) आज ही (एव) निश्चय करके (समर्पितः) समर्पण कर दिया हूँ । इससे आपको जैसा उचित मालूम होता हो वैसा मेरे लिये कीजिये ॥ ५५ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के मालिक हैं तो सब वस्तु आपके अधीन है इससे अब क्या मैं आपको समर्पण करूँ क्योंकि देह और आत्मा यह भी तो आप ही का है ।

४ १ ३ ५ ६ ८ ७ ११ १० ९ १२ १३
मम नाथ यदस्ति योस्म्यहं सकलं तद्धि तवैव
२ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २०
माधव नियतः स्वमिति प्रबुद्धधीरथवा किन्नु
२२ २१
समर्पयामिते ॥ ५६ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे (नाथ) ऐ अण्डज पिण्डज ऊष्मज स्थावरात्मक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामिन् ! (माधव) हे लक्ष्मीपते श्रीमन्ना-रायण भगवन् ! (यत्) जो वस्तु (मम) मेरा (अस्ति) है और (यः) जो (अहं) मैं (अस्मि) हूँ (हि) निश्चय करके (तत्) वह (सकलं) सम्पूर्ण वस्तु (तव) आपकी (एव) ही है, क्योंकि बृहदारण्यकोपनिषद् के पाँचवें अध्याय के सातवें ब्राह्मण के तीसरे मन्त्र से प्रारम्भ करके तेइसवें मन्त्र पर्यन्त यह स्पष्ट लिखा है कि ।। जिस श्रीमन्नारायण भगवान् के पृथिवी जल तेज वायु आकाश आदित्य दिशा सम्पूर्ण जीव प्राण वाणी नेत्र कान मन त्वचा रेतस आदिक शरीर हैं और इन सबों के भीतर रहकर नियमन करता है परन्तु उन श्रीमन्नारायण को ये कोई भी नहीं जानते हैं ।। और भी शुक्ल यजुर्वेद में लिखा है कि ।। *पादोस्य विश्वाभूतानि* ।। यजु० ।। अ० ३१ ।। मं० ३ ।। श्रीमन्नारायण के एक पैर में यह समस्त संसार है ।। ३ ।। और भगवद्गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा है कि ।। *मम माया दुरत्यया* ।। गी० ।। अ० ७ ।। श्लो० १४ ।। मेरी माया दुःख से पार की जाती है ।। १४ ।। और ।। *ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः* ।। गी० ।। अ० १५ ।। श्लो० ७ ।। मेरा ही अंश जीवलोक में जीवात्मा है वह सनातन है ।। ७ ।। इससे यह सिद्ध हो गया कि समस्त चेतन या अचेतन भगवान् की वस्तु है। इससे (नियतः) निश्चय करके नियत (स्वं) शेषभूत (इति) ऐसा (प्रबुद्धधीः) प्रकटित ज्ञानवाला मैं (अथवा) अथवा (किन्तु) क्या वस्तु (ते) आपके लिये (समर्पयामि) समर्पण करूँ, अर्थात् जो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ वस्तु है सो तो आप ही की है तो मैं क्या समर्पण कर सकता हूँ ॥ ५६ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! निर्हेतुक कृपा कटाक्ष करके मुझे भक्ति दीजिये।

८ ४ ३ २ ५ ६
अवबोधितवानिमां यथा मयि नित्यां भवदीयतां
७ १० ९ ११ १
स्वयम् । कृपयैवमनन्यभोग्यतां भगवन् ?
१२ १३ १५ १४
भक्तिमपि प्रयच्छमे ॥ ५७ ॥

अर्थ—हे (भगवन्) हे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जीवों के उत्पत्ति प्रलय अगति गति और अविद्या तथा विद्या को जाननेवाले षड़ैश्वर्य सम्पन्न श्रीमन्नारायण देव! (मयि) आपके शेष भूत मुझ में (यथा) जिस प्रकार से (इमां) इस (नित्यां) नित्य सनातन (भवदीयतां) आपने अपनी शेषता का (स्वयं) आपने ही (अवबोधितवान्) ज्ञान दिया (एवं) इसी प्रकार से (कृपया) निर्हेतुक कृपा करके (अनन्यभोग्यतां) जिससे अन्य कुछ भी भोग्य नहीं है ऐसी (भक्ति) श्रवण कीर्तन स्मरण पादसेवन पूजन वन्दन दास्य सख्य आत्मनिवेदनरूप श्रीविष्णु भगवान् की नवधाभक्ति को (अपि) भी (मे) अकिंचन तथा अनन्य गतिक मुझको (प्रयच्छ) आप दीजिये। केवल भक्ति से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रभु की प्राप्ति होती है इसी से श्रीपूज्यपाद ने भगवद्भक्ति की याचना की है। श्रीभगवद्गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने भी कहा है कि॥ *पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ॥* गी० अ० ८ श्लो० २२॥ हे पार्थ अर्जुन! वह परमात्मा केवल अनन्या भक्ति से प्राप्त होता है॥ २२॥ इसी से पाण्डवगीता में लिखा है कि॥ *यदि गमनमधस्तात्कालपाशानुबद्धो यदि च कुलविहीने जायते पक्षि कीटे। कृमिशतमपि गत्वा जायते चान्तरात्मा मम भवतु हृदिस्थे केशवे भक्तिरेका ॥* पां० गी० श्लो० ८॥ कालरूप फाँस से बँधा हुआ मैं यदि पाताल लोक में जन्म लूँ अथवा नीच कुल पक्षि कीट आदि में जन्म लूँ या सैकड़ों प्रकार के कृमि योनि में जन्म लूँ परन्तु केशव भगवान् में केवल मेरी एक भक्ति बनी रहे॥ ८॥ और भी लिखा है कि॥ *स्वकर्म फल निर्दिष्टां यां यां योनिं व्रजाम्यहम्। तस्यां तस्यां हृषिकेश ? त्वयि भक्तिर्दृढाऽस्तुमे ॥* पां० गी० श्लो० १०॥ हे हृषिकेश भगवन्! अपने कर्मफल के अनुसार जिस जिस योनि में मैं जन्म लूँ उस उस योनि में मेरी दृढ़ भक्ति आप में ही बनी रहे॥ १०॥ और भी लिखा है कि॥ *कीटेषु पक्षिषु मृगेषु सरीसृपेषु रक्षः पिशाचमनुजेष्वपि यत्र यत्र। जातस्य मे भवतु केशव त्वत्प्रसादात्त्वय्येव भक्तिरचलाऽव्यभिचारिणी च ॥* पां० गी० श्लो० १२॥ हे केशव भगवन्! कीट, पक्षी, मृग, पशु, सरीसृप, राक्षस, पिशाच, या मनुष्य आदि जिस जिस योनि में मैं जन्म लूँ उस उस योनि में आपकी प्रसन्नता से अव्यभिचारिणी अचला भक्ति आपमें मेरी बनी रहे॥ १२॥ और भी लिखा है कि॥ *नाथ योनि सहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहं। तेषु*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि ॥ पां० गी० श्लो० ४१ ॥ हे सम्पूर्ण ब्रह्मांड के स्वामिन् ! कभी भी च्युत न होनेवाले अच्युत भगवन् ! जिन जिन हजारों योनियों में मैं जन्म लूँ उन उन योनियों में मेरी अचला भक्ति सर्वदा आप में बनी रहे ॥ ४१ ॥ और आल्वार श्रीकुलशेखर स्वामीजी ने भी कहा है कि ॥ *तृष्णा तोये मदनपवनोद्भूतमोहोर्मिमाले दारावर्तें तनयसहजग्राहसङ्घाकुले च । संसाराख्ये महति जलधौ मज्जतां नस्त्रिधामन् पादाम्भोजे वरद भवतो भक्ति नावं प्रयच्छ* ॥ मुकुन्दमा० श्लो० १८ ॥ हे आकाश पाताल मृत्युलोक में रहनेवाले तथा समस्त जीवों को वर को देनेवाले भगवन् ! जिसमें तृष्णा ही जल है और कामदेव हवा है तथा मोह रूपी लहरों का समूह है और स्त्री रूपी चकोह है तथा पुत्र भाई इत्यादिक परिवार रूपी मगरों का समूह है ऐसे संसार नामवाले बड़े भारी समुद्र में हम सब डूब रहे हैं आप अपने चरणारविन्द की भक्ति रूपी नौका को दीजिये जिस पर चढ़ कर हम सब संसार समुद्र को पार करें ॥ १८ ॥ और यतिराज फणिराज-अवतारप्रबल पाषण्डतमोहरणभानु श्रीभाष्यकार ने भी श्रीभाष्य के पहले श्लोक में कहा है कि ॥ *भवतु ममपरस्मिन् शेमुषी भक्ति रूपा* ॥ श्रीभा० श्लो० १ ॥ मेरी भक्तिरूपा बुद्धि अखिल ब्रह्मांड नायक परब्रह्म श्रीनिवास भगवान् में स्थित हो ॥ १ ॥ इससे यह सिद्ध होता है कि भागवत सब भगवान् की केवल भक्ति चाहते हैं जिस भक्ति के ज्ञान और वैराग्य ये दो पुत्र हैं । यह श्रीपद्मपुराण उत्तर खंड के श्रीमद्भागवत माहात्म्य के पहले अध्याय में स्पष्ट लिखा है कि ॥ *अहं भक्तिरितिख्याता इमौ मे तनयौ मतौ । ज्ञान वैराग्य नामानौ काल योगेन जर्जरौ* ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमद्भागवत माहा० । अ० १ । श्लो० ४५ ॥ मैं भक्ति हूँ और ये ज्ञान तथः वैराग्य नामवाले दो मेरे पुत्र हैं परन्तु समय के संयोग से ये दोनों ज्ञान वैराग्य वृद्ध हो गये हैं ॥ ४५ ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि भक्ति सबसे श्रेष्ठ है, अतएव भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा है कि ॥ *भक्त्या त्वनन्ययाशक्य अहमेवं विधोर्जुन । ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥* गी० । अ० ११ । श्लो० ५४ ॥ हे शत्रुओं को तपानेवाले अर्जुन ! अनन्या भक्ति के द्वारा यथार्थ रूप से मुझको जान सकता है तथा देख सकता है और प्राप्त कर सकता है ॥ ५४ ॥ भगवत् प्राप्ति केवल अनन्या भक्ति से होती है और भक्ति विमुख होने से दुर्वासा तथा जड़भरत तथा राजा नृग आदिक की दुर्दशा हुई है इस बातका उपदेश देने के लिये श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी श्रीमन्नारायण भगवान् से भक्ति की याचना करते हैं ॥ ५७ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! आपके दास महाभागवतों के श्रीगृह में कीट योनि में भी मेरा जन्म होना श्रेष्ठ है परन्तु आपकी भक्ति से रहित ब्रह्मा भी होना श्रेष्ठ नहीं है ।

१ २ ३ ७ ६ ५

तव दास्यसुखैकसङ्गिनां भवनेष्वस्त्वपि कीट-

४ ९ १३ ८ ११ १२

जन्म मे । इतरावसथेषु मास्मभूदपि मे जन्म

१०

चतुर्मुखात्मना ॥ ५८ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण भगवन् ! (तव) आपके (दास्य सुखैकसङ्गिनां) दासतारूप केवल एक सुख का अनुभव करनेवाले जो भक्तिनिष्ठ प्रपन्न पुरुष हैं उन परम भागवतों के (भवनेषु) श्रीगृहों में (मे) मेरा (कीटजन्म) अत्यन्त नीच कीट पिल्लू आदिक योनियों में जन्म होना (अपि) भी (अस्तु) श्रेष्ठ है, अर्थात् हे भगवन् यदि मैं कीट योनि में भी जन्म लूँ तो भी आपके परम भागवतों के गृह में (अपि) परन्तु (इतरावसथेषु) आपकी भक्तिहीन पुरुषों के गृहों में (चतुर्मुखात्मना) चारमुख वाले ब्रह्मा के स्वरूप करके भी (मे) मेरा (जन्म) जन्म (मास्मभूत्) मत होवे । अर्थात् भगवद्भक्ति रहित ब्रह्मा भी होना श्रेष्ठ नहीं है । इसीसे श्रीकुलशेखर स्वामीजी ने भी अपनी श्रीसूक्ति में कहा है कि हे भगवन् ! आपकी भक्तियुक्त मेरा जन्म तिर्यक् स्थावर योनि में भी श्रेष्ठ है । श्रीमन्नारायण भक्ति के वश रहते हैं यह श्रीवचनभूषण में स्पष्ट लिखा हुआ है कि ॥ *महाराजस्य स्वामी ब्रह्ममेधसंस्कारमकरोत्* ॥ श्रीव० सू० ॥ २४४ ॥ श्रीकृष्णो भीष्मद्रोणादीन् विहाय विदुरगृहे भुक्तवान् ॥ २४७ ॥ स्वामी शबरी हस्तेन भुक्तवान् ॥ २४८ ॥ श्रीस्वामी रामभद्र ने गृध्रराज जटायु के ब्रह्ममेध संस्कार को किया ॥ २४४ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् ने भीष्म द्रोण आदि को छोड़कर श्रीविदुर के गृह में भोजन किया ॥ २४७ ॥ श्रीस्वामी रामचन्द्रजी ने शबरी के हाथ से भोजन किया ॥ २४८ ॥ यह कथा वाल्मीकि रामायण और महाभारत में स्पष्ट लिखी हुई है । भगवद्भक्तिहीन पुरुष गदहे के तुल्य हैं यह लिखा है कि ॥ *भागवत तत्वरहितः केवलं वेदार्थ-*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्ञानादिमान् कुङ्कुमभारवहगर्दभवदिति वदतिहि ॥ श्रीवच० सू० २५१ ॥ भगवद्भक्तिहीन जो केवल वेदार्थ को जानने वाला है वह केशर के भार को ढोनेवाले गदहा के समान है ऐसा निश्चय करके शास्त्रकर्ता कहते हैं ॥ २५१ ॥ इन बातों का उपदेश देने के लिये श्रीपूज्यपादजीने कहा है कि भगवद्भक्तिनिष्ठ महाभागवतों के घर में अत्यन्त नीच कीट योनि में जन्म होना श्रेष्ठ है परन्तु भक्तिहीन ब्रह्मा होना श्रेष्ठ नहीं है ॥ ५८ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! परम भागवतों की कृपादृष्टि गोचर मुझको कीजिये क्योंकि श्रीमद्भागवत में शिवजी ने कहा है कि ॥ *स्वधर्मनिष्ठः शतजन्मभिः पुमान्विरिञ्चतामेति ततः परंहिमाम् । अव्याकृतंभागवतोहिवैष्णवं परं पदं यद्विबुधाः कलात्यये* ॥ भाग० ॥ स्कं० ४ ॥ अ० २४ ॥ श्लो० ३० ॥ अपने धर्म में निष्ठ पुरुष सौ जन्म करके ब्रह्मा के भाव को प्राप्त करता है इसके बाद निश्चय करके वह पुरुष मुझको प्राप्त करता है इसके बाद वह भागवत होता है और भागवत होकर विकार रहित श्रीविष्णु के परम पद को प्राप्त होता है जिस पद को कला के नाश होने पर देवता सब प्राप्त करते हैं ॥ ३० ॥ और भी वहां ही शिवजी कहे हैं कि ॥ *नमे भागवतानां च प्रेयानन्योऽस्तिकर्हिचित्* ॥ भा० स्कं० ४ ॥ अ० २४ ॥ श्लो० ३१ ॥ भागवत और भगवान् से अन्य कोई भी अतिशय प्रिय मुझ को नहीं है ॥ ३१ ॥ और भागवत का लक्षण लिखा है कि ॥ *पञ्च संस्कार संपन्ना आकारं त्रय संयुताः । अर्थ पंचक तत्व ज्ञास्तेवै भागवताः स्मृताः* ॥ ताप पुंड्र नाम मन्त्र याग इन पांच संस्कारों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से संपन्न और अनन्यार्हत्व अनन्यभोग्यत्व अनन्य शरणत्व रूप तीन आकार से युक्त तथा स्व स्वरूप पर स्वरूप पुरुषार्थ स्वरूप उपाय स्वरूप विरोधि स्वरूप इन पाँच अर्थ के तत्वों को जो जाननेवाले हों उनको निश्चय करके भागवत कहते हैं ।। ऐसे ऐसे महाभागवतों की कृपा कटाक्ष गोचर मुझको कीजिये ।

१ २
सकृत्त्वदाकारविलोकनाशया तृणीकृतानुत्तम-
३ ५ ४
भुक्तिमुक्तिभिः । महात्मभिर्मामवलोक्यतां
६ ८ १० ९ ७ ११
नय क्षणेपि ते यद्विरहोतिदुःसहः ।। ५९ ।।

अर्थ—हे श्री सन्नारायण भगवन् ! (सकृत्त्वदाकारविलोकनाशया) एक बार आपके दिव्य मङ्गल विग्रह को देखने की आशा से (तृणीकृतानुत्तम भुक्तिमुक्तिभिः) तृण के समान ठुकरा दिया है भगवद्भक्ति के सामने भोग और मोक्ष को जिन्होंने ऐसे (महात्मभिः) महात्मा परम भागवतों करके। महात्मा किसको कहते हैं यह श्रीमद्भगवद्गीता में लिखा है कि ।।

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ।। गी० अ० ७ श्लो० १९ ।।

प्राप्य और प्रापक यह सब वासुदेव भगवान् हैं ऐसा जिनको निश्चय हो गया है उनको महात्मा कहते हैं वे अत्यन्त दुर्लभ हैं ।। १९ ।। और श्रीमद्भागवत में भागवतों का भी लक्षण लिखा है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कि ॥ *सर्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः । भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥* भाग० ॥ स्कं० ११ ॥ अ० २ ॥ श्लो० ४५ ॥ *गृहीत्वापीन्द्रियैरर्थान्यो न द्वेष्टि न हृष्यति । विष्णोर्मायामिदं पश्यन्सवै भागवतोत्तमः ॥ ४८ ॥ न काम कर्म बीजानां यस्य चेतसि संभवः । वासुदेवैकनिलयः स वै भागवतोत्तमः ॥ ५० ॥* जो पुरुष संपूर्ण जीवों में अपने बराबर भगवद्भाव को देखता है और संपूर्ण जीवों को श्रीमन्नारायण भगवान् में देखता है वह उत्तम भागवत है ॥ ४५ ॥ और जो पुरुष इन्द्रियों से अर्थों को ग्रहण करके न द्वेष करता है और न तो आनन्द प्राप्त करता है इस समस्त संसार को जो श्रीविष्णु की माया जानता है वह निश्चय करके उत्तम भागवत है ॥ ४८ ॥ और जिसके चित्त में काम कर्म के बीज नहीं उत्पन्न होते हैं और जो केवल वासुदेव के भक्त हैं उनको निश्चय करके उत्तम भागवत कहते हैं ॥ ५० ॥ ऐसे भागवत श्रीवैष्णवों करके (अवलोक्यतां) दृष्टिगोचर कीजिये और (मां) मुझे (नय) प्राप्त कराइये (यद्विरहः) कि जिन महाभागवतों के विरह (क्षणे) क्षण मात्र (ते) आपके (अपि) भी (अति दुःसहः) अत्यन्त दुःसह है, अर्थात् क्षणमात्र भी आप जिन महात्माओं के वियोग को सहन नहीं कर सकते हैं, क्योंकि भगवद्गीता में आप कहे हैं कि ॥ *प्रियोहि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥* गी० ॥ अ० ७ ॥ श्लो० १७ ॥ भक्ति युक्त ज्ञानवालों को अत्यन्त मैं प्रिय हूँ और वे मुझे अति प्रिय हैं ॥ १७ ॥ और भी लिखा है कि ॥ *तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥* गी० ॥ अ० ६ ॥ श्लो० ३० ॥ मैं उस भक्त के नेत्र से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अलग नहीं रहता हूँ और वह भक्त भी मेरे नेत्र से अलग नहीं होता है ॥ ३० ॥ इससे यह सिद्ध हो गया कि भगवान् और भागवत का वियोग नहीं होता है ॥ ५९ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि श्रीमन्नारायण भगवन्! आपके दास्यभाव के वैभव रूप साम्राज्य से रहित बहिर्भूत जो कुछ भी है उसकी इच्छा मैं नहीं करता हूँ ।

६ ५ ८ ७ १२ ९ ११ १० १४
न देहं न प्राणान्न च सुखमशेषाभिलषितं न
१५ १३ २१ १६ १७ १८ २ ३
चात्मानं नान्यत्किमपि तव शेषत्वविभवात् ।
४ १ १९ २० २२ २५ २३
बहिर्भूतं नाथ क्षणमपि सहे यातु शतधा
२४ २७ ३० २६ २९ २८
विनाशं तत्सत्यं मधुमथन विज्ञापनमिदम् ॥ ६० ॥

अर्थ—हे (नाथ) ऐ अण्डज पिण्डज ऊष्मज स्थावर जीवों के स्वामिन्! भगवन्! (तव) आपके (शेषत्व विभवात्) शेषत्वरूप विभव से अर्थात् आपके दास्यभाव के वैभवरूप साम्राज्य से (बहिर्भूतं) बाहर हुए (देहं) शरीर को (न) नहीं सहन कर सकता हूँ। यह देह कैसा है यह श्रीमद्भागवत में लिखा है कि ॥ *एकायनोऽसौ द्विफलस्त्रिमूलश्चतूरसः पञ्चविधः*

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षडात्मा । सप्तत्वगष्टविटपो नवाक्षो दशच्छदी द्विखगोह्यादिवृक्षः ॥ भाग० । स्कं० १० । पूर्वार्ध० अ० २ ॥ श्लो० २७ ॥ यह देह रूप जो आदिवृक्ष है इसका एक मूल प्रकृति आश्रय है और सुख दुःख ये दो फल हैं और सत्वगुण रजोगुण तमोगुण ये तीन गुण मूल हैं और धर्म अर्थ मोक्ष काम ये चार रस हैं और त्वक् काँन आँख नाँक जीभ ये पाँच ज्ञानेन्द्रिय पाँच प्रकार के हैं और अस्ति वर्धते विपरिणमति अपक्षीयते नश्यति ये छः स्वभाव हैं अथवा भूख प्यास शोक मोह जरा मृत्यु ये छः स्वभाव हैं अथवा त्वक् माँस शोणित अस्थि स्नायु मज्जा ये छः वस्तु से बना हुआ है और रस असृक मांस मेदा अस्थि मज्जा शुक्र ये सात त्वचा हैं और पृथ्वी जल अग्नि पवन आकाश मन बुद्धि अहंकार ये आठ शाखा विस्तार हैं और दो कान के दो आंख के दो नाक के एक मुख के एक लिङ्ग के एक गुदामार्ग के ये नवछिद्र हैं और प्राण अपान व्यान समान उदान नाग कूर्म कृकल देवदत्त धनंजय ये दश पत्र हैं और जीवात्मा परमात्मा ये दो पक्षी हैं ॥ २७ ॥ ऐसा जो देह है इसको नहीं मैं सहन कर सकता हूँ और (प्राणान्) हृदय आदिक स्थानों में रहनेवाले प्राण आदिक पवनों को प्राण आदिक वायु के स्थान योग चूडामण्युपनिषद् में लिखा है कि ॥ हृदि प्राणःस्थितोनित्यमपानो गुदमण्डले स मानो नाभि देशेतु उदानः कण्ठमध्यगः व्यानः सर्व शरीरे तु प्रधानाः पञ्च वायवः । योग चू० मं० २४ ॥ उद्गारे नाग आख्यातः कूर्म उन्मीलने तथा कृकरः क्षुत्करो ज्ञेयो देवदत्तोविजृम्भणे ॥ २५ ॥ न जहाति मृतंवापि सर्वव्यापी धनञ्जयः ॥ २६ ॥ हृदय में प्राण वायु और गुदामार्ग में अपान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वायु नाभि देश में समान और कण्ठ के मध्य में उदान वायु और व्यान वायु सब शरीर में रहता है इस प्रकार से पाँच वायु प्रधान हैं ॥ २४ ॥ उद्वमन नाग वायु का कर्म है सोना जागना यह कूर्म वायु का कर्म है छींकना कृकर वायु का कर्म है और जंभाना देवदत्त वायु का कर्म है ॥ २५ ॥ और धनञ्जय वायु समस्त शरीर में व्याप्त रहता है मरे शरीर को भी चार घड़ी पर्यन्त यह नहीं छोड़ता है ॥ २६ ॥ इन प्राणादिक पवनों को (न) नहीं सह सकता हूँ (च) और (अशेषाभिलषितं) संपूर्ण मनोभिलषित (सुखं) सुखको (न) नहीं मैं सह सकता हूँ। जीव लोक के छः सुख हैं यह लिखा है कि ॥ *अर्थागमोनित्यमरोगिता च प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च वश्यश्चपुत्रोऽर्थकरी च विद्या षड्जीवलोकस्य सुखानि राजन्* ॥ हे राजन्! नित्य अर्थ का आगम होना और सदा निरोग रहना तथा प्रिय वाक्य बोलने वाली स्त्री और वश में रहनेवाला पुत्र और अर्थकरी विद्या ये छः जीव लोकके सुख हैं ॥ इन संपूर्ण सुखोंको मैं नहीं सहन कर सकता हूँ और (आत्मानं) सबसे प्रिय है जो आत्मा उसको भी (न) मैं नहीं सह सकता हूं। आत्मा सबसे प्रिय है इससे आत्मा के लिये ही सब प्रिय होता है। यह बृहदारण्यकोपनिषद् के चौथे अध्याय के चौथे ब्राह्मण के पांचवें मन्त्र में लिखा है कि, याज्ञवल्क्य ऋषि ने अपनी स्त्री मैत्रेयी से कहा कि अरे मैत्रेयी! पति के काम के लिये पति प्रिय नहीं होता है बल्कि अपने प्रिय के लिये पति प्रिय होता है, तथा अरे मैत्रेयी! जाया के काम के लिये जाया प्रिय नहीं होती है बल्कि अपने काम के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिये जाया प्रिय होती है -और अरे मैत्रेयी ! पुत्रों के काम के लिये पुत्र प्रिय नहीं होते हैं बल्कि अपने काम के लिये पुत्र प्रिय होते हैं, तथा वित्त के काम के लिये वित्त प्रिय नहीं होता है बल्कि अपने काम के लिये वित्त प्रिय होता है, और अरे मैत्रेयी ! ब्राह्मण के काम के लिये ब्राह्मण प्रिय नहीं होता है बल्कि अपने काम के लिये ब्राह्मण प्रिय होता है तथा अरे मैत्रेयी ! क्षत्रिय के काम लिये क्षत्रिय प्रिय नहीं होता है अपने काम के लिये क्षत्रिय प्रिय होता है, और अरे मैत्रेयी ! लोकों के काम के लिये लोक प्रिय नहीं होते हैं बल्कि अपने काम के लिये सब लोकप्रिय होते हैं, तथा अरे मैत्रेयी ! देवों के काम लिये देवता सब प्रिय नहीं होते हैं बल्कि अपने काम के लिये देवता सब प्रिय होते हैं, तथा अरे मैत्रेयी ! भूतों के लिये भूत सब प्रिय नहीं होते हैं बल्कि अपने काम के लिये भूत सब प्रिय होते हैं, और अरे मैत्रेयी ! सबके काम के लिये सब प्रिय नहीं होते हैं बल्कि अपने काम के लिये सब कोई प्रिय होता है, इससे अरे मैत्रेयी ! अपने आत्मा को देखना सुनना मनन और निदिध्यासन करना चाहिये ॥ ५ ॥ इससे यह सिद्ध होता है कि आत्मा सबसे प्रिय है उस आत्मा को भी मैं नहीं सहन कर सकता हूं (च) और (अन्यत्) पूर्वोक्ति से भिन्न दूसरा (किमपि) कुछ भी राज्य विभव आदिको भी (क्षण) क्षणमात्र (अपि) भी (न) नहीं (सहे) मैं सहन कर सकता हूँ (शतधा) पूर्वोक्त सौ प्रकार से (विनाशं) विनाश को (यातु) प्राप्त करे, अर्थात् हे भगवन् ! जिस समय में आपके चरणारविन्दों में मेरा प्रेम न रहे मैं तथा ये सभी वस्तुएँ यदि आपके उत्कर्ष न बढ़ावें तो ये सभी चीजें तथा उसी समय में मैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी सौ खण्ड हो जाऊं (मधुमथन !) हे मधु नामक राक्षस तथा दुष्टों को मथन करनेवाले श्रीमन्नारायण भगवन् ! (तत्) प्रसिद्ध (इदं) यह (विज्ञापनं) मेरा विज्ञापन (सत्यं) सच्चा है मृषा नहीं है । इस श्लोक में श्रीपूज्यपाद ने यह भी उपदेश दिया है कि मुमुक्षुओं को विषय भोग का परित्याग करना चाहिये । यह श्रीवचन भूषण में भी लिखा है कि ॥ *प्रतिकूल विषयस्पर्शो विषस्पर्शवत् अनुकूल विषयस्पर्शो विषमिश्रान्न भोजनवत्* ॥ श्रीव० सू० १९९ ॥ *अग्निज्वालां निगीर्य पिपासां शमयितुमिच्छेव नृत्यतः सर्पस्य छायायां स्थातुमिच्छेन्न च विषय प्रावण्येन सुखितुमिच्छा* ॥ २०० ॥ प्यासा हुआ जैसे अग्नि की ज्वाला को निगल कर प्यास को शान्त करने की इच्छा करता है और चलते हुए साँप के फण की छाया में स्थिति की इच्छा के समान विषय भोग करके सुख को चाहनेवाला है ॥ २०० ॥ श्रुति स्मृति निषिद्ध विषय स्पर्श विष के भोग के तुल्य हैं और विहित विषय स्पर्श विष मिला हुआ अन्न भोजन करने के तुल्य हैं ॥ १९९ ॥ और मनुस्मृति में भी लिखा है कि ॥ *न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते* ॥ मनु० ॥ अ० २ ॥ श्लो० ९४ ॥ विषयी पुरुषों की इच्छा विषयों के भोगने से कभी भी नहीं शान्त होती है हविष्य के डालने से अग्नि के समान पुनः अधिक बढ़ती है ॥ ९४ ॥ इससे यह सिद्ध होता है कि जितना ही विषय भोग किया जाता है उतना ही विषय की इच्छा बढ़ती जाती है इससे मुमुक्षु को विषय का परित्याग करना चाहिये ॥ ६० ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! मैं सम्पूर्ण पापों का स्थान हूं तो भी आपके वात्सल्य सौशील्य सौलभ्य आदिक गुणों के गणों का स्मरण करके संसार सागर से कुछ भी मुझको भय नहीं हैं।

४ ५ ६ ७ १
दुरन्तस्यानादेरपरिहरणीयस्य महतो विहीना-
३ २ ८ ९ १० ११
चारोहंनृपशुरशुभस्यास्पदमपि । दयासिन्धो-
१२ १३ १४ १६
बन्धो निरवधिकवात्सल्यजलधे तव स्मारं
१५ १८ १९ १७
स्मारं गुणगणमितीच्छामि गतभीः ॥ ६१ ॥

अर्थ—(विहीनाचारः) अत्यन्त नीच आचरणवाला (नृपशुः) दया व्रत कर्म उपासना ज्ञान भक्ति से रहित मनुष्य रूपवाला पशु (अहं) अकिञ्चन अनन्य गतिक मैं (दुरन्तस्य) अर्थात् जिसका कुछ अन्त नही तथा (अनादेः) अनादि अर्थात् जिसका कुछ आदि नहीं ऐसा (अपरिहरणीयस्य) मेरे यत्न से कभी भी नहीं दूर हटनेवाला (महतः) बड़ा भारी अधिक (अशुभस्य) अमङ्गल या पाप के (आस्पदं) स्थानभूत (अपि) भी मैं हूं तो भी (दयासिन्धो !) हे दया के समुद्र ! (वन्धो) हे दीनबन्धो ! (निरवधिक वात्सल्य जलधे) हे अवधि रहित वात्सल्य गुण के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समुद्र ! अर्थात् गौ के समान बिना कहे हुए अपने बच्चों के मल मूत्र रूप पाप को कृपा कटाक्ष से देखकर दूर करने वाले श्रीमन्नारायण भगवन् ! (तव) आपके (गुणगणं) वात्सल्य सौशील्य सौलभ्य औदार्य सत्यकाम सत्यसंकल्प आदिक कल्याण गुणों के समूह को (स्मारं स्मारं) स्मरण करके (गतभीः) बिना भय के निर्भय मैं (इति) इस प्रकार से आपके दास्यभाव के वैभवरूप साम्राज्य की (इच्छामि) इच्छा करता हूँ ॥ ६२ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे धरणीधर भगवन् ! आप ही निर्हेतुक दया करके मेरे मन को शिक्षा दीजिये यह मैं विज्ञापन करता हूँ ।

३ ४ २ ५ ६ ७ ८ ९ १०
अनिच्छन्नप्येवं यदि पुनरपीच्छन्निव रजस्तम-
११ १२
श्छन्नच्छद्मस्तुतिवचनभङ्गीमरचयम् । तथा-
१३ १४ १५ १६ १७ १९ १८ २० २१
पीत्थं रूपं वचनमवलम्ब्यापि कृपया त्वमेवैवं
१ २२ २४ २३
भूतं धरणिधर मे शिक्षय मनः ॥ ६२ ॥

अर्थ—हे (धरणिधर) ऐ पृथिवी को धारण करनेवाले श्रीवराह भगवान् ! धरणिधर श्रीमन्नारायण का नाम है । यह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाभारत में लिखा है कि जिस समय में हिरण्याक्ष दैत्य ने पृथिवी को जलार्णव में मग्न कर दिया उस समय श्रीमन्नारायण भगवान् ने श्रीवराहावतार धारण करके संग्राम में हिरण्याक्ष को मार कर अपने दांत के ऊपर पृथिवी को धारण किया, इससे धरणिधर नाम श्रीमन्नारायण भगवान् का पड़ा है। यह पाण्डव गीता में भी लिखा है कि ॥ *जलौघमग्ना सचराचराधराविषाण-कोट्याखिलविश्वमूर्तिना। समुद्धृता येन वराहरूपिणा स मे स्वयं-भूर्भगवान् प्रसीदताम्* ॥ पाण्ड० गी० श्लो० ६ ॥ हिरण्याक्ष दैत्य करके जलों के समूह महार्णव में चर अचर के साथ मग्न की हुई पृथिवी को जिसने श्रीवाराह रूप धारण करके समुद्धरण किया वह अपने आप उत्पन्न होनेवाले श्रीमन्नारायण भगवान् हम सबों के ऊपर प्रसन्न होवें ॥ ६ ॥ और शतपथ ब्राह्मण में भी लिखा है कि ॥ *वराह उज्जघानसोऽस्यापतिः* ॥ श्रीवराह भगवान् पृथिवी को ऊपर लीला से उठाये वही श्रीवराहजी इस पृथिवी के पति हैं ॥ तो हे चराचरपते धरणिधर! (एवं) इस प्रकार आपके दास्य भाव के वैभवरूप साम्राज्य की (अनिच्छन्) इच्छा न करता हुआ (अपि) भी (यदि (पुनः) फिर (अपि) भी आपके दास्य भाव के वैभवरूप साम्राज्य की (इच्छन्) इच्छा करते हुए के (इव) समान (रसस्तमश्च्छन्नच्छद्म स्तुति वचन भङ्गीम्) रजोगुण तथा तमोगुण से ढके हुए स्वरूप से जो मैंने कपट करके स्तुति वाक्यों की पंक्ति की (अरचयम्) रचना की अर्थात् आलवन्दार स्तोत्र को बनाया (तथा) तो (अपि) भी (इत्थं) इस प्रकार कपट युक्त (रूपं) रूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(वचनं) वाक्यों को (अवलम्ब्य) ग्रहण करके (अपि) भी (त्वं) आप (कृपया) अपनी निर्हेतुक कृपा से (एव) निश्चय करके (एवंभूतं) कपट युक्त (मे) मेरे (मनः) संकल्प विकल्पात्मक चञ्चल मन को (शिक्षय) शिक्षा दीजिये क्योंकि लिखा है कि ॥ *मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः* ॥ मन ही मनुष्यों के बन्धन या मोक्ष का कारण है ॥ इससे हे भगवन्! रजोगुण तमोगुण निकाल करके मेरे मन को केवल सत्वगुण युक्त कीजिये यही मेरी अरज है ॥ ६२ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! मेरे मां बाप आदिक संपूर्ण परिवार आप ही हैं और अनन्योपायवाला मैं आप पर ही न्यस्तभर हूँ इससे मेरी रक्षा कीजिये ।

३ २ ५ ४ ७ ६ १०
पिता त्वं माता त्वं दयिततनयस्त्वं प्रिय
८ ९ ११ १२ १३ १४ १६ १५ १७ १
सुहृत्त्वमेव त्वं मित्रं गुरुरपि गतिश्चासि जग-
१८ १९ २० २१ २२
ताम् । त्वदीयस्त्वद्भृत्यस्तव परिजनस्त्वद्-
२४ २५ २३ २७ २८ ३० २९ ३१ ३२ ३४ २६
गतिरहं प्रपन्नश्चैवं सत्यहमपि तवैवास्मि हि
३३
भरः ॥ ६३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे श्रीमन्नारायण भगवन् ! (जगतां) अतल वितल सुतल तलातल रसातल महीतल पाताल तथा भूर्लोक भुवर्लोक स्वर्लोक महर्लोक जनलोक तपलोक सत्यलोक इन सम्पूर्ण भुवनों के (त्वं) आप (पिता) रक्षक पिता हैं । यह भगवद्गीता में भी लिखा है कि ॥ *पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्* ॥ भा० ॥ गी० ॥ अ० ॥ ११ ॥ श्लो० ४३ ॥ इस सम्पूर्ण चर अचर संसार के उत्पन्न करनेवाले रक्षक पिता आप ही हैं और पूज्य भी आप ही हैं तथा अत्यन्त श्रेष्ठतत्वों के उपदेश देनेवाले–गुरु आप ही हैं ॥ ४३ ॥ और (त्वं) आप सब संसार के (माता) माता हैं । यह पाण्डव गीता में स्पष्ट लिखा है कि ॥ *त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव । त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव* ॥ पां० गी० श्लो० २८ ॥ आप ही माता पिता और बन्धु हैं तथा सखा हैं और आप ही विद्या हैं तथा धन हैं और हे ब्रह्मादिक देवों के देव ! आप ही मेरे सब कुछ हैं ॥ २८ ॥ और (त्वं) आप (दयित तनयः) नरक से उद्धार करनेवाले प्रिय पुत्र हैं तथा (त्वं) आप (एव) ही निश्चय करके (प्रिय सुहृत्) प्रत्युकार की अपेक्षा न करते हुए स्वयं हितैषी उपकार करनेवाले प्रिय सुहृत् हैं तथा (त्वं) आप (मित्रं) स्नेह करनेवाले मित्र हैं तथा आप (गुरुः) सम्पूर्ण संसार के अविद्यारूप अन्धकार को दूर कर प्रकाश करनेवाले तथा तत्वों के उपदेश देनेवाले गुरु (अपि) भी हैं (च) और समस्त भुवनों के (गतिः) प्राप्त करने योग्य तथा प्रापक (असि) आप ही हैं इसलिये मैं (त्वदीयः) आपका अंश हूँ विशेषण शरीर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हूँ क्योंकि वेदान्त सूत्र में श्रीवेदव्यासजी ने कहा है कि ॥ अंशो नानाव्यपदेशात् ॥ नाना व्यपदेश होने से जीव ईश्वर का अंश विशेषण है ॥ और (त्वद्भृत्यः) आपके सेवक पोषण करने योग्य हूँ और (तव) आपका (परिजनः) मैं दास हूँ, क्योंकि उपनिषद् कहती है कि जीव ब्रह्म का दास है और (त्वद्गतिः) मेरी केवल आप ही गति हैं (च) और (अहं) मैं (प्रपन्नः) शरण में आया हुआ प्रपन्न हूँ (हि) निश्चय करके (एवं) इस प्रकार से (सति) रहने पर (अपि) भी (अहं) मैं (तव) आपका (एव) ही के (भरः) भाररूप (अस्मि) हूँ इससे हे भगवन्! पिता के तुल्य आप ही मेरे प्राप्य और प्रापक हैं रक्षा कीजिये ॥ ६३ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! ब्रह्मर्षि योगिराज नारायण परायण अगाध भगवद्भक्ति सागर श्रीनाथाचार्य स्वामीजी के पवित्र कुल में उत्पन्न होकर भी मैं अज्ञानरूपी अन्धकार में डूब रहा हूँ इससे मेरी रक्षा कीजिये ।

१२ १५ ११ १० २ ३
जनित्वाहं वंशे महति जगति ख्यातयशसां

४ ५ ६
शुचीनां युक्तानां गुणपुरुषतत्त्वस्थितिविदाम् ।

७ ८ ९ १३
निसर्गादेव त्वच्चरणकमलैकान्तमनसामधोधः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४ १ १७ १६
पापात्मा शरणद निमज्जामि तमसि ॥ ६४ ॥

अर्थ—हे (शरणद) हे प्रह्लाद विभीषण गजेन्द्र द्रौपदी अहल्या ध्रुव गृध्रराज शबरी अजामिल गणिका आदि को शरण देनेवाले श्रीमन्नारायण भगवन् ! (जगति) आने जानेवाले लोक में (ख्यात यशसां) प्रसिद्ध या प्रशस्त है कीर्ति जिनकी (शुचीनां) तथा अत्यन्त पवित्र निर्मल है अन्तःकरण और बाह्य जिनका और (युक्तानां) मन्त्रयोग लययोग हठयोग राजयोग में मन युक्त हो गया जिन का। वैदिक योग चार प्रकार का होता है। यह योगतत्त्वोपनिषद् में लिखा है कि ॥ *योगोहि बहुधा ब्रह्मन्भिद्यतेव्यवहारतः । मन्त्रयोगो लयश्चैव हठोऽसौ राजयोगतः ॥* योगतत्त्वो० ॥ मं० १६ ॥ हे ब्रह्मन् ! मन्त्रयोग लययोग हठयोग राजयोग इस भेद से योग चार प्रकार का है ॥ १६ ॥ मन्त्रयोग को वहाँ ही लिखा है कि ॥ *मातृकादि युतं मन्त्रं द्वादशाब्दं तु यो जपेत् । क्रमेण लभते ज्ञानमणिमादिगुणान्वितम् ॥* योगतत्त्वो० ॥ मं० २१ ॥ मातृका आदिक से युक्त मूलमन्त्र या द्वयमन्त्र या चरममन्त्र को जो बारह वर्ष जपता है वह अणिमा आदि गुणों से युक्त ज्ञान को पाता है ॥ २१ ॥ जप की विधि ग्रन्थ के विस्तार के भय से मैं नहीं लिखता हूँ जिनको देखना हो वह मेरे बनाये हुए "यतीन्द्रधर्म मार्तण्ड" नामक ग्रन्थ को देख लेवें । और लययोग भी लिखा है कि ॥ *लययोगश्चित्तलयः कोटिशः परिकीर्तितः । गच्छंस्तिष्ठन्स्वपन्भुञ्जन्ध्यायेन्निष्कलमीश्वरम् ॥* योगत० ॥ मं०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२३ ॥ प्राणायाम आदि कर्म के विना ही वैष्णवी मुद्रा के अभ्यास से आत्मा में चित्त को विलय करना लययोग है वह करोड़ों तरह का कहा गया है; चलते ठहरते सोते खाते हुए सर्वदा निष्कल परमात्मा का ध्यान करे ॥ २३ ॥ और हठयोग भी योगशिखोपनिषद् में लिखा है कि ॥ *हकारेणतु सूर्यःस्याट्टकारेणेन्दुरुच्यते । सूर्याचन्द्रमसोरैक्यं हठ इत्यभिधीयते* ॥ योगशि० ॥ मं० १३३ ॥ हकार से दाहिना स्वर कहा जाता है और ठकार से बायां स्वर कहा जाता है, इन दोनों सूर्य और चन्द्र स्वर के एकता को हठयोग कहते हैं ॥ १३३ ॥ और राजयोग भी योगशिखोपनिषद् में लिखा है कि ॥ *योऽपानप्राणयोरैक्यं स्वरजोरेतसोस्तथा । सूर्याचन्द्रमसोर्योगो जीवात्म परमात्मनोः* ॥ योगशि० ॥ म० ६८ ॥ *एवं तु द्वन्द्व जालस्य संयोगो योग उच्यते* ॥ ६९ ॥ प्राणवायु अपान वायु की एकता तथा अपना रज और रेतस् तथा सूर्यस्वर और चन्द्रस्वर तथा जीवात्मा और परमात्मा इन सबों के संयोग को राजयोग कहते हैं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ और श्रीमद्भगवद्गीता में भी राजयोग को कहा है कि ॥ *समत्वं योग उच्यते* ॥ गी० ॥ अ० २ ॥ श्लो० ४८ ॥ समता को राजयोग कहते हैं ॥ ४८ ॥ और पातञ्जल योगसूत्र में भी लिखा है कि ॥ *योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः* ॥ योगद० ॥ अ० १ ॥ पा० १ ॥ सू० २ ॥ चित्त की वृत्तियों को रोकने का नाम राजयोग है ॥ २ ॥ इन सम्पूर्ण योग मार्ग में जो प्रवृत्त हैं, और (गुण पुरुष तत्त्वस्थितिविदां) सत्वगुण रजोगुण तमोगुण इन तीन गुणों के तथा नित्यजीव बद्धजीव मुक्तजीव मुमुक्षुजीव और कैवल्यजीव इन पाँच प्रकार के जीवात्मा के और परब्रह्म व्यूहब्रह्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विभवब्रह्म अन्तर्यामिब्रह्म अर्चावतारब्रह्म इन पाँच प्रकार के परमात्मा के तथा मूल प्रकृति महत्तत्व मन बुद्धि अहङ्कार इन पाँचो के और शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध इन पाँच तन्मात्राओं के तथा पृथिवी जल तेज वायु आकाश इन पाँच महाभूतों के और आँख कान नाँक त्वक् जिह्वा इन पाँच ज्ञानेन्द्रियों के तथा हाथ पैर गुदा उपस्थ वाक् इन पाँच कर्मेन्द्रियों के स्वरूप को जानने वाले और (निसर्गात्) स्वभाविक (एव) ही (त्वच्चरणकमलै-कान्तमनसां) आपके चरणारविन्द में केवल लग गया है मन जिन लोगों का ऐसे श्रीनाथाचार्य स्वामीजी प्रभृति के (महति) अति श्रेष्ठ महान् (वंशे) वंश में (जनित्वा) जन्म लेकर भी (अधोधः) नीच से भी अति नीच (पापात्मा) पाप कर्म परायण पापी (अहं) मैं (तमसि) अज्ञानरूपी अन्धकार में (निमज्जामि) डूब रहा हूँ इससे हे भगवन् ! निर्हेतुक कृपाकटाक्ष करके आप मेरी रक्षा कीजिये ॥ ६४ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन् ! समस्त दोषों का स्थान भूत अत्यन्त पापी वञ्चक मैं अथाह दुःखरूपी संसार सागर से पार होकर कैसे आपके चरणारविन्दों की सेवा करूँगा ।

१ २ ३ ४ ५
अमर्यादः क्षुद्रश्चलमतिरसूयाप्रसवभूः कृतघ्नो
६ ७ ८ ९ १०
दुर्मानी स्मरपरवशो वञ्चनपरः। नृशंसः पापिष्ठः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२ ११ १३ १५ १४ १६ १७
कथमहमितो दुःखजलधेरपारादुत्तीर्णस्तव
१९ १८
परिचरेयं चरणयोः ॥ ६५ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण भगवन्! (अमर्यादः) मर्यादा से रहित (क्षुद्रः) अत्यन्त तुच्छ (चलमतिः) चञ्चल मतिवाला (असूयाप्रसवभूः) गुणों में दोष आरोपण के उत्पत्ति का स्थान तथा (कृतघ्नः) किये हुए उपकार को नहीं जाननेवाला (दुर्मानी) बड़ा भारी अहंकारी (स्मरपरवशः) कामदेवरूपी शत्रु के वश (वञ्चनपरः) दूसरे को ठगने में अत्यन्त रत (नृशंसः) अत्यन्त क्रूर, मनुष्यों को दुःख देनेंवाला (पापिष्ठः) अत्यन्त पापकर्म करनेवाला (अहं) मैं (कथं) किस प्रकार (इतः) इस संसार के (अपारात्) अपार अथाह (दुःख जलधेः) जन्म मरण वृद्धापन रोग शोक परिताप बन्धन आदिक दुःख के समुद्र से (उत्तीर्णः) उतर कर अर्थात् पार होकर (तव) आपके (चरणयोः) दोनों चरणारविन्दों की (परिचरेयम्) सेवारूप परिचर्या करूँगा ॥ ६५ ॥

अब श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी यह कहते हैं कि हे भगवन्! आपकी वल्लभा जगज्जननी श्रीसीताजी के साथ चित्रकूट पर्वत पर अत्यन्त अपराध करने वाले इन्द्र के पुत्र जयन्त नाम काक के ऊपर आपने दया की, जिस अपराध को वाल्मीकि रामायण के सुन्दर काण्ड के अड़तीसवें सर्ग में स्वयं श्रीसीताजी हनुमान् से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कही हैं कि ॥ ततो मांससमायुक्तो वायसः पर्य्यतुण्डयत् । तमहं लोष्टमुद्यम्य वारयामिस्म वायसम् ॥ वाल्मी० । रा० । सु० । स० ३८ । श्लो० १५ ॥ दारयन् स च मां काकस्तत्रैव परिलीयते । न चाप्युपारमन्मांसाद्भक्षार्थी वलिभोजनः ॥ १६ ॥ उत्कर्षन्त्यां च रशनां क्रुद्धायां मयि पक्षिणे । संसमाने च वसने ततो दृष्टा त्वयाह्यहम् ॥ १७ ॥ त्वया विहसिता चाहं क्रुद्धा संलज्जिता तदा । भक्ष्य गृद्धेन काकेन दारिता त्वामुपागता ॥ १८ ॥ ततः श्रान्ताहमुत्सङ्गमासीनस्य तवाविशम् । क्रुध्यन्तीव प्रहृष्टेन त्वयाहं परिसान्त्विता ॥ १९ ॥ वाष्पपूर्ण मुखी मन्दं चक्षुषो परिमार्जती । लक्षिताहं त्वया नाथ वायसेन प्रकोपिता ॥ २० ॥ परिश्रमाच्च सुप्ताहे राघवाङ्केऽस्म्यहं चिरम् । पर्यायेण प्रसुप्तश्च ममाङ्के भरताग्रजः ॥ २१ ॥ स तत्र पुनरेवाथ वायसः समुपागमत् । ततः सुप्त प्रवुद्धां मां राघवाङ्कात्समुत्थिताम् । वायसः सहस्यागस्य विररादस्तनान्तरे ॥ २२ ॥ पुनः पुनरथोत्पत्य विरराद समाभृशम् । ततः समुत्थितो रामो मुक्तैः शोणित बिन्दुभिः ॥ २३ ॥ स मां दृष्ट्वा महावाहुर्वितुन्नां स्तनयोस्तदा । आशीविष इव क्रुद्धः श्वसन्वाक्यमभाषत ॥ २४ ॥ केनतेनागनासोरु विक्षतं वैस्तनान्तरं । कः क्रीड़ति सरोषेण पञ्चवक्त्रेण भोगिना ॥ २५ ॥ वीक्षमाणस्ततस्तं वै वायसं समवैक्षत । नखैः सरुधिरैस्तीक्ष्णैर्मामेवाभि मुखं स्थितम् ॥ २६ ॥ पुत्रः किलस शक्रस्य वायसः पततां वरः । धरान्तरं गतः शीघ्रं पवनस्य गतौसमः ॥ २७ ॥ ततस्तस्मिन्महावाहुः कोप संवर्तितेक्षणः । वायसे कतचान्क्रूरां मतिं मतिमतांवरः ॥ २८ ॥ सदर्भ संस्तराद् गृह्य ब्रह्मणोऽस्त्रेण योजयत् । सदीप्त इव कालाग्निर्जज्वालाभिमुखो द्विजम् ॥ २९ ॥ सतं प्रदीप्तं चिक्षेप दर्भ तं वायसं प्रति । ततस्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वायसं दर्भः सोऽम्बरेनु जगामह ॥ ३० ॥ अनुसृष्टस्तदा काको जगाम विविधां गतिम् । त्राण काल इमं लोकं सर्वं वैविचचारह ॥ ३१ ॥ सपित्राच परित्यक्तः सर्वैश्च परमर्षिभिः । त्रींल्लोकान्संपरिक्रम्य तमेव शरणं गतः ॥ ३२ ॥ सतं निपतितं भूमौ शरण्यः शरणागतम् । वधार्हमपि काकुत्स्थः कृपया पर्यपालयत् ॥ ३३ ॥ परिद्यूनं विवर्णं च पतमानं तमब्रवीत् । मोघमस्त्रं न शक्यं तु ब्राह्मं कर्तुं तदुच्यताम् ॥ ३४ ॥ ततस्तस्याक्षि काकस्य हिनस्तिस्म स दक्षिणम् । दत्वा तु दक्षिणं नेत्रं प्राणेभ्यः परिरक्षितः ॥ ३५ ॥ हमारे स्तन में बारंबार आकर बड़े जोर से जयन्त काक ने मारा तो उस रुधिर से जाग कर श्रीरामचन्द्रजीने क्रोध करके ब्रह्मास्त्र से नियोजित करके अपने आसन के एक कुशा को काक के ऊपर मारा । तब वह काक तीनों लोकों में घूमा, कोई भी उसकी रक्षा न कर सका तो फिर वह श्रीरामचन्द्रजी के शरण में आया । यद्यपि वह काक बध के योग्य था परन्तु शरण में आ जाने से केवल ब्रह्मास्त्र को अमोघ करने के लिये एक नेत्र से हीन करके जयन्त को प्राण दान दे दिये ॥ ३५ ॥ इन श्लोकों से यह ज्ञात होता है कि महा अपराधी जयन्त नामक काक के ऊपर श्रीरामावतार में आप दया किये हैं । और जब आप श्रीकृष्णावतार धारण किये थे तो उस समय युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सभा के बीच में शिशुपाल ने कहा था कि बड़े बड़े श्रेष्ठ पुरुषों के रहते हुए वर्ण और आश्रम से रहित अत्यन्त नीच इस अहीर कृष्ण की पूजा करना उचित नहीं है । यह कथा श्रीमद्भागवत के दशवें स्कन्ध उत्तरार्ध के चौहत्तरवें अध्याय में स्पष्ट लिखी हुई है । और कुवाच्य कहनेवाले महा-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपराधी शिशुपाल को आपने सायुज्य मोक्ष दे दिया । यह लिखा है कि ॥ चैद्यदेहोत्थितं ज्योतिर्वासुदेवमुपाविशत् । पश्यतां सर्व भूतानामुल्केवभुविखाच्च्युता ॥ भा० । स्कं० १० । अ० ७४ । श्लो० ४५ ॥ जैसे आकाश से गिरी हुई उल्का पृथिवी में लीन हो जाती है वैसे ही संपूर्ण जीवों के देखते ही शिशुपाल के देह से निकली हुई ज्योति श्रीवासुदेव भगवान् में प्रवेश कर गई ॥ ४५ ॥ तो जैसे अत्यन्त अपराधी शिशुपाल आदिक के ऊपर आपने दया किया है वैसे ही अत्यन्त दोषी मेरे ऊपर भी आपको दया करनी ही पड़ेगी ।

१ ७ ० २ ३ ४ ५
रघुवर ! यद्भूस्त्वं तादृशो वायसस्य प्रणत
६ ८ १४ १५ ११ १२ १३
इति दयालुर्यस्य चैद्यस्य कृष्ण । प्रतिभवम-
१० १६ १७ २५ २२ २३ १८ १९
पराद्धुमुग्ध सायुज्यदोभूर्वद किमपदमागस्तस्य
२० २४ २१
तेऽस्ति क्षमायाः ॥ ६६ ॥

अर्थ—हे (रघुवर !) हे रघु के वंश में श्रेष्ठ श्री रामचन्द्र भगवन् ! (त्वं) आप (तादृशः) जगदम्बा श्री सीताजी के साथ बड़ा भारी अपराध करने वाले उस (वायसस्य) जयन्त काक के ऊपर ॥ शरणागतः ॥ वा० ॥ रा० सुं० स० ३८ श्लो० ३२ ॥ मैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
आम्नाय-ग्रन्थालय, भरतमिलाप, नदेसर, वाराणसी-5

आपके शरण में आया हूँ (प्रणतः) अत्यन्त नम्रता पूर्वक (इति) ऐसा कथन मात्र से ही (यत्) क्योंकि (दयालुः) दयालु (अभूः) आप हो गये, अर्थात् महा अपराधी जयन्त काक को प्राण दान आपने दिया और हे (मुग्ध) हे सुन्दर! हे (कृष्ण)! हे भक्तजनों के आर्ति को खींचने वाले श्री कृष्ण भगवन्! (प्रतिभवं) हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु रावण कुंभकर्ण शिशुपाल दन्तवक्र इस रूप से तीन बार जन्म लेकर (अपराद्धः) सभा के बीच में महा अपराध करने वाले (यस्य) जिस (चैद्यस्य) शिशुपाल को (सायुज्यदः) मोक्ष देने वाले (अभूः) आप हो गये, अर्थात् महा अपराधी शिशुपाल को सायुज्य मोक्ष आपने दिया तो (आगः) यह मेरा अपराध (तस्य) उस अत्यन्त दयालु (ते) आपके (क्षमायाः) क्षमा का (किं) क्या (अपदं) स्थान नहीं (अस्ति) है (वद) आप कहिये कि मेरी रक्षा किस कारण से आप नहीं करते हैं। यह मैं जानता हूँ कि महा अपराधी शिशुपाल आदिक के रक्षक आप हैं इससे इस अपराधी के भी रक्षक आप ही होंगे ॥ ६६ ॥

अब स्तोत्ररत्नकर्ता यह कहते हैं कि हे भगवन्! यदि आप यह प्रतिज्ञा किये हैं कि ॥ *सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम ॥* वाल्मी० रा० युद्धकां० स० १८ श्लो० ३३ ॥ एक बार भी मैं आपका दास हूँ जो ऐसी याचना करता है उस प्रपन्नजन के लिये सम्पूर्ण जीवों से मैं अभय प्रदान करता हूँ यह मेरा व्रत है ॥ ३३ ॥ तो ऐसा कहनेवाले मेरी आप उपेक्षा क्यों कर रहे हो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१ ३ ४ ५ २ ६ ७ ८ ९ १०
ननु प्रपन्नस्सकृदेव नाथ ! तवाहमस्मीति च
११ १४ १५ १३ १२
याचमानः । तवानुकम्प्यः स्मरतः प्रतिज्ञां
१६ १८ १७ २० १९
मदेकवर्ज्यं किमिदं व्रतं ते ॥ ६७ ॥

अर्थ—(ननु) निश्चय करके हे (नाथ !) हे अण्डज पिण्डज ऊष्मज स्थावर जीवों के स्वामिन् ! (प्रपन्नः) आपके शरण में आया हुआ दासजन (सकृत्) एक बार (एव) निश्चय करके (तव) आपका (अहं) दास मैं (अस्मि) हूँ (इति च) ऐसी (याचमानः) याचना करने वाला आपकी दया के योग्य है अर्थात् बाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड के अठारहवें सर्ग के तैंतीसवें श्लोक में जो आप ये प्रतिज्ञा की है, कि एक बार भी जो कहता है कि आपका दास हूँ तो मैं उसके ऊपर दया करता हूँ इस अपनी (प्रतिज्ञां) प्रतिज्ञा को (स्मरतः) स्मरण करते हुए, आपका मैं दास हूँ, ऐसी याचना करनेवाला मैं (तव) आपकी (अनुकंप्यः) दया के योग्य हूँ इससे मेरे ऊपर आप दया कीजिये (मदेकवर्ज्यं) एक मुझको छोड़कर (इदं) यह (ते) आपकी (किं) क्या (व्रतं) प्रतिज्ञा है, अर्थात् शरणागत पुरुषों की रक्षा करेंगे यह आपकी प्रतिज्ञा है, तो पुनः मेरी उपेक्षा क्यों कर रहे हो मेरी भी अवश्य ही रक्षा आपको करनी पड़ेगी ॥ ६७ ॥

अब यामुनाचार्य्य स्वामीजी आलवन्दारस्तोत्र के अन्तिम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्लोक में यह कहते हैं कि भगवन् ! मेरे आचरण को विस्मरण करके आपके भक्तों में आगे गिनानेवाले हमारे पितामह श्रीनाथाचार्य स्वामीजी को देख कर मेरे ऊपर आप प्रसन्न हो जाइये ।

१ २
अकृत्रिमत्वच्चरणारविन्दप्रेमप्रकर्षावधिमात्म-

३ ४ ५ ८
वन्तं । पितामहं नाथमुनिं विलोक्य प्रसीद

६ ७
मद्वृत्तमचिन्तयित्वा ॥ ६८ ॥

अर्थ—हे श्रीमन्नारायण भगवन् ! (अकृत्रिमत्वच्चरणारविन्द-प्रेमप्रकर्षावधिं) स्वाभाविक आपके चरणारविन्द में जो प्रेम उस प्रेम के आधिक्य की सीमा भूमि और (आत्मवन्तं) जीवात्मा तथा परमात्मा के स्वरूप को जाननेवाले अत्यन्त ज्ञान वैराग्य युक्त (पितामहं) मेरे पितामह (नाथमुनिं) श्रीनाथ मुनि स्वामी जी को (विलोक्य) विशेष रूपसे देख कर और (मद्वृत्तं) मेरे चरित या आचरण को (अचिन्तयित्वा) विस्मरण करके (प्रसीद) आप प्रसन्न हो जाइये । अति आदर द्योतन करने के लिये स्तोत्ररत्न के पाठ समय में इस श्लोक को दो बार पाठ करना चाहिये ॥ ६८ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब भगवान् श्री भाष्यकार यतिराज फणिराज रामानुजाचार्य स्वामीजी परम कारुणिक एक नारायण परायण श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी को साष्टाङ्ग प्रणाम ग्रन्थ के अन्त में हम सबों के उपदेश के लिये करते हैं।

१
यत्पादाम्भोरुहध्यानविध्वस्ताशेषकल्मषः ।
३ ४ २ ६ ७ ५
वस्तुतामुपयातोहं यामुनेयं नमामितम् ॥६९॥

॥ इति आलवन्दार स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अर्थ—(यत्पादाम्भोरुह ध्यान विध्वस्ताशेष कल्मषः) जिन परमाचार्य श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के युगल चरण कमलों के ध्यान करने से नष्ट हो गये हैं सम्पूर्ण पाप जिसके ऐसा (अहं) मैं (वस्तुतां) अपना उपादेय वस्तु भगवान् श्री मन्नारायण को (उपयातः) प्राप्त कर लिया हूँ (तं) उस (यामुनेयं) श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी महाराज को (नमामि) मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ। यह श्लोक भगवान् श्रीभाष्यकार का बनाया हुआ है यह श्रीपूज्यपाद लोग कहते हैं ॥ ६६ ॥

श्रीवत्सवंश कलशोदधिपूर्णचन्द्रम् ।
श्रीकृष्णसूरि पदपङ्कजभृङ्गराजम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीरङ्गवेङ्कटगुरूत्तमलब्धबोधम् ।
भक्त्या भजामि गुरुवर्य्यमनन्तसूरिम् ॥

इति श्रीमद्वेदमार्ग प्रतिष्ठापनाचार्यवेदान्तप्रवर्तकाचार्य-
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य सत्सम्प्रदायाचार्य
जगद्गुरु भगवदनन्तपादीय श्रीमद्विष्व-
क्सेनाचार्य स्वामिना विरचिता
"भावप्रकाशिका" नाम्नी
आलवन्दारस्तोत्र
भाषा टीका
समाप्ता ।

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
रत्ननिधि, करौंदी
वाराणसी-5

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्र
भरतनिधि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi